SHIVA

AGRICULTURE
SHORT NOTE

प्रक्षेत्र फसल प्रजनन

[BREEDING OF FIELD CROP]

(IV सेमेस्टर)

I. C. A. R. द्वारा निर्देशित पाठ्यक्रमानुसार

शिवा
एग्रीकल्चरल शॉर्ट नोट

बी० एस-सी० (कृषि)

प्रक्षेत्र फसल प्रजनन

(BREEDING OF FIELD CROP)

(चतुर्थ सेमेस्टर के लिए)

नवीनतम् पाठ्यक्रम पर आधारित एवं
अनुभवी लेखकों द्वारा सम्पादित

प्रकाशक :
शिवा बुक एजेन्सीज, आगरा
45/50, नगला अजीता, जगदीशपुरा (आगरा)
Ph. : (0562) 2276295, Mob. 09897965949

SYLLABUS

Course-II

Semester-IV **2 + 1 = 3**

BREEDING OF FIELD CROP

1. Origin, distribution and objective.

2. Breeding problems, systematic description and economic importance.

3. Breeding methods adopted and achievements with reference to the following crops :

(a) Cereals—Wheat, Rice and Maize.

(b) Millets—Sorghum and Pennisetum.

(c) Pulses—Gram, Pea and Arhar.

(d) Oilseed—Mustard, Groundnut and Sunflower.

(e) Others—Cotton and Potato.

प्रक्षेत्र फसल प्रजनन

[BREEDING OF FIELD CROP]

B. Sc. (Ag.)—चतुर्थ सेमेस्टर

प्रश्न-सूची

संख्यात्मक/विश्लेषणात्मक/समस्यात्मक प्रश्न **9-25**

प्रश्न 1. पादप प्रजनन का कृषि में महत्त्व बताइये।
Describe the importance of Plant Breeding in Agriculture.

प्रश्न 2. संकर बीज उत्पादन में स्वअनिषेच्यता के उपयोग में समस्याएँ बताइये।
Describe the problems in use of Self-Incompatibility for Hybrid Seed Production.

प्रश्न 3. बहुवंशक्रम प्रभेद को समझाइये।
Explain the Multiline Varieties.

प्रश्न 4. फसल उन्नयन में पादप प्रजनन की विधियों के महत्त्व की संक्षिप्त विवेचना करे।
Briefly explain the importance of plant breeding methods in crop improvements. (CSJM, 2011)

प्रश्न 5. शुद्ध वंशक्रम चयन क्या है ? स्वनिषेचित फसलों में चित्र की सहायता से व्याख्या कीजिए।
What is pureline selection ? Explain it with the help of diagram in self pollinated crops.

प्रश्न 6. लघुबीजाणु जनन तथा गुरुबीजाणु जनन को समझाइये।
Describe the Microsporogenesis and Megasporogenesis.

प्रश्न 7. पादप प्रजनन की उपलब्धियों को समझाइये।
Describe the achievements of Plant Breeding.

प्रश्न 8. परागण की पद्धति को समझाइये।
Describe the Mode of Pollination.

प्रश्न 9. जीनों में अन्योन्यक्रकरण को समझाइये।
Describe the Gene Interaction.

प्रश्न 10. वंशागतित्व को समझाइये।
Explain the Heritability.

प्रश्न 11. आनुवंशिकीय विविधता को समझाइये।
Explain the Genetical Variations.

लघु उत्तरीय प्रश्न 25-59

प्रश्न 1. एकल संकरण परीक्षण क्या है ?
What is Single Cross Test ?

प्रश्न 2. मक्का में भुट्टे से पंक्ति चयन का चित्र द्वारा वर्णन कीजिए।
Describe the ear-to-row selection in maize with the help of diagram. (CSJM, 2016)

प्रश्न 3. प्रतीप संकरण विधि के गुण–दोषों का वर्णन कीजिए।
Explain the merits and demerits of Back Cross Method.

प्रश्न 4. उर्ध्व रोधिता क्या है ?
What is Vertical resistance ? (CSJM, 2011)

प्रश्न 5. क्षैतिज रोधिता क्या है ?
What is Horizontal resistance ?

प्रश्न 6. संकरण को परिभाषित कीजिए तथा उनके उद्देश्य लिखिए।
Define Hybridization and write its objectives. (CSJM, 2014)

अथवा

संकरण के मुख्य चरण लिखिये
Write the major steps of Hybridization. (CSJM, 2011)

प्रश्न 7. संकरण द्वारा स्व–परागित फसलों में प्रजनन की विधियाँ लिखिए।
Write the methods on Breeding by Hybridization in Self-pollinated Crops.

प्रश्न 8. स्व–अनिषेच्यता क्या है ?
What is Self-incompatibility ? अथवा
पादप प्रजनन में स्व–अनिषेच्यता के महत्त्व को समझाइये।
Explain the role of Self-incompatibility in Plant breeding.

अथवा

स्व–अनिषेच्यता क्या है ? पादप प्रजनन में इसकी उपयोगिता लिखिये।
What is Self-incompatibility ? Write the application in plant breeding. (CSJM, 2011)

प्रश्न 9. ट्रिटिकेल के विकास को समझाइये।
Describe the evolution of triticale. (CSJM, 2011)

प्रश्न 10. संकुल प्रजाति के बारे में लिखिए।
Write about Composite varieties. अथवा
संकुल प्रजातियाँ क्या हैं ?
What is Composite varieties ? (CSJM, 2014)

प्रश्न 11. कोशिकाद्रव्यी नर बन्ध्यता के पादप प्रजनन में अनुप्रयोग को समझाइये।
Explain the applications of cytoplasmic male sterility in Plant Breeding.

प्रश्न 12. गेहूँ के विकास को समझाइये।
Describe the evolution of Wheat.

प्रश्न 13. पादप पुरःस्थापन के दोष लिखिए।
Write the demerits of Plant introduction. **(CSJM, 2011)**

प्रश्न 14. चने की पाँच किस्मों के नाम तथा उनका उद्भव दीजिए।
Give the name of five varieties of chick pea with their origin.

प्रश्न 15. धान में प्रजनन का मुख्य उद्देश्य दीजिए।
Give major breeding objectives in Rice.

प्रश्न 16. असुगुणितों का पादप प्रजनन में उपयोग लिखिए।
Write the use of Aneuploids in Plant Breeding.

प्रश्न 17. जीन क्रिया को प्रभावित करने वाले कारक लिखिए।
Write the factors affecting Gene action.

प्रश्न 18. पर–परागण क्या है ?
What is Cross-pollination ?

प्रश्न 19. कपास की उत्पत्ति को समझाइये।
Explain the origin of Cotton.

प्रश्न 20. स्वबहुगुणिता के प्रभाव को समझाइये।
Explain the effects of Autopolyploidy.

प्रश्न 21. अन्तःप्रजनन ह्रास की कोटि को समझाइये।
Describe the Degree of Inbreeding Depression.

प्रश्न 22. बेड व्हीट का विकास लिखिये। **(CSJM, 2016)**

अथवा

षट्गुणित गेहूँ की उत्पत्ति एवं प्रजनन उद्देश्य का वर्णन कीजिए। **(BRAU, 2016)**

प्रश्न 23. बहुगुणिता के विकास में महत्त्व को समझाइये।
Describe the role of Polyploidy in Evolution.

प्रश्न 24. सन्तति परीक्षण को लिखिए।
Write the Progeny Test.

अथवा

सन्तति परीक्षण के सन्दर्भ में लिखिए।
To write about Progeny Test. **(CSJM, 2014)**

प्रश्न 25. फसलों के सुधार में बहुगुणिता के महत्त्व को समझाइये।
Describe the role of Polyploidy in the improvement of crops.

प्रश्न 26. भुट्टे की पंक्ति विधि क्या है ? इसके गुण–दोष लिखिये। **(CSJM, 2016)**

प्रश्न 27. जननद्रव्य बैंक क्या है ?
What is Germplasm Bank ?

प्रश्न 28. अंतः प्रजनन ओजहीनता को समझाइये।
Describe the Inbreeding depression.

प्रश्न 29. संकर ओज का फसल सुधार में उपयोग लिखिए।
Write the utilization of heterosis in crop improvement.

प्रश्न 30. मक्का में प्रजनन का मुख्य उद्देश्य दीजिए।
Give major breeding objectives in Maize.

प्रश्न 31. संकर ओज क्या है ?
What is Heterosis ? **(CSJM, 2011)**

प्रश्न 32. मक्का की पुष्प जैविकी का वर्णन कीजिए।
Give the floral biology of Maize. **(CSJM, 2014)**

प्रश्न 33. कपास के विकास को समझाइये।
Describe the origin of Cotton.

प्रश्न 34. उभयद्विगुणित ब्रैसिका स्पेसीज के विकास को समझाइये।
Describe the evolution of Amphidiploid *Brassica* species.

प्रश्न 35. सरसों में प्रजनन के मुख्य उद्देश्य दीजिए।
Give the major objectives of breeding in Mustard.
(CSJM, 2011; BRAU, 2017)

प्रश्न 36. संकर धान के बीज उत्पादन को समझाइये।
Describe the Seed Production of Hybrid Rice. **(CSJM, 2016)**

प्रश्न 37. लवण सहनशीलता के लिये पादप प्रजनन को समझाइये।
Describe the breeding for salt tolerance.

प्रश्न 38. शुद्ध वंशक्रमों में आनुवंशिक विभिन्नता को समझाइये।
Describe the Genetic Variation in Pure Lines.

प्रश्न 39. स्व तथा पर–परागित जनसंख्याओं के संगठन को लिखिए।
Write the composition of Self and Cross-pollinated Populations.

प्रश्न 40. कीट रोधिता प्रजनन में समस्याएँ लिखिए।
Write the Problems in Insect Resistance Breeding.

प्रश्न 41. संश्लिष्ट प्रभेद क्या है ?
What is Synthetic Varieties ?

प्रश्न 42. अन्तःप्रजनन के प्रभाव लिखिए।
Write the effects of Inbreeding. **(CSJM, 2011)**

प्रश्न 43. कृत्तक चयन की सीमायें लिखिए।
Write the limitations of Clonal selection.

प्रश्न 44. गेहूँ की पुष्प जैविकी का वर्णन कीजिए।
Give the floral biology of Wheat.

प्रश्न 45. पुंजविधि के गुण समझाइये।
Describe the merits of Bulk method.

र्घ उत्तरीय प्रश्न **59-115**

न 1. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखिए :

(i) संकर ज्वार का बीज उत्पादन
(ii) बाजरा का बीज उत्पादन
(iii) संकर बाजरा का बीज उत्पादन
(iv) कपास का बीज उत्पादन
(v) संकर कपास का बीज उत्पादन

Write short notes on the following :

(i) Seed Production of Hybrid Sorghum (CSJM, 2015)
(ii) Seed Production of Bajara (CSJM, 2015)
(iii) Seed Production of Hybrid Bajara (CSJM, 2015)
(iv) Seed Production of Cotton
(v) Seed Production of Hybrid Cotton

अथवा

कपास में संकर बीज के उत्पादन को समझाइये।

Explain the Hybrid seed production in Cotton.

प्रश्न 2. धान के विकास के लिये पादप प्रजनन की विभिन्न विधियाँ क्या हैं ? इसके संकर बींज उत्पादन का सविस्तार वर्णन कीजिए।

What are different breeding procedures for improvement in Rice? Describe hybrid production of seed in it. (CSJM, 2016)

अथवा

धान में प्रयुक्त होने वाली विभिन्न प्रजनन विधियाँ लिखिये तथा किसी एक का विस्तृत वर्णन कीजिए।

Write the various breeding methods in Rice crop. Explain one of them in detajl. (BRAU, 2015)

प्रश्न 3. मूँगफली में प्रजनन का उद्देश्य तथा उन्नति का वर्णन कीजिए।

Describe the objectives of breeding and progress in Groundnut.

प्रश्न 4. पादप पुरःस्थापन को परिभाषित कीजिए। फसल सुधार में इसके महत्त्व की विवेचना करें।

Define Plant introduction. Explain its importance in crop improvement. **अथवा** (CSJM, 2011)

द्वितीयक पुरःस्थापन को समझाइये।

Describe the Secondary Introduction. **अथवा**

प्राथमिक पुरःस्थापन की व्याख्या कीजिए।

Explain the Primary Introduction. (CSJM, 2011)

प्रश्न 5. परपरागित एवं स्वपरागित फसलों में संकर ओज का वर्णन कीजिए।

Describe the Heterosis in Cross and Self Pollinated Crops.

प्रश्न 6. स्वबंध्यता तथा नर बंध्यता का पादप प्रजनन में संबद्धता की विवेचना कीजिए। संक्षेप में प्रत्येक की सीमाओं का स्पष्टीकरण कीजिए।
Discuss the relevance of self incompatibility and male sterility in plant breeding. Briefly explain the limitations of each system.

अथवा

कोशिकाद्रव्यात्मक आनुवंशिकी नर बन्ध्यता क्या है ? इसका योजनाबद्ध विवरण दीजिए।
What is cytoplasmic genetic male sterility (CMS) ? Give its schematic description. **अथवा**
कोशा रसीय नर बंध्यता के उपयोग से मक्का में संकर बीज उत्पादन का संक्षिप्त विवरण दीजिए।
Give a brief account of hybrid seed production in maize using cytoplasmic male steritity. **(BRAU, 2015)**

प्रश्न 7. पादप प्रजनन क्या है ? इसके क्षेत्र तथा उद्देश्यों का वर्णन कीजिए।
What is Plant Breeding ? Describe its scope and objectives.

प्रश्न 8. गेहूँ के प्रजनन के मुख्य उद्देश्यों, विभिन्न तरीकों तथा उपलब्धियों का वर्णन कीजिए।
Give major breeding objectives, various procedures of breeding and achievements in Wheat. **अथवा**
गेहूँ में प्रजनन के मुख्य उद्देश्य क्या है ?
What are major breeding objectives in Wheat ? **(CSJM, 2011)**

अथवा

गेहूँ फसल के प्रजनन उद्देश्य क्या हैं ?
What is breeding object of Wheat Crops ? **(CSJM, 2014)**

प्रश्न 9. संकर बीज उत्पादन का वर्णन कीजिए।
Describe the hybrid seed production. **अथवा**
संकर किस्मों के दोष लिखिये।
Write the demerits of Hybrid Varieties. **(CSJM, 2014)**

प्रश्न 10. स्वपरागित फसलों में वरण विधियों का वर्णन कीजिए।
Describe methods of selection in self pollinated crops. **अथवा**
शुद्ध वंशक्रम क्या है ? इसके उपयोग लिखिये।
What is pure line ? Write its uses. **(CSJM, 2015)**

प्रश्न 11. आवर्ती चयन को विस्तार से समझाइये।
Explain the Recurrent Selection in detail.

प्रश्न 12. उत्परिवर्तन क्या है ? म्यूटेशन ब्रीडिंग फसल सुधार में किस प्रकार उपयोगी है ?
What is mutation ? How mutation breeding is useful in improving crop plants. **(BRAU, 2016)**

वस्तुनिष्ठ प्रश्न **115-120**

प्रक्षेत्र फसल प्रजनन

[BREEDING OF FIELD CROP]

B. Sc. (Ag.)—चतुर्थ सेमेस्टर

संख्यात्मक/विश्लेषणात्मक/समस्यात्मक प्रश्न
(NUMERICAL/ANALYTICAL/ PROBLEMATIC QUESTIONS)

प्रश्न 1. पादप प्रजनन का कृषि में महत्त्व बताइये।

Describe the importance of Plant Breeding in Agriculture.

उत्तर—आजकल सारे विश्व विशेष रूप से भारत के सामने एक प्रमुख समस्या लगातार बढ़ती हुई जनसंख्या के लिये भोजन की व्यवस्था करना है। आजादी प्राप्त करने के बाद निश्चित रूप से भारतवर्ष में फसलों की पैदावार बढ़ी है परन्तु जिस दर से पैदावार बढ़ी है उससे अधिक दर से जनसंख्या बढ़ गई है। यही नहीं, बल्कि मृत्यु दर भी पर्याप्त कम हो गई है। अतः जन्म दर बढ़ने और मृत्यु दर कम होने से प्रतिवर्ष जनसंख्या में बहुत अधिक बढ़ोत्तरी हो जाती है और फसलों की पैदावार बढ़ने से भी भोजन की कमी बनी रहती है और प्रतिवर्ष भारत को विदेशी मुद्रा का एक बड़ा भाग विदेशों से खाद्यान्न मंगवाने पर खर्च करना पड़ता है जिसको खेती की पैदावार बढ़ाने तथा अन्य सामान मंगाने के लिये प्रयुक्त किया जा सकता था।

पादप प्रजनन ही केवल एक ऐसी विधि है जिसके द्वारा प्रति इकाई क्षेत्रफल में प्रति इकाई समय में अधिकतम उपज ली जा सकती है क्योंकि पादप प्रजनन के द्वारा ही परिस्थिति के अनुकूल प्रभेद उत्पन्न की जा सकती है। यही नहीं बल्कि पादप प्रजनन द्वारा पौधों के आनुवंशिक रूपों को इस प्रकार से पुनर्गठित किया जाता है जिससे वे मानव की सभी प्रकार की (सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा प्रौद्योगिक) आवश्यकताओं की पूर्ति करने में अधिकतम सहायक हों। उदाहरणार्थ अधिकतम उपज दें, खाद्यान्नों में आवश्यकतानुकूल प्रोटीन तथा आवश्यक ऐमीनो अम्ल हों, तिलहनों में हानिकारक अम्ल न हों तथा उनकी उपज अधिक हो, रेशे वाली फसलों जैसे कपास आदि में अधिक उपज के साथ-साथ रेशे की लम्बाई और मजबूती अधिक हो तथा वह अधिक महीन भी हो।

आजकल बेरोजगारी को दूर करने में भी पादप प्रजनन सहायक हो सकती है क्योंकि इसके माध्यम से ऐसी कृषि प्रौद्योगिकी का विकास किया जा सकता है जिससे कृषि में अपेक्षाकृत बहुत अधिक मनुष्यों को काम देकर भी कृषि को लाभदायक धन्धा बनाया जा सकता है, जैसे कपास और कुछ अन्य स्व-परागण वाली फसलों में संकर प्रभेद सामान्य प्रभेदों की अपेक्षा बहुत अधिक उपज देती है परन्तु इनमें संकर

बीज केवल हाथ से नपुंसीकरण तथा पर-परागण द्वारा ही आवश्यक मात्रा में तैयार किया जा सकता है जिसके लिये बहुत से श्रमिकों की आवश्यकता होती है।

पादप प्रजनन के द्वारा फसलों के लागत मूल्य (Cost of cultivation) को भी कम किया जा सकता है; जैसे—मूँग आदि फसलों में ऐसी प्रभेद उत्पन्न की जा सकती हैं जिनमें सभी फलियाँ एक साथ पकें ताकि बार-बार फलियाँ की बिनाई न करके फसल की कटाई एक साथ ही की जा सके।

फसलों में प्रकाश तथा तापमान के प्रति संवेदनशीलता को समाप्त करके उन्हें आवश्यकतानुसार वर्ष में किसी भी समय उगाया जा सकता है तथा आज जो फसलें देश के जिन भागों में नहीं उगायी जा सकती हैं, प्रकाश और तापमान संवेदनशीलता को दूर करके उन्हें वहाँ पर उगाया जा सकता है। उदाहरणार्थ, प्रकाश असंवेदनशील चावल की प्रभेदों को पंजाब में तथा गेहूँ को पश्चिमी बंगाल में उगाया जाता है तथा मक्का को वर्ष में किसी भी समय उगाया जा सकता है।

प्रश्न 2. संकर बीज उत्पादन में स्वअनिषेच्यता के उपयोग में समस्याएँ बताइये।

Describe the problems in use of Self-Incompatibility for Hybrid Seed Production.

उत्तर—संकर बीज उत्पादन में स्वअनिषेच्यता के उपयोग में समस्याएँ (Problems in Use of Self-Incompatibility for Hybrid Seed Production)—संकर बीज उत्पादन के लिये स्वअनिषेच्यता के उपयोग में कई समस्याएँ आती हैं; इनमें से कुछ प्रमुख समस्याएँ नीचे संक्षेप में दी गई हैं—

1. अंतःप्रजातों (Inbreds) के उत्पादन एवं अनुरक्षण के लिये हस्त परागण (Hand pollination) करना पड़ता है, जो कि काफी महँगा एवं कठिन होता है। इसके लिये कुछ सरल विधियों का विकास किया गया है।

2. अंतःप्रजातों के उत्पादन तथा अनुरक्षण के लिये लगातार स्वपरागण करना पड़ता है। लगातार स्वपरागण के कारण अनिषेच्यता अभिक्रिया (Incompatibility reaction) में कमी आती है और इसके कारण स्वनिषेच्यता के लिये वरण (Selection) भी हो सकता है।

3. उच्च तापमान एवं उच्च आर्द्रता (Humidity) जैसे वातावरणीय कारक अनिषेच्यता अभिक्रिया को कम करते हैं, या पूरी तरह समाप्त कर देते हैं। इस कारण, संकर बीजों में 30% तक, या अधिक भी, स्वपरागण से उत्पन्न बीज हो सकते हैं।

4. मधुमक्खियाँ अक्सर किसी एक अंतःप्रजात क्रम (Inbred line) में ही पराग आदि एकत्रित करती है। ऐसा विशेष रूप से तब होता है, जब अंतःप्रजातों में आकारिकीय (Morphological) अंतर पाये जाते हैं।

5. किसी किस्म/स्पेसीज़ में किसी अन्य किस्म/स्पेसीज से S विकल्पियों का स्थानान्तरण समस्यापूर्ण काम होता है।

6. युग्मक उद्भिदी पद्धति में अंतःप्रजनन (Inbreeding) के कारण नई अनिषेच्यता

अभिक्रियाएँ उत्पन्न हो सकती हैं। ऐसा होने पर सम्बन्धित अंतःप्रजातों का संकर बीज उत्पादन के लिये उपयोग सीमित हो जाता है।

प्रश्न 3. बहुवंशक्रम प्रभेद को समझाइये।

Explain the Multiline Varieties.

उत्तर— **बहुवंशक्रम प्रभेद**

(MULTILINE VARIETIES)

गत पर्याप्त समय से स्वपरागित फसलों में शुद्ध वंशक्रम किस्मों को उगाने पर अधिक जोर रहा है तथा धान्य फसलों में केवल शुद्ध वंशक्रम किस्में ही उगाई जाती रही हैं क्योंकि शुद्ध वंशक्रम किस्म के पौधे एक तो सभी लक्षणों में अत्यधिक समान होते हैं और दूसरे वे अपने अनुकूल क्षेत्र में सर्वाधिक उपज देने वाली मानी जाती हैं तथा वे अब सोचने लगे हैं कि किसी भी वाणिज्य महत्त्व की किस्म की अत्यधिक समानता अनावश्यक है तथा प्रत्येक कृषिगत किस्म में पर्याप्त आनुवंशिक विविधता रहनी चाहिये क्योंकि आनुवंशिक विविधता कई प्रकार से लाभदायक होती है।

(1) आनुवंशिक विविधता वाली किस्म शुद्ध वंशक्रम की अपेक्षा परिवर्तित वातावरणीय दशाओं में अधिक उपज देती है क्योंकि उसमें अधिक अनुकूलन क्षमता होती है,

(2) मौसमिक परिवर्तन वाली दशाओं में अपेक्षाकृत अधिक आर्थिक उपज देती है तथा

(3) रोगों और कीटों के प्रति अधिक रोधी होती है। उपरोक्त तीनों कारणों से और विशेष रूप से विशुद्ध वंशक्रमों की रोगों के प्रति शीघ्र सुग्राहिता तथा रोग से धान्य फसलों में होने वाली क्षति को दृष्टिगत रखते हुए अब स्व-परागित फसलों में बहुक्रम किस्मों के उत्पादन पर अधिक जोर दिया जा रहा है। वैसे तो प्राचीनकाल से ज्ञात है कि जिस पादप जनसंख्या में बहुत अधिक आनुवंशिक विषमता (Genetic-heterogeneity) होती है उसमें रोग से अपेक्षाकृत बहुत कम हानि होती है परन्तु बहुक्रम किस्मों का कृषि में प्रयोग अभी अपनी शिशु अवस्था में ही है।

पौधों की ऐसी जनसंख्या जो कृषिगत लक्षणों में समान हो परन्तु रोग रोधी जीन्स में विषमयुग्मजी हो, बहुक्रम किस्म कहलाती है।

(A multiline variety is a population of plants that is agronomically uniform but heterogeneous for disease resistant genes.)

एक बहुक्रम किस्म की औसत आयु शुद्ध वंशक्रम किस्म की औसत आयु से अधिक होती है क्योंकि कोई भी रोग जनक बहुक्रम पर पूर्णतः स्थापित नहीं हो पाता है, परिणामस्वरूप किसी भी रोगजनक के प्रति बहुक्रम रोधी रहती है, जबकि शुद्ध वंशक्रम अति शीघ्र रोग सुग्राही हो जाती है।

स्व-परागित फसलों में लम्बे समय तक रोग पर नियन्त्रण रखने के लिये बहुक्रम विधि प्रथम बार **जोनसेन (1952)** ने जई में तथा **बोरलोग (1958)** ने गेहूँ में प्रयुक्त की। इस विधि का सम्बन्ध लंबवत् रोधिता (Vertical resistance) को नियन्त्रित करने

वाले जीन्स की व्यवस्था से होता है, परन्तु बहुक्रम किस्म लंबवत् तथा क्षैतिज दोनों प्रकार की रोधिता का लाभ उठाती है। यह माना जाता है कि बहुक्रम किस्म में न केवल रोग जनक के आरम्भिक प्रवेश x_0 (Initial inoculum) में ही कमी होती है बल्कि बाद में प्रसार y (Rate of pathogen build up) में भी कमी होती है और परिणामस्वरूप महामारी उत्पन्न होने में पर्याप्त समय लगता है।

विश्व की प्रथम गेहूँ की बहुक्रम किस्म पीत पांडू रोग रोधी 'मिरामार 60' कोलम्बिया में 1960 में निकाली गई परन्तु 'मिरामार 63' ही प्रथम बहुक्रम किस्म थी जो कृषि में अपनाई गई। 'मिरामार 63' 10 'फरोकोर' प्रतीप संकरण वंशक्रमों का भौतिक मिश्रण थी। इन वंशक्रमों में पत्ती तथा तना पांडू रोग रोधी जीन्स थे। भारत में **डॉ० खेम सिंह गिल** ने लुधियाना में कल्याण सेना को आधार जनसंख्या के रूप में प्रयोग करके कई एक बहुत अच्छी बहुक्रम किस्मों का विकास किया है जिनमें **KSML 3, MLKS 11** तथा **KSML 7406** प्रमुख हैं। बहुक्रमों के शुद्धक्रम किस्मों की अपेक्षा उत्तम होने पर भी उनका अधिक उपयोग तथा विकास न होने के कई कारण हैं—(1) 1960 के दशक के आरम्भ में अधिक उत्पादन क्षमता वाली अर्द्ध बौनी किस्मों का विकास, (2) बहुक्रमों के संश्लेषण की विधियों में कठिनाई, तथा (3) बहुक्रमों की उत्पादन क्षमता का आवर्ती पित्र पर निर्भर होना आदि।

उद्देश्य—**मार्शल** (1977) के अनुसार बहुक्रमों के प्रयोग के तीन मुख्य उद्देश्य होते हैं—

(i) उपज बढ़ाना (Increase in yield),

(ii) स्थिरता बढ़ाना (Increase in stability),

(iii) कीटों तथा रोग जनकों से फसल को होने वाली हानि को कम करना (Reduction of damage from insect pests and pathogens)

प्रश्न 4. फसल उन्नयन में पादप प्रजनन की विधियों के महत्त्व की संक्षिप्त विवेचना करें।

Briefly explain the importance of plant breeding methods in crop improvements. **(CSJM, 2011)**

उत्तर— पादप प्रजनन के उद्देश्य

(OBJECTIVES OF PLANT BREEDING)

पादप प्रजनन का मुख्य उद्देश्य पौधों में स्थायी आनुवंशिक परिवर्तन लाना है, जिससे उन्हें अधिक आर्थिक महत्त्व का बनाया जा सके। पौधों में इस प्रकार के परिवर्तनों से उनके विभिन्न लक्षणों में स्थायी आनुवंशिक सुधार किया जाता है। पादप प्रजनन के कुछ महत्त्वपूर्ण उद्देश्य निम्नलिखित हैं—

1. अधिक उपज—विभिन्न फसलों की स्थानीय कृषिगत किस्मों से अधिक उपज देने वाली किस्मों का निर्माण करना पादप प्रजनक का मुख्य उद्देश्य होता है।

2. उत्पाद के गुणों (Qualities) में सुधार करना—पादप प्रजनन का उद्देश्य केवल अधिक उपज बढ़ाना ही नहीं होता है बल्कि इसके साथ-साथ उपज सभी सद्गुणों (Good qualities) से सम्पन्न भी होनी चाहिये, क्योंकि किसी खेत से

किसान को कितनी वास्तविक आमदनी (Net income) होगी, यह फसल की उपज और उसके गुणों दोनों पर निर्भर होती है। क्योंकि यदि उपज अधिक हो और गुण खराब हों तो बढ़ी हुई उपज से पैसा अधिक मिलने के बजाय कम ही प्राप्त होगा और किसान को लाभ के स्थान पर हानि ही होगी। अतः उपज बढ़ाने के साथ-साथ उसके गुण भी अच्छे होने चाहिये। उदाहरणार्थ कपास में लम्बा तथा शक्तिशाली रेशा, फलों के आकर्षक रंग, लुभावनी महक, अधिक रस तथा आसानी से अलग हो सकने वाला छिलका आदि सद्‌गुण हैं।

3. ऐसी किस्म निकालना जो सभी तरह से उत्पादकों तथा उपभोक्ताओं की अधिक से अधिक आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके।

4. अवरोधी किस्मों का विकास—ऐसी किस्मों का निर्माण करना जोकि वातावरण की असामान्य दशाओं (Abnormal conditions) से कम प्रभावित हों—भूमि, पानी तथा मौसम की असामान्य दशाओं में प्रायः साधारण पौधों की वृद्धि तथा उपज बहुत ही कम होती है; जैसे—अम्लीय अथवा क्षारीय भूमि, पानी की कमी (Drought), अधिक गर्मी, अधिक सर्दी आदि दशाएँ। अतः नई किस्मों में ऐसी क्षमता होनी चाहिये जो इन असामान्य दशाओं से कम से कम प्रभावित हो।

5. अधिक दक्षता वाली किस्मों का विकास—नई किस्मों में खाद अथवा उर्वरकों तथा सिंचाई का अधिक उपयोग करने की क्षमता होनी चाहिये।

6. रोग तथा कीट अवरोधी किस्मों का विकास—ऐसी किस्मों का निर्माण करना जो रोगों तथा हानिकारक कीटों (Pests) का सफलतापूर्वक प्रतिरोध कर सकें।

7. अनुकूलनता में वृद्धि—ऐसी किस्मों का निर्माण जो एक बहुत बड़े क्षेत्र में सफलतापूर्वक उगाई जा सकें।

8. शीघ्र पकने वाली किस्मों का विकास करना।

9. किसी फसल की ऐसी प्रभेदों का विकास जो ऐसे स्थानों पर उगाई जा सकें जहाँ पहले वह फसल न उगाई जा सकती हो; जैसे—दलदली भूमि अथवा रेगिस्तान में।

10. पौधों की वृद्धि प्रकृति में परिवर्तन—पौधों के कुछ लक्षणों की वृद्धि प्रकृति में ऐसे परिवर्तन करना जिससे वे अधिक उपज दे सकें; जैसे—गेहूँ में बौनापन, छोटी, मोटी एवं सीधी खड़ी हुई संकीर्ण पत्तियाँ, अधिक दौजी बनना/कठोर तना आदि।

11. नये क्षेत्रों में फसल विस्तार (Extension of crop to new areas)—पादप प्रजनक हमेशा प्रयास करते हैं कि ऐसी किस्में उत्पन्न करें जो फसल को ऐसे स्थानों पर उगाने में सहायक हों जहाँ वह फसल पहले नहीं उगायी जा रही थी। जैसे अब पंजाब में धान और पश्चिमी बंगाल में गेहूँ की फसल उगाई जाती है जबकि पहले ये फसलें वहाँ नहीं उगाई जाती थीं।

12. एक साथ पकने वाली फसलें (Synchronous growth)—मूँग आदि में ऐसी जातियाँ निकालना जोकि एक साथ पकती हों जिससे एक साथ सम्पूर्ण फसल की कटाई की जा सके।

13. कम समय में पकने वाली किस्में विकसित करना। अरहर आदि से शीघ्र पकने वाली जातियाँ विकसित करना जिससे एक वर्ष में एक से अधिक फसल ली जा सके।

प्रश्न 5. शुद्ध वंशक्रम चयन क्या है ? स्वनिषेचित फसलों में चित्र की सहायता से व्याख्या कीजिए।

What is pureline selection ? Explain it with the help of diagram in self pollinated crops.

उत्तर—

शुद्ध वंशक्रम चयन
(PURE LINE SELECTION)

शुद्ध वंशक्रम वाद आनुवंशिकीय नियमों के अनुसार 1903 ई० में **डेनिश वैज्ञानिक जोहनसेन** (Johannsen) ने स्थापित किया। 1900 ई० में **जोहनसेन** ने गाल्टन के पृथक्करण नियम (Law of Regression) की सत्यता का परीक्षण करना आरम्भ किया। इस कार्य के लिये उसने सेम की प्रिंसीज प्रजाति *(Phaseolus vulgaris;* Princes variety) को चुना तथा सेम में बीज के आकार तथा भार का अध्ययन किया। 1900 ई० की फसल में से उसने 19 अलग-अलग पौधों की सन्तति (Progenies) छाँटी तथा उनके बीजों को तोल लिया तथा प्रत्येक सन्तति को वंशक्रम (Line) कहा। सभी सन्ततियों (Lines) को अगले वर्ष उगाया गया तथा फिर प्रत्येक वंशक्रम में से उत्तम पौधों को छाँट लिया और उनके बीजों को फिर अलग-अलग उगाया। इस प्रकार से उसने कई पीढ़ियों तक चयन करके 19 ऐसी वंशक्रम प्राप्त कीं जिनके लक्षणों में आगे और परिवर्तन नहीं होता था। अपने प्रयोगों के परिणामस्वरूप 1903 में **जोहनसेन** ने शुद्ध वंशक्रम वाद (Pure line theory) की अग्र परिभाषा दी—

"एक समजननांशी, स्वयं-निषेचित जीव के वंशजों को शुद्ध वंशक्रम कहते हैं।"

The decendants of a single, homozygous, self fertilized organism constitute a pure line.

or pure line is a progeny of a single homozygous self pollinated plant.

आधुनिक काल में **जोन्स** (Jones) द्वारा दी गई शुद्ध वंशक्रम की परिभाषा अधिक प्रचलित है। यह परिभाषा निम्न प्रकार से है—

"एक अथवा अधिक समान आनुवंशिक संगठन वाले व्यक्तियों, जिनमें कोई आनुवंशिक परिवर्तन न हुआ हो, के वंशजों को शुद्ध वंशक्रम (Pure line) **कहते हैं।"**

("A pureline comprises the descendants of one or more individuals of like germinal constitution that have undergone no germinal change.")

शुद्ध वंशक्रम चयन की विधि
(METHOD OF PURELINE SELECTION)

शुद्ध वंशक्रम चयन में तीन मुख्य पग (Steps) होते हैं—

प्रथम पग—प्रथम वर्ष—किसानों के खेतों में से ऐच्छिक लक्षणों (Desirable characters) वाले 200 से 1,000 तक पौधे छाँट लेते हैं।

द्वितीय पग—इसके अन्तर्गत एकल पौधा चयन (Individual plant selection) सन्तति पंक्तियों (Progeny rows) का उगाना आता है।

द्वितीय वर्ष—प्रत्येक पौधे की सन्तति (Progeny) को व्यक्तिगत पंक्ति (Individual row) में उगाते हैं। प्रत्येक पंक्ति में लक्षणों की विशुद्धता को ध्यान में रखते हुए उत्तम सन्तानों (Superior progenies) को छाँट लेते हैं और अलग-अलग पंक्तियों के पौधों से प्राप्त बीज को पंक्ति के हिसाब से अलग-अलग रखते हैं।

तृतीय वर्ष—तीसरे वर्ष उत्तम संततियों को पुनरावृत्ति उपज परीक्षण प्लोटों (replicated yield testing plots) में सर्वोत्तम प्रचलित किस्म (चेक) के साथ उगाया जाता है तथा उत्तम संततियों को छाँट लेते हैं।

चतुर्थ से छठा वर्ष—चार से छः वर्ष तक श्रेष्ठ सबसे अच्छी प्रचलित चैक किस्म के साथ कई स्थानों पर समन्वित उपज परिक्षण में उगाते हैं। अनुकूलता एवं रोधिता का परीक्षण करते हैं। इसके लिये कृत्रिम तौर पर पादप महामारियाँ (Epiphytotics) भी उत्पन्न की जाती हैं। इन सब परीक्षणों में जो स्ट्रेंस सर्वोत्तम सिद्ध होती हैं केवल उन्हें ही छाँट लिया जाता है।

तृतीय पग—यह पग उस समय आरम्भ होता है जब पादप प्रजनक विभिन्न स्ट्रेंस (Strains) में केवल देखकर ही भेद नहीं कर सकता है।

सातवाँ वर्ष—सातवें वर्ष में नई किस्म का आधार बीज तैयार किया जाता है जिसको नयी किस्म के रूप में किसानों को दिया जाता है।

शुद्ध वंशक्रम के लाभ—(1) इस विधि द्वारा प्राप्त जन समूह में से सर्वोत्तम किस्म सुगमता से निकाली जा सकती है।

(2) यह किस्म अपनी ही सभी गुणों में तथा परफोरमेंस में पूर्णतः समान होती है जिससे बाजार में अधिक मूल्य मिलता है।

प्रश्न 6. लघुबीजाणु जनन तथा गुरुबीजाणु जनन को समझाइये।
Describe the Microsporogenesis and Megasporogenesis.

उत्तर— लघुबीजाणु जनन तथा गुरुबीजाणु जनन (MICROSPOROGENESIS AND MEGASPOROGENESIS)

लघुबीजाणु जनन (Microsporogenesis)

परागशय में परागकणों के निर्माण की क्रिया **माइक्रोस्पोरोजिनेसिस** कहलाती है। प्रत्येक परागाशय में प्रायः दो पालियाँ (Lobes) होती हैं और प्रत्येक पाली (Lobe) में दो गुहादार (Locules) होते हैं। इस तरह से एक अपरिपक्व परागाशय में चार गुहा (Cavities) होती हैं। प्रत्येक गुहा में बहुत-सी अपेक्षाकृत बड़ी कोशिकायें होती हैं जिनमें गाढ़ा कोशिकाद्रव्य तथा बड़ी और स्पष्ट न्यष्टियाँ (Prominent nuclei) होती हैं तथा लघु बीजाणु मातृ कोशिका में अर्धसूत्रण (Meiosis) की क्रिया होती है जिसके परिणामस्वरूप प्रत्येक लघु बीजाणु मातृ कोशिका से चार लघु बीजाणुओं (Microspores)

का एक चतुष्ठक (Tetrad) बनता है और प्रत्येक लघु बीजाणु (Microspore) से एक परागकण बनता है तथा लघु बीजाणु (Microspore) से परागकण में परिवर्तन के लिये लघु बीजाणु की भित्ति मोटी हो जाती है तथा लघु बीजाणु की न्यष्टि विभाजित होकर दो न्यष्टियाँ बनाती हैं—(1) वर्धी न्यष्टि (Vegetative nucleus or tube nucleus) तथा (2) जनन न्यष्टि (Generative nucleus)। जैसे ही परागाशय पक जाते हैं तो परागकोष (Pollen sac) फट जाते हैं और परागकण छिटक जाते हैं जो कि प्रत्येक परागाशय में असंख्य होते हैं।

गुरुबीजाणु जनन (Megasporogenesis)

अण्ड कोशिका बीजाण्ड (Ovule) में बनने वाली मादा युग्मक होती है। इसके निर्माण में नर युग्मक की भाँति ही क्रियाएँ होती हैं परन्तु परागाशय के विपरीत एक बीजाण्ड में केवल एक ही गुरुबीजाणु मातृ कोशिका (Megaspore mother cell) होती है जिसमें अर्धसूत्रण की क्रिया होती है जिसके परिणामस्वरूप चार अगुणित (Haploid, n) कोशिकायें बनती हैं इन कोशिकाओं को अण्ड बीजाणु कहते हैं इन अण्ड बीजाणुओं (Megaspores) का एक रेखीय चतुष्ठक (Tetrad) बन जाता है। इनमें से तीन तो नष्ट हो जाते हैं और केवल एक जो प्रायः माइक्रोपाइल (Micropyle) से दूर होती है, जीवित रहती है इसको **गुरुबीजाणु** (Megaspore) कहते हैं तथा उसमें बिना कोशिका भित्ति बने तीन बार केन्द्रक (Nuclei) विभाजन होता है जिसके परिणामस्वरूप एक अण्डाकार 8 केन्द्रक (Nuclei) वाला भ्रूणकोष (Embryo sac) बन जाता है। भ्रूणकोष में दोनों सिरों पर तीन केन्द्रक (Nuclei) होती हैं तथा दो बीच में व्यवस्थित हो जाती हैं। माइक्रोपाइल (Micropyle) की ओर की तीन केन्द्रक (Nuclei) में से बीच की केन्द्रक (Nuclei) अण्डकोशिका (Egg cell) तथा साथ ही दोनों तरफ की सहाय कोशिकाएँ (Synergid cells) कहलाती हैं। इनके विपरीत सिरे की तीनों केन्द्रक (Nuclei) प्रतिमुख (Antipodal) कोशिकाएँ कहलाती हैं तथा भ्रूणकोष (Embryo sac) के बीच में उपस्थित दोनों केन्द्रकें (Nucleus) पोलर न्यष्टियाँ (Polar nucleus) कहलाती हैं।

प्रश्न 7. पादप प्रजनन की उपलब्धियों को समझाइये।

Describe the achievements of Plant Breeding.

उत्तर— पादप प्रजनन की उपलब्धियाँ

(ACHIEVEMENTS OF PLANT BREEDING)

आजकल सस्य पौधे अपने से सम्बन्धित जंगली जातियों मुख्य रूप से खरपतवार जिनसे उत्पन्न हुये हैं, बहुत ही भिन्न हैं। यह परिवर्तन मुख्यतः पादप प्रजनकों द्वारा किया गया हैं। इस परिवर्तन के कारण अब यह विश्वास करना भी कठिन है कि कृषित पौधे, खरपतवार रूपी जंगली पौधों से उत्पन्न हुए हैं। स्पष्टतः आज जो सस्य पौधे हैं ये मनुष्यों द्वारा उत्पन्न प्रजातियाँ जंगली पौधों से जीन स्थानान्तरण द्वारा उत्पन्न किये गये हैं।

1. पादप प्रजनन के द्वारा खरपतवारों तथा जंगली पौधों को कृषि के योग्य बनाया गया है। इस प्रक्रिया में इतना भारी परिवर्तन पौधों में हुआ है कि यह आसानी

से विश्वास नहीं होता है कि कृषिगत पौधों को खरपतवारों से विकसित किया गया है।

2. पादप प्रजनन की महान उपलब्धि **भारतीय गन्ने का नोबिलाइजेशन** (Nobilization of Indian Sugarcane) है। भारतीय गन्ना *(Saccharum barberi)* बहुत अधिक कठोर था जिसकी उपज बहुत कम थी तथा उसमें चीनी की मात्रा भी बहुत कम थी। इसके विपरीत उष्ण कटिबन्धीय गन्ना (Tropical cane—*Saccharum officinarum)* कोमल था जिसका तना मोटा, छिलका मुलायम, उपज बहुत अधिक, चीनी की मात्रा अधिक तथा रेशा बहुत कम था। परन्तु यह उत्तर भारत की जलवायु में अच्छी उपज नहीं देता था। अतः दोनों जातियों के ऐच्छिक गुणों को एक साथ प्राप्त करने के लिये दोनों जातियों में गन्ना प्रजनन केन्द्र कोयम्बटूर पर संकरण किये गये। इस क्रिया को भारतीय गन्ने का **नोबिलाइजेशन** कहते हैं जिसके परिणामस्वरूप ऐसे संकर गन्ने का विकास किया गया जो उत्तर भारत में बहुत अच्छी उपज देता था परन्तु उसमें रोग बहुत लगते थे। अतः नोबिल गन्ना का बाद में कांस *(Saccharum spontaneum)* के साथ संकरण किया जिसके परिणामस्वरूप गन्ने की बहुत सी अधिक उपज देंने वाली रोग रोधी किस्मों का विकास हुआ, जिनका तना काफी कठोर होता है।

3. गत 25 वर्षों में पादप प्रजनन द्वारा फसलों की उपज में बहुत अधिक बढ़ोत्तरी हुई है। यह फसलों की प्रभेदों में वांछित समय पक्वता, प्रकाश असंवेदनशीलता तथा उर्वरकों के प्रति संवेदनशीलता का प्रवेश कराकर ही सम्भव हुआ है क्योंकि ऐसे गुणयुक्त प्रभेदों से ही अधिकतम लाभ लिया जा सकता है।

4. आधुनिक कृषि के विकास में एक मुख्य कारण है कि धान्य (Cereals) फसलों में उच्च उपज देने वाली धान्य फसलों में अर्द्धबौनी जातियाँ विकसित करना विशेष रूप से गेहूँ एवं धान में। गेहूँ में अर्द्धबौनी जातियाँ (Semidwarf varieties) **डॉ० नोरमन ई० बोरलॉग एवं उनके साथियों** (Dr. N. E. Borlaug and his associates) ने CIMMYT (International Centre for Wheat and Maize Improvement), **मैक्सिको** में विकसित की थी। इन्होंने अर्द्धबौनी जाति में बौनापन का जीन (Dwarfing gene) का स्रोत (Source) के रूप में जापानी जाति **नोरीन 10** (Norin 10) को प्रयोग किया था। ICAR ने 1963 में CIMMYT से कई बौने चयन पुरःस्थापित किये थे। कल्यान सोना एवं सोनालिका का चयन इसी से करके दोनों जातियाँ भारत में विकसित की थीं। एक दशक से अधिक समय तक ये जातियाँ भारत में बहुत प्रसिद्ध रही थीं। आज मुख्यतः भारत में उगाई जाने वाली जातियाँ अर्द्धबौनी जातियाँ हैं। अर्द्धबौनी गेहूँ की जातियाँ लोजिग रोधी, फर्टिलाइजर रेसपोन्सिव एवं उच्च उपज वाली हैं। सामान्यतः ये किट्ट (Rust) रोधी एवं अन्य बीमारियों के प्रति रोधी हैं क्योंकि इनमें रोधी जीन अन्य फसलों से स्थानान्तरित किया गया है। ये जातियाँ प्रकाश अवधि से अप्रभावित (Photoinsensitive) होने के कारण देर से बुवाई में भी सामान्य उपज प्राप्त होती है। इसी के कारण आज गेहूँ को नये क्षेत्रों जैसे बंगाल में भी बोया जाने लगा है जहाँ कि पहले नहीं बोया जाता था। अर्द्धबौनी गेहूँ

में दो लम्बाई घटाने वाले जीन *Rht1* एवं *Rht2* हैं। ये दोनों जीन एक ही गेहूँ की जाति **Norin 10** में पाये जाते हैं जिनका प्रयोग करके अर्द्धबौनी जातियाँ विकसित की गयी थीं।

इसी तरह धान की खेती में भी अर्द्धबौनी जातियों के विकास से क्रान्ति आ गयी है। **ताइवान** में **जपोनिका** धान से शीघ्र पकने वाली बौनी जाति **डी-जीओ-वू-जेन** (Dee-geo-woo-gen) निकाली। **टेचिग नेटिव 1** (Taching Native 1) का विकास ताइवान में तथा IR8 का विकास IRRI (**अन्तर्राष्ट्रीय धान अनुसंधान संस्थान, फिलीपीन्स**) ने किया जिनको **भारत में पुरःस्थापन 1966** में किया गया था। कुछ वर्षों तक ये सघन रूप से भारत में बोयी गयी थीं। कुछ समय बाद इनके उपयोग करके विकसित की गयी अच्छी अर्द्धबौनी जातियों जैसे जया, रतना आदि ने इनका स्थान ग्रहण कर लिया। ये सभी अर्द्धबौनी जातियाँ लोजिंग रोधी (Lodging resistant) फर्टिलाइजर रेस्पोन्सिव, उच्च उपज वाली एवं प्रकाशवधि से अप्रभावित (Photo-insensitivity) हैं। प्रकाशावधि से अप्रभाविता के कारण ही आज धान को नये क्षेत्रों जैसे पंजाब आदि में बोया जाने लगा है। धान एवं गेहूँ के कृषित क्षेत्र में अब धान-गेहूँ का फसल चक्र सम्भव, ऐसी जातियों के विकास के कारण ही हो सका। धान में अर्द्धबौनी जीन का स्रोत (Source) **डी-जीओ-वू-जेन** (Dee-geo-woo-gen) हैं। **इससे ही यह जीन IR8 एवं TN1 में स्थानान्तरित किया गया था।**

5. पादप प्रजनन द्वारा ऐसी प्रभेदें निकाली गयी हैं जिनमें स्वयं रोग तथा कीट रोधिता होती है जिससे फसल को रोगों और कीटों से क्षति नहीं होती है और उत्पादन को स्थिर किया गया है।

6. भारत में सर्वप्रथम संकर ओज (Heterosis) का उपयोग कपास में संकर जाति H_4 (दो *G. hirsutum* जातियों के संकर) से **सी० टी० पटेल** ने गुजरात कृषि विश्वविद्यालय (सुरत केन्द्र) द्वारा व्यापारिक स्तर पर कृषि करने के लिये 1970 में विकसित की थी। इसके बाद अन्य बहुत सी संकर जातियाँ उदाहरण **Jk Hy 1, गोदावरी, सुगाना, H6 एवं AKH 468** (सभी *G. hirsutum* के अन्तःसंकरण से), **वारालक्ष्मी, CBS-156, सावित्री, जयालक्ष्मी** एवं **H2HC** (सभी *G. hirsutum* × *G. barbadense* के संकरण से) विकसित की गयी जातियाँ हैं। शीघ्र ही दो देशी कपास की संकर जातियाँ G. Cot. Dh-7 एवं G. Cot. Dh-9 विकसित की गयी हैं।

7. ज्वार, बाजरा एवं मक्का में उच्च उपज वाली संकर जातियाँ विकसित करना भी एक विशेष उद्देश्य था। मक्का में संकर जातियाँ विकसित करने का कार्यक्रम चार दशक पूर्व **रोकफिलर** एवं **फोर्ड फाउन्डेशन** के सहयोग से स्थापित किया गया था जिसके कारण बहुत-सी संकर जातियाँ उस समय विकसित की गयी थीं। ये जातियाँ **गंगा श्रेणी** की है, उदाहरण **गंगा सफेद 2 एवं डक्कन** आदि इसी तरह बहुत सी संकर जातियाँ ज्वार में उदाहरण **CSH1, CSH2, CSH3, CSH4; CSH5, CSH6, CSH9, CSH10, CSH11** इत्यादि विकसित की गयी थीं। **बाजरे में संकर जातियाँ PHB10, PHB14, BJ104** एवं **BK506** विकसित की गयी थीं। कुछ कारणों से मक्का में संकर जातियाँ इतनी किसानों में प्रसिद्ध नहीं हुईं। लेकिन कर्नाटक में काफी

क्षेत्रफल में संकर जातियाँ उगायी जा रही हैं। इसके बाद संकुल (Composite) जातियाँ मक्का में विकसित की गयीं जिन्होंने संकर जातियों की परेशानी को दूर कर दिया जो कि मुख्य रूप से उगायी जा रही हैं। उदाहरण—मंजरी, विक्रम, सोना, विजय, किसान आदि हैं। कुछ कम्पोजिट जातियाँ **CO1, NLD, रेनुका, कन्चन एवं दियारा** शीघ्र ही विकसित की गयी हैं।

8. कृषि के मशीनीकरण के लिये भी पादप प्रजनन सहायक हुआ है क्योंकि ज्वार की बौनी किस्मों के विकास से उसकी कटाई मशीन द्वारा की जा सकती है। इसी प्रकार टमाटर में सभी फलों के एक साथ पकने से उसकी कटाई भी मशीन से की जा सकती है।

प्रश्न 8. परागण की पद्धति को समझाइये।

Describe the Mode of Pollination.

उत्तर—

परागण की पद्धति
(MODE OF POLLINATION)

लैंगिक जनन वाले पौधों में परागण की दो महत्त्वपूर्ण विधियाँ हैं—

1. आत्मयुग्मन अथवा स्व-परागण (Autogamy or self-pollination),
2. परयुग्मन अथवा पर-परागण (Allogamy or cross-pollination)।

1. स्व-परागण (Self-pollination)

एक पुष्प के परागकोष (Anthers) से उसी फूल के वर्तिकाग्र पर परागकणों के पहुँचने की क्रिया स्व-परागण (Self-pollination) **कहलाती है।** परन्तु जब परागकण एक ही पुष्प के परागकोष से उसी पुष्प के वर्तिकाग्र (Stigma) पर पहुँच जाते हैं तो उसे **स्वयुग्मन** (Autogamy) कहते हैं तथा यह द्विलिंगी (Bisexual) पुष्पों में होती है। जब एक ही पौधे के एक पुष्प, चाहे एकलिंगी नर पुष्प या उभयलिंगी पुष्प हों, के परागकण उसी पौधे के दूसरे पुष्प (मादा या दूसरे उभयलिंगी) के वर्तिकाग्र पर स्थानान्तरित होते हैं तो इस क्रिया को **गिटोनोगैमी** (Geitonogamy) कहते हैं। स्व-परागण का मुख्य लक्षण यह होता है कि इसमें सन्तान उत्पादन में केवल एक ही पौधा काम करता है। पौधों में स्व-परागण को सफल बनाने के लिये निम्नलिखित अनुकूलनताएँ (Adaptations) हो सकती हैं--

1. उभयलिंगता (Bisexuality)—स्व-परागण के लिये यह आवश्यक होता है कि एक ही पुष्प में नर तथा मादा दोनों ही जनन अंग हों। कभी-कभी एकलिंगी पुष्पों वाले पौधों में भी बहुत थोड़ी मात्रा में स्व-परागण होता है जैसे मक्का में, परन्तु वास्तविक स्व-परागण वाले पौधों में पुष्प द्विलिंगी अर्थात् उभयलिंगी (Hermaphrodite) होते हैं।

2. समपरिपक्वता (Homogamy)—ऐसी दशा में एक द्विलिंगी पुष्प (Bisexual-flower) के परागकोष तथा वर्तिकाग्र एक ही समय पर साथ-साथ पकते हैं तथा पास-पास होते हैं।

3. निमीलित परागण (Cleistogamy)—कुछ पौधों के पुष्प सदैव बन्द रहते हैं तथा वे कभी भी नहीं खिलते हैं। अतः इन पुष्पों में सदैव स्व-परागण ही होता है, जैसे

कैलिफोर्निया जई घास *(Danthonia california)*, ड्रोसीरा *(Drosera)*, खट्टी बूटी *(Oxalis)* आदि।

2. पर-परागण (Cross-pollination)

वह क्रिया जिसमें एक पुष्प के परागकोष से परागकण दूसरे पौधे के पुष्प के वर्तिकाग्र पर पहुँच जाते हैं, पर-परागण कहलाती है। पर-परागण की क्रिया एकलिंगी और द्विलिंगी दोनों प्रकार के पुष्पों वाले पौधों में होती है। इस क्रिया में सन्तान के उत्पादन में दो पौधे भाग लेते हैं। पर-परागण के लिये क्योंकि एक पौधे के पुष्प के परागकण दूसरे पौधे के पुष्प के वर्तिकाग्र पर जाते हैं। अतः विभिन्न एजेन्टों के अनुसार पर-परागण निम्न प्रकार का होता है—

(अ) कीट पर-परागण (Entomophily),

(ब) वायु पर-परागण (Anemophily),

(स) जल पर-परागण (Hydrophily),

(द) जन्तु पर-परागण (Zoophily)।

पर-परागण के लाभ (Advantages of cross-pollination)

(1) सन्तान अच्छी तथा तन्दुरुस्त बनती है जो जीवन संग्राम में अपने आप को बनाये रखते हैं।

(2) स्वस्थ तथा अधिक बीज बनते हैं।

(3) नई किस्में तथा नई जातियाँ उत्पन्न हो जाती हैं।

(4) पौधे वातावरण के अधिक अनुकूल होते हैं।

प्रश्न 9. जीनों में अन्योन्यकरण को समझाइये।

Describe the Gene Interaction.

उत्तर— **जीनों में अन्योन्यकरण**

(GENE INTERACTION)

यद्यपि जीन्स का पृथक्करण और स्वतंत्र अपव्यूहन दोनों आनुवंशिकी के आधारभूत सिद्धान्त होते हैं परन्तु फिर भी यह आवश्यक नहीं होता है कि किसी द्विसंकरण से सदैव F_2 सन्तति में 9 : 3 : 3 : 1 का अनुपात प्राप्त हो ही जाये, क्योंकि 9 : 3 : 3 : 1 अनुपात के लिये तीन बातों का पूरा होना आवश्यक होता है—(1) दोनों जोड़े जीन्स में स्वतंत्र अपव्यूहन हो, (2) दोनों जोड़े जीन्स अलग-अलग लक्षणों को नियन्त्रित करते हों तथा (3) दोनों लक्षणों में पूर्ण प्रभावित हों। कभी-कभी दो स्वतंत्र जीन्स में आपस में अन्योन्यकरण होता है, जिसके परिणामस्वरूप जीन लक्षण सम्बन्ध बदल जाते हैं। जीन्स की अन्योन्यकरण के कुछ मुख्य प्रकार निम्न हैं—

1. पूरक जीन क्रिया (Complementary genes action; 9 : 7)—ऐसे जीन्स जिनका अलग-अलग प्रभाव बराबर हो, परन्तु एक नया लक्षण उत्पन्न करने के लिये दोनों में किसी चीज की कमी हो और जब ये दोनों जीन साथ-साथ आयें तो एक जीन दूसरे जीन की कमी को पूरा करता हो, पूरक जीन्स कहते हैं। उदाहरणार्थ फूलों वाली मटर में A और B जीन्स अलग-अलग सफेद रंग का फूल उत्पन्न करते

हैं परन्तु जब दोनों साथ होते हैं तो लाल फूल उत्पन्न करते हैं। इससे ऐसा मालूम होता है कि फूल के लाल रंग को उत्पन्न करने में दोनों जीन में ही अलग-अलग कुछ कमी होती है परन्तु जब साथ आते हैं तो एक जीन दूसरे जीन की कमी की पूर्ति कर देता है और फूलों का रंग लाल हो जाता है। परिणामस्वरूप F_2 में 9 : 3 : 3 : 1 के स्थान पर 9 : 7 के अनुपात में लाल और सफेद रंग के फूलों वाले पौधे प्राप्त होते हैं।

2. अभिभाव जीन क्रिया (Epistasis gene action; 12 : 3 : 1)—इस क्रिया में एक स्वतंत्र जीन दूसरे स्वतंत्र जीन के प्रभाव को ढक लेता है। ढकने वाला जीन अभिभावक फैक्टर (Epistatic factor) कहलाता है तथा जिस फैक्टर का प्रभाव दूसरे फैक्टर द्वारा ढक लिया जाता है वह अधोस्थैतिक फैक्टर (Hypostatic factor) कहलाता है। परिणामस्वरूप 9 : 3 : 3 : 1 के स्थान पर 12 : 3 : 1 का अनुपात प्राप्त होता है जैसे काशीफल में सफेद फल वाले पौधे का हरे फल वाले पौधे के साथ संकरण करने पर F_2 में 12 पौधे सफेद फल वाले, 3 पीले फ़ल वाले और 1 हरे फल वाला पौधा मिलता है। सफेद फल के लिये W जीन, पीले फल के लिये Y जीन के प्रभाव को ढक लेता है और जहाँ कहीं W फैक्टर होता है, फल का रंग सफेद होता है, चाहे उसके साथ Y हो अथवा y हो। इसको **गोपन जीन क्रिया** (Masking gene action) भी कहते हैं।

3. रूपान्तरक जीन (Modifying gene)—ऐसे जीन्स जिनका स्वयं का अपना कोई दृश्यरूपिक प्रभाव नहीं होता है परन्तु किसी दूसरे स्वतंत्र प्रभावी जीन के प्रभाव को परिवर्तित कर देते हैं, रूपान्तरक जीन कहलाते हैं। मक्का में एक प्रभावी जीन R लाल रंग उत्पन्न करता है तथा इसका विकल्पी r जीन सफेद रंग उत्पन्न करता है। दूसरे प्रभावी जीन Pr का अकेले का तो कोई प्रभाव नहीं होता है परन्तु जब R के साथ आता है तो उसके प्रभाव को लाल से गुलाबी में परिवर्तित कर देता है; जैसे—Rpr = लाल; RPr = गुलाबी तथा rpr अथवा rPr = सफेद होते हैं। इसमें 9 : 3 : 4 का अनुपात होता है, इसको **संपूरक जीन क्रिया** (Suplementary gene action) भी कहते हैं।

पादप प्रजनन में रूपान्तरक जीन्स बहुत से लक्षणों में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन ला सकते हैं; जैसे—(1) 3-जीन बौने गेहूँ में पौधों की ऊँचाई, (2) फूलों के रंग, आकार तथा सुगन्ध में परिवर्तन, (3) फलों की सुगन्ध तथा स्वाद में परिवर्तन, (4) वाणिज्य फसलों में मुख्य जीन्स के उपयोग के बाद उत्पादन क्षमता में परिवर्तन।

4. निरोधी जीन क्रिया (Inhibitory gene action; 13 : 3)—वह जीन जिसका स्वयं का तो कोई दृश्य रूपिक प्रभाव न हो परन्तु जब दूसरे स्वतंत्र प्रभावी जीन के साथ आयें तो उसके प्रभाव को रोक दे तो निरोधी जीन कहलाता है। चावल में Lp जीन गुलाबी रंग उत्पन्न करता है परन्तु दूसरे प्रभावी फैक्टर I की उपस्थिति में कोई रंग उत्पन्न नहीं करता है; जैसे—Lpi = गुलाबी; LpI अथवा Ipi = हरा। इसमें 13 : 3 अनुपात मिलता है।

5. द्विक जीन क्रिया (Duplicate gene action; 15 : 1)—जब दो जोड़े कारक (Factors) किसी एक लक्षण को प्रभावित करते हैं और दोनों कारक का प्रभाव समान

होता है तथा एक प्रभावी कारक का भी वही प्रभाव होता है जो दोनों प्रभावी कारक के साथ-साथ आने से होता है और केवल दोनों प्रभावी फैक्टर्स की अनुपस्थिति में ही अप्रभावी लक्षण उत्पन्न होता है तो ऐसे फैक्टर्स को समगुण कारक कहते हैं। चावल में A_1 और A_2 दोनों कारक तूड़दार लेमा उत्पन्न करते हैं और दोनों फैक्टर्स की उपस्थिति में भी तूड़ की लम्बाई उतनी ही रहती है जितनी कि केवल एक कारक A_1 अथवा A_2 की उपस्थिति में। तूड़रहित लेमा केवल दोनों ही कारक की अनुपस्थिति में उत्पन्न होता है। ऐसी स्थिति में 9 : 3 : 3 : 1 का अनुपात 15 : 1 में परिवर्तित हो जाता है।

प्रश्न 10. वंशागतित्व को समझाइये।

Explain the Heritability.

उत्तर— वंशागतित्व

(HERITABILITY)

आनुवंशिक प्रसरण एवं लक्षण प्ररूपी प्रसरण के अनुपात को वंशागतित्व कहते हैं (The ratio of genetic variance to the total variance, *i.e.* phenotypic variance is known as heritability)।

फसलों के आधार में विविधता का आनुवंशिक घटक ही महत्त्वपूर्ण होता है, क्योंकि यही घटक ही अगली पीढ़ी में सम्प्रेषित (Transmit) होता है। चूँकि हम लक्षण प्ररूप के आधार पर ही वरण (Selection) करते हैं, अतः वरण की प्रभावशीलता लक्षण प्ररूप पर वातावरण का प्रभाव एवं जीन प्ररूप के योगदान पर निर्भर करती है। लक्षण प्ररूप की अभिव्यक्ति में जीन प्ररूप के योगदान को वंशागतित्व के रूप में मापते हैं। किसी भी लक्षण प्ररूप में वातावरण का प्रभाव जितना कम होगा, जीन प्ररूप का योगदान उतना ही अधिक होगा और उस लक्षण की वंशागतित्व भी उतनी अधिक होगी।

वंशागतित्व दो प्रकार की होती है—

(1) वृहद वंशागतित्व (Heritability in broad sense) एवं

(2) संकीर्ण वंशागतित्व (Heritability in narrow sense)।

1. वृहद वंशागतित्व (Heritability in broad sense)—वृहद् वंशागतित्व आनुवंशिक प्रसरण (V_g) एवं लक्षण प्ररूप प्रसरण का अनुपात होता है। वृहद् वंशागतित्व लक्षण प्ररूप प्रसरण में जीन प्ररूप के द्वारा उत्पन्न प्रसरण के भाग को प्रदर्शित करता है।

वृहद वंशागतित्व $Hb = V_g/V_p = V_g/(V_g + V_e)$

यहाँ, V_g, V_p एवं V_e क्रमशः आनुवंशिक, लक्षण प्ररूपी तथा वातावरणीय प्रसरण घटक हैं।

2. संकीर्ण वंशागतित्व (Heritability in narrow sense)—वृहत् वंशागतित्व का विचार पूर्णतः सही नहीं है क्योंकि सम्पूर्ण आनुवंशिक प्रसरण (Genetic variance $= V_G$) में प्रभाविता (Dominance) तथा प्रबलता (Epistasis) दोनों तरह के आनुवंशिक प्रसरण (Genetic variance) सम्मिलित होते हैं जो पित्रों से सन्तान में उसी रूप में

सीधे स्थानान्तरित नहीं होते हैं क्योंकि ये दोनों आनुवंशिक रूप पर निर्भर होते हैं जो जीन्स के संयोग से बनते हैं जबकि केवल जीन्स ही स्थानान्तरित होते हैं, आनुवंशिक रूप नहीं। अतः पित्रों और सन्तान में समानता का मुख्य कारण योगशील प्रसरण (Additive variance, V_A) होता है। अतः प्रायः वंशागतित्व इसी के आधार पर ज्ञात की जाती है और योगशील प्रसरण तथा सम्पूर्ण आनुवंशिक प्रसरण के अनुपात को संकीर्ण वंशागतित्व (Heritability in narrow sense) कहते हैं।

$$\text{संकीर्ण वंशागतित्व प्रतिशत} = \frac{V_A}{V_G + V_E} \times 100$$

प्रश्न 11. आनुवंशिकीय विविधता को समझाइये।
Explain the Genetical Variations.

उत्तर—

आनुवंशिकीय विविधता
(GENETICAL VARIATIONS)

आनुवंशिकीय विविधता स्वयं पौधों में उपस्थित जीन्स के कारण से होती है और चूँकि जीन्स एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में स्थानान्तरित होते हैं। अतः आनुवंशिकीय विविधता ही पादप प्रजनन का वास्तविक आधार होती है। आनुवंशिकीय विविधता पौधों के सरल तथा जटिल सभी प्रकार के लक्षणों में होती है। सरल लक्षणों में आनुवंशिकीय विविधता को आसानी से नियन्त्रित किया जा सकता है जबकि जटिल लक्षणों में आनुवंशिकीय विविधता पर नियन्त्रण बहुत कठिन होता है।

वातावरणीय तथा आनुवंशिक विविधता एक-दूसरे से सम्बन्धित होती हैं क्योंकि किसी लक्षण की अभिव्यक्ति वातावरण और आनुवंशिक कारकों की अन्योन्य क्रिया के परिणामस्वरूप होती है अतः आनुवंशिक विविधता को पूर्णतः वातावरणीय विविधता से अलग रखकर नहीं नापा जा सकता है।

आनुवंशिक विविधता के सम्बन्ध में किसी भी पादप जाति में विकल्पी लक्षणों (Contrasting characters) का अध्ययन किया जाता है। लक्षणों का निर्धारण जीन्स की वातावरण के साथ अन्योन्य क्रिया द्वारा होता है तथा जीन्स गुणसूत्रों में स्थित होते हैं। जीन्स आनुवंशिक इकाई (Hereditary unit) होते हैं तथा ये ही एक पीढ़ी से दूसरी में स्थानान्तरित होते हैं। अतः पादप प्रजनन के लिये जीन्स अति महत्त्वपूर्ण होते हैं। पादप प्रजनन का मुख्य उद्देश्य आनुवंशिक विविधता के आधार पर ऐसे पौधों का चयन होता है जिनमें अधिक से अधिक ऐसे जीन्स हों जो पौधों का अधिक आर्थिक महत्त्व को बनाने के लिये लाभदायक हों और फिर पादप प्रजनक पादप समग्र में ऐसे जीन्स की अधिक से अधिक संख्या बढ़ाता है।

लक्षणों की अभिव्यक्ति क्योंकि वातावरण और जीन्स दोनों के सहयोग से होती है अतः पादप प्रजनक के लिये यह जान लेना अति कठिन होता है कि किस सीमा तक किसी लक्षण की अभिव्यक्ति वातावरण के कारण से है और किस सीमा तक आनुवंशिक कारणों से। यह समस्या गुणात्मक लक्षणों की अपेक्षा मात्रात्मक लक्षणों में और भी कठिन होती है क्योंकि मात्रात्मक लक्षणों पर सापेक्षतः वातावरण का अधिक

प्रभाव होता है और पादप प्रजनक मुख्यतः मात्रात्मक लक्षणों में ही सुधार करना चाहता है। वातावरण और आनुवंशिक प्रभाव को अलग-अलग करने के लिये यह आवश्यक होता है कि सम्बन्धित पौधों को समान तथा नियन्त्रित वातावरण में उगाया जाये तथा सन्तति को भी उसी वातावरण में उगाया जाये। यदि आनुवंशिक विविधता नहीं है तो सन्तति में लक्षण मातृ पौधों के समान ही होंगे अन्यथा सन्तति और मातृ पौधों के लक्षणों की अभिव्यक्ति में अन्तर होगा। यही कारण है कि किसी पौधे के प्रजनन व्यवहार को मालूम करने के लिये पादप प्रजनक उस पौधे की सन्तति का परीक्षण करते हैं।

आनुवंशिक विविधता की उत्पत्ति के कारण
(CAUSES OF ORIGIN OF GENETIC VARIATIONS)

आनुवंशिक विविधता तीन प्रकार से उत्पन्न होती हैं—

1. संकरण के बाद जीन्स के पुनर्संयोगों के द्वारा, 2. उत्परिवर्तन द्वारा, 3. गुणसूत्रों की संख्या में परिवर्तन द्वारा तथा 4. गुणसूत्रों की संरचना में परिवर्तन।

1. संकरण के बाद जीन्स पुनर्संयोगों द्वारा उत्पन्न विविधता (Variation arising due to recombination of genes after hybridization)—जब दो शुद्ध प्रजनन करने वाले पौधों में संकरण करते हैं तो दोनों पादपों में केवल एक-एक प्रकार की युग्मकें बनने के कारण F_1 सन्तति केवल एक प्रकार की होती है परन्तु इस F_1 सन्तति पर पृथक्करण तथा स्वतंत्र अपव्यूहन के नियमों के अनुसार विभिन्न प्रकार की युग्मकें नर तथा मादा प्रजनन अंगों में बनती हैं तथा ये विभिन्न प्रकार की नर तथा मादा युग्मकें आपस में मिलकर विभिन्न संयोग बनाती हैं परिणामस्वरूप F_2 सन्तति में पितृ संयोगों के अतिरिक्त बहुत से नये संयोग भी बनते हैं जो **पुनर्संयोग** (Recombinant) कहलाते हैं। F_2 सन्तति में पुनर्संयोगों की संख्या उन लक्षणों की संख्या तथा उनको नियन्त्रित करने वाले जीन्स की संख्या पर निर्भर करती है जिनमें पितृ पौधे भिन्न होते हैं अथवा जितने जीन्स के लिये F_1 सन्तति विषमयुग्मजी होती है। जैसे-जैसे F_1 की विषमयुग्मजता बढ़ती है वैसे-वैसे ही F_2 सन्तति में पुनर्संयोगों की संख्या भी बढ़ती जाती है।

2. उत्परिवर्तन (Mutation)—मेंडेलियन पुनर्संयोगों से पूर्व स्थित लक्षणों के विभिन्न नये संयोग (Combinations) बनते हैं परन्तु उनसे नये लक्षण उत्पन्न नहीं होते हैं तथा जब लक्षणों के सभी सम्भव संयोग बन जाते हैं तो उनसे फिर और अधिक विविधता उत्पन्न नहीं की जा सकती है। इससे आगे विविधता के लिये आवश्यक है कि नये विकल्पी बनें। नयें विकल्पी जीन्स में परिवर्तन होने से उत्पन्न होते हैं तथा जीन्स में अचानक तथा स्थायी आनुवंशिक परिवर्तन **उत्परिवर्तन** कहलाते हैं जिनसे अकस्मात् नये लक्षण उत्पन्न होते हैं। नये लक्षण केवल जीन्स में परिवर्तन से ही नहीं उत्पन्न होते हैं बल्कि गुणसूत्रिक विपथनों के कारण से एक अथवा अधिक गुणसूत्रों में जीन्स के स्थान परिवर्तन से भी होते हैं। ऐसे परिवर्तन गुणसूत्रिक उत्परिवर्तन कहलाते हैं।

यद्यपि उत्परिवर्तन विकास तथा पादप प्रजनन का मुख्य स्रोत होते हैं परन्तु

उत्परिवर्तन की दर इतनी धीमी होती है कि थोड़े समय में उनसे इतनी विविधता उत्पन्न नहीं हो पाती है कि उसका पादप प्रजनन में उपयोग किया जा सके। दूसरे अधिकांश उत्परिवर्तन हानिकारक होते हैं और यदा-कदा ही कोई लाभदायक उत्परिवर्तन होता है। लाभदायक उत्परिवर्तन प्रायः सूक्ष्म जीन्स (Microgenes) में होते हैं जिनका प्रभाव बहुत कम होने के कारण उन्हें कई वर्षों बाद पहचाना जा सकता है।

3. क्रोमोसोम की संख्या में परिवर्तन (Changes in Chromosome Number)—किसी व्यक्ति में गुणसूत्रों के कुलनों की दो से अधिक संख्या होने की दशा बहुगुणिता कहलाती है जिसके कारण व्यक्ति की कोशिकाओं में गुणसूत्रों की संख्या बढ़ जाती है परिणामस्वरूप किसी भी लक्षण को नियन्त्रित करने वाले जीन्स की संख्या तथा मात्रा (Dosage) भी बढ़ जाती है जिससे लक्षणों की अभिव्यक्ति पहले की अपेक्षा बढ़ जाती है। परन्तु समजात गुणसूत्रों की दो से अधिक संख्या बढ़ने से अर्धसूत्रण असामान्य हो जाती है और पौधों में आंशिक बंध्यता आ जाती है क्योंकि असामान्य अर्धसूत्रण से असामान्य युग्मक बनती हैं अतः लैंगिक प्रजनन वाली फसलों में प्रायः स्वःबहुगुणिता लाभदायक नहीं होती है परन्तु अलैंगिक प्रजनन वाली फसलों में स्वबहुगुणिता का लाभ उठाया जा सकता है। असुगुणिता द्वारा उत्पन्न विविधता फसल सुधार में लाभदायक नहीं होती है। इसका मुख्य उपयोग आनुवंशिक अध्ययनों में किया जाता है।

4. क्रोमोसोम की संरचना में परिवर्तन (Changes in chromosome structure)—क्रोमोसोम के छोटे खण्डों का द्विगुणन (Duplication) या न्यूनता (Deletion) का प्रभाव कभी-कभी जीन उत्परिवर्तन के समान ही होता है और इनकी पहचान भी असम्भव होती है और इनको जीन उत्परिवर्तन के रूप में जाना जाता है। केवल बड़े गुणसूत्रों के खण्डों में ही न्यूनता व द्विगुणन को ही प्रकाश सूक्ष्मदर्शी की सहायता से ज्ञात किया जा सकता है।

लघु उत्तरीय प्रश्न
(SHORT ANSWER TYPE QUESTIONS)

प्रश्न 1. एकल संकरण परीक्षण क्या है ?

What is Single Cross Test ?

उत्तर—एकल संकरण परीक्षण (Single Cross Test)—दो विभेदों (Strains), विशेष रूप से, दो अन्तःप्रजात क्रमों (Inbreds) के बीच संकरण (Hybridization) से प्राप्त F_1 पीढ़ी एकल संकरण परीक्षण कहलाती है।

प्रश्न 2. मक्का में भुट्टे से पंक्ति चयन का चित्र द्वारा वर्णन कीजिए।

Describe the ear-to-row selection in maize with the help of diagram. **(CSJM, 2016)**

उत्तर—भुट्टे से पंक्ति विधि (Ear-to-Row Method)—इस विधि का विकास हापकिंस (Hopkins) ने 1908 में किया था। इस विधि का मक्के में बहुत अधिक उपयोग किया जाता है। इस विधि का एक सरल रूप अग्रलिखित है :

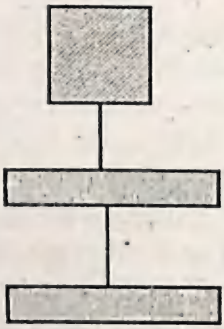

चित्र : मक्के में भुट्टे-से-पंक्ति वरण विधि (Ear-to-Row method of Selection)

वरण प्रक्रिया (Selection Procedure)

इस विधि की वरण प्रक्रिया काफी सरल होती है और वरण चक्र (Selection cycle) एक ही वर्ष में पूरा हो जाता है। वरण प्रक्रिया का सरल एवं संक्षिप्त वर्णन नीचे दिया गया है।

प्रथम वर्ष (First Year)—सुधारी जा रही समष्टि (Population) में से कई (50-100) उत्कृष्ट लक्षणप्ररूप वाले पौधों का वरण किया जाता है। इन पौधों में मुक्त परागण (Open pollination) होने दिया जाता है और प्रत्येक पौधे के बीजों को अलग-अलग एकत्रित कर लिया जाता है।

द्वितीय वर्ष (Second Year)—वरण किये गये प्रत्येक पौधे (मक्के में भुट्टे) के बीज से 10-50 पौधों की एक कतार उगाई जाती है। इन संतति कतारों (Progeny rows) का सूक्ष्म निरीक्षण किया जाता है, एवं निकृष्ट (Inferior) कतारों का परित्याग (Reject) कर दिया जाता है। प्रत्येक उत्कृष्ट कतार में से उत्कृष्ट लक्षणप्ररूपों (Phenotype) वाले कई (5-10) पौधों का वरण किया जाता है। वरण किये गये पौधों के बीजों को अलग-अलग एकत्रित कर लिया जाता है।

तृतीय वर्ष (Third Year)—द्वितीय वर्ष की भाँति।

भुट्टे-से-पंक्ति विधि के गुण (Merits of Ear-to-Row Method)—इस विधि के निम्नांकित गुण होते हैं—

1. यह अपेक्षाकृत सरल विधि है। इसके रूपान्तरण (Modification) से कई अन्य प्रभावशाली विधियों का विकास हुआ है, जैसे आवर्ती वरण (Recurrent selection)।

2. इस विधि में एक वरण चक्र (Selection cycle) एक वर्ष में पूरा हो जाता है।

3. इस विधि में वरण संतति परीक्षण (Progeny test) पर आधारित होता है। अतः यह विधि समूह वरण विधि की अपेक्षा अधिक प्रभावशाली होती है।

4. यदि प्रत्येक वर्ष काफी अधिक पौधों का वरण किया जाये तथा एक ही संतति (Progeny) में से कई पौधों का वरण न किया जाये तो अन्तःप्रजनन (Inbreeding) काफी कम होगा।

भुट्टे-से-पंक्ति विधि के दोष (Demerits of Ear-to-Row Method)—इस विधि के निम्नलिखित दोष होते हैं—

1. वरण किये गये पौधों का परागण (Pollination) उत्कृष्ट एवं निकृष्ट दोनों ही प्रकार के पौधों द्वारा होता है। इससे वरण का प्रभाव कम हो जाता है।

2. इस विधि में समूह वरण (Mass selection) की अपेक्षा अधिक समय व दक्षता (Skill) की आवश्यकता होती है।

प्रश्न 3. प्रतीप संकरण विधि के गुण-दोषों का वर्णन कीजिए।

Explain the merits and demerits of Back Cross Method.

उत्तर—प्रतीप संकरण विधि के गुण (Merits of Back Cross Method)

1. इस विधि के द्वारा किसी अत्यन्त उत्कृष्ट किस्म के शेष जीनप्ररूप (Genotype) को बिना प्रभावित किये हुए इसके एक या दो दोषों (Defects) को सुधारा जा सकता है। ऐसा करना किसी अन्य प्रजनन विधि (Breeding method) द्वारा सम्भव नहीं है।

2. चूँकि नई किस्म आवर्ती जनक (Recurrent parent) के एकसमान (Identical) होती है, अतः इस विधि से विकसित की गई किस्म के अभिलक्षण (Characteristics) पहले से ही ज्ञात होते हैं।

3. इस विधि में बेमौसम (Off-season) फसलों एवं पौधघरों (Greenhouses) का उपयोग किया जा सकता है, जिससे नई किस्म के विकास में अपेक्षाकृत काफी कम समय लगता है।

4. इस विधि में हर पीढ़ी में केवल 10-100 पौधे उगाने पड़ते हैं।

5. इस विधि में नई किस्म के व्यापक उपज परीक्षणों (Yield trials) की आवश्यकता नहीं होती है। इससे नई किस्म किसानों तक पहुँचाने में 2-3 वर्ष कम लगते हैं।

6. किसी फसल में सम्बन्धित स्पेसीज (Related species) से जीन व कोशिकाद्रव्य (Cytoplasm) स्थानान्तरण की यह एकमात्र विधि है।

7. अतिक्रामी विसंयोजन (Transgressive segregation) प्राप्त करने के लिये इस विधि का रूपान्तरण (Modification) किया जा सकता है। इस रूपान्तरण के लिये दोनों जनकों (आवर्ती एवं अनावर्ती जनकों) का उत्कृष्ट उपज एवं अन्य वांछनीय लक्षणों वाला होना आवश्यक है। इस संकरण में आवर्ती जनक से केवल एक या दो प्रतीप संकरण (Back cross) करने के बाद विसंयोजी पीढ़ियों (Segregating generations) को वंशावली पद्धति (Pedigree method) के अनुसार उगाते व वरण (Selection) करते हैं।

प्रतीप संकरण विधि के दोष (Demerits of Back Cross Method)

1. नई किस्म, सुधारे गये लक्षण को छोड़कर, आवर्ती जनक से अधिक उत्कृष्ट नहीं हो सकती है।

2. स्थानान्तरण किये गये जीन के साथ दृढ़ सहलग्न (Tightly-linked) अवांछनीय (Undesirable) जीन भी स्थानान्तरित हो सकते हैं।

3. हर पीढ़ी में (प्रतीप) संकरण (Hybridization) करना पड़ता है। यह कष्टदायक, समय लेने वाला व खर्चीला होता है।

4. जब तक आवर्ती जनक (Recurrent parent) में सुधार किया जायेगा (8-10 वर्ष) तब तक इसकी अपेक्षा अधिक उत्कृष्ट तथा अधिक उपज देने वाली अन्य किस्में विकसित हो सकती हैं।

प्रश्न 4. उर्ध्व रोधिता क्या है ?

What is Vertical resistance ? **(CSJM, 2011)**

उत्तर—उर्ध्व रोधिता (Vertical resistance)—इसे अन्य कई नामों जैसे रेस विशिष्ट रोधिता, भेदीय रोधिता, मुख्य जीन रोधिता तथा गुणात्मक रोधिता आदि नामों से भी ज़ाना जाता है। यह रोधिता एक अथवा दो मुख्य जीन के कारण से होती है तथा इन जीनों की उपस्थिति में पौधे किसी विशिष्ट रोग के प्रति पूर्णतः रोधी होते है। परन्तु यदि उस रोग की नई रेस उत्पन्न हो जाये तो पौधे रोधिता नहीं दिखाते हैं अर्थात् रोधिता किसी समय भी समाप्त हो सकती है। इसी कारण से किसानों के लिये यह अस्थाई रोधिता होती है परन्तु जब तक रोधिता रहती है तब तक फसल पर रोग का आक्रमण बिल्कुल नहीं होता है। अतः उर्ध्व रोधिता फसल को पूर्ण परन्तु अस्थाई रोग रोधिता प्रदान करती है तथा किसान इसे बहुत चाहते हैं। सामान्यतः यह अल्पजीनों (Oligogenes) द्वारा नियन्त्रित होती है।

प्रश्न 5. क्षैतिज रोधिता क्या है ?

What is Horizontal resistance ?

उत्तर—क्षैतिज रोधिता (Horizontal resistance)—यह उदग्र रोधिता की अपेक्षा कम रोधिता प्रदान करती है। परन्तु यह किसी रोग की सभी रेसों के प्रति रोधिता प्रदान करती है। इसे फील्ड रोधिता, सामान्य रोधिता, अविशिष्ट रोधिता, बहु जीन रोधिता तथा मात्रात्मक रोधिता आदि भी कहा जाता है। क्षैतिज रोधिता फसल को अपूर्ण परन्तु स्थाई रोग रोधिता प्रदान करती है तथा इसकी उपस्थिति में कोई भी किस्म कभी भी किसी रोग से पूर्णतः संवेदनशील नहीं होती है। यह रोगरोधिता बहुजीनों (Polygenes) द्वारा नियन्त्रित होती है।

प्रश्न 6. संकरण को परिभाषित कीजिए तथा उनके उद्देश्य लिखिए।

Define Hybridization and write its objectives. **(CSJM, 2014)**

अथवा

संकरण के मुख्य चरण लिखिये

Write the major steps of Hybridization. **(CSJM, 2011)**

उत्तर— संकरण

(HYBRIDIZATION)

संकरण सस्य सुधार की सबसे अच्छी, आधुनिक तथा वैज्ञानिक विधि है तथा इसके द्वारा अपनी इच्छानुकूल किस्म उत्पन्न की जा-सकती है। विभिन्न लक्षणों वाले

किन्हीं दो व्यक्तियों, पौधों अथवा जानवरों के आपस में संयोग (Mating or crossing) करने को संकरण कहते हैं। यद्यपि संकरण की क्रिया का ज्ञान बहुत प्राचीन काल से था परन्तु फसलों में सुधार करने के उद्देश्य से इसका प्रयोग 1900 ई० में मेण्डल के आनुवंशिकता के नियमों (Laws of inheritance) के पुनः अन्वेषण के बाद ही किया जाने लगा था क्योंकि मेण्डल के दोनों नियम विसंयोजन का नियम (Law of segregation) तथा स्वतंत्र अपव्यूहन का नियम (Law of independent assortment) ही हमारी आनुवंशिकी तथा पादप प्रजनन विज्ञानों के आधार हैं। ये दोनों नियम केवल उस समय सही (Fit) होते हैं जबकि दो व्यक्तियों का संयोग फलद हो तथा अर्द्धसूत्रण में गुणसूत्रों का व्यवहार नियमित हो। आधुनिक काल में संकरण विधि में बहुत अधिक प्रगति हुई है। सस्य सुधार की इस विधि में निम्नलिखित मुख्य पग होते हैं—

(1) संकरण के उद्देश्य का निर्धारण (Determination of the object of hybridization),

(2) सर्वेक्षण तथा पित्रों का चयन (Survey and choice of the parental material),

(3) चयनित पित्रों का सम्वर्द्धन (Culture of the chosen parents),

(4) संकरण की विधि (Technique of hybridization),

(5) संकरण से प्राप्त संकर की भावी नियोजित पीढ़ियों में से ऐच्छिक लक्षणों की दृष्टि से समयुग्मजी पौधों का चयन (Selection of the homozygous plants having desirable characters from the segregants of the hybrid material obtained from the hybridization)।

संकरण के उद्देश्य

संकरण के चार उद्देश्य होते हैं—

(1) जब किसी भी जनसमूह में चयन किया जाता है तो कुछ समय तक के सतत् चयन के बाद उस जन समूह में विविधता नहीं रहती है और विविधता की अनुपस्थिति में सस्य सुधार का कार्य बन्द हो जाता है अर्थात् सुधार के लिये जन समूह में विविधता का होना आवश्यक होता है। अतः संकरण द्वारा कृत्रिम रूप से विविधता उत्पन्न की जाती है ताकि ऐच्छिक संयोगों वाले पौधों का चयन किया जा सके।

(2) सभी ऐच्छिक लक्षण जैसे बीमारी तथा कीड़ों के प्रति रोधता, अधिक उपज देने की क्षमता तथा विभिन्न जलवायु की दशाओं में अनुकूलित (Adapt) होने की क्षमता आदि एक ही किस्म में न होकर कई एक किस्मों में बिखरे पाये जाते हैं। अतः संकरण का मुख्य उद्देश्य दो अथवा अधिक किस्मों में बिखरे हुए ऐच्छिक लक्षणों को एक ही किस्म में लाना होता है।

(3) कभी-कभी आनुवंशिक कारकों के पुनः संयोग से नये तथा ऐच्छिक लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। गुणात्मक लक्षणों में अतिक्रामी विसंयोजन (Transgressive segregation) होते हैं जिससे अधिक उत्तम पौधे मिल सकते हैं।

(4) संकर ओज का उपयोग करने के लिये।

प्रश्न 7. संकरण द्वारा स्व-परागित फसलों में प्रजनन की विधियाँ लिखिए।

Write the methods on Breeding by Hybridization in Self-pollinated Crops.

उत्तर—संकरण द्वारा स्व-परागित फसलों में प्रजनन की विधियाँ (Methods on Breeding by Hybridization in Self-pollinated Crops)—स्व-परागण वाली फसलों में प्रायः संकरण द्वारा प्रजनन की निम्नांकित विधियाँ प्रयोग की जाती हैं—

(1) वंशावली विधि (Pedigree method)

(2) प्रपुंज विधि (Bulk method)

(3) प्रतीप संकरण विधि (Backcross method)

(4) बहुसंकरण विधि (Multiple cross method)

(5) बहुक्रम विधि (Multiline method)।

स्व-परागित फसलों में संकरण का मुख्य उद्देश्य विभिन्न आनुवंशिक रूपों में बिखरे हुए वांछित लक्षणों को एक आनुवंशिक रूप में इकट्ठा करना होता है। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु स्व-परागित फसलों में विसंयोजन करती हुई जनसंख्या को नियन्त्रित करने के लिये प्रायः उपरोक्त प्रथम तीन विधियों अर्थात् वंशावली, प्रपुंज और प्रतीप संकरण विधियो का प्रयोग किया जाता है। परन्तु किसी विशेष संकरण में इनमें से कौन-सी विधि का प्रयोग किया जायेगा यह कई बातों पर निर्भर करता है, जैसे पित्रों की उत्पादन क्षमता, अनुकूलनता तथा रोग और कीट रोधिता। इन लक्षणों का आनुवंशिक नियन्त्रण, तकनीकी विचार (Technical consideration), जैसे संकरण की सुविधा तथा विसंयोजन करती हुई जनसंख्याओं को उगाने के लिये भूमि, हरित गृह, श्रमिकों और धन की उपलब्धि आदि। उपरोक्त सभी कारकों को ध्यान में रखकर किसी एक विधि का प्रयोग करते हैं। इनमें से प्रतीप संकरण विधि का पर-परागित फसलों में सुधार के लिये भी प्रयोग करते हैं।

प्रश्न 8. स्व-अनिषेच्यता क्या है ?

What is Self-incompatibility ?

अथवा

पादप प्रजनन में स्व-अनिषेच्यता के महत्त्व को समझाइये।

Explain the role of Self-incompatibility in Plant breeding.

अथवा

स्व-अनिषेच्यता क्या है ? पादप प्रजनन में इसकी उपयोगिता लिखिये।

What is Self-incompatibility ? Write the application in plant breeding. **(CSJM, 2011)**

उत्तर— स्व-अनिषेच्यता

(SELF-INCOMPATIBILITY)

स्व-अनिषेच्यता स्व-परागण को रोककर पर-परागण को बढ़ावा देने की एक प्राकृतिक संरचना (Natural mechanism) है जिसके अन्तर्गत नर और मादा दोनों

युग्मकों के सामान्य तथा फलद (Fertile) होते हुए भी स्वपरागण के बाद बीज नहीं बनता है अर्थात् **नर और मादा युग्मकों के फलद होते हुए भी जब स्वपरागण के बाद परागनाल की धीमी वृद्धि के कारण वह वर्तिका की पूरी लम्बाई को पार करके निषेचन करने में असफल हो और परिणामस्वरूप बीज न बने तो इस दशा को अनिषेच्यता कहते हैं** (The failure of production of seed in self pollination due to failure of pollen tubes to penetrate the full length of the style and to effect fertilization even when both male and female gametes are normal, is known as self-incompatibility.)

अनिषेच्यता दो प्रकार की होती हैं—

(1) स्व-अनिषेच्यता (Self-incompatibility)—अर्थात् स्व-परागण से निषेचन नहीं होता है लेकिन पर-परागण से निषेचन हो जाता है।

(2) पर-अनिषेच्यता (Cross-incompatibility)—अर्थात् पर-परागण से निषेचन नहीं होता है लेकिन स्व-परागण से निषेचन हो जाता है।

दोनों स्व तथा पर-अनिषेच्यता परागण तथा निषेचन के बीच में कहीं पर सामान्य संरचना में बाधा के कारण से होती हैं तथा ऐसा अनुमान है कि यह बाधा किसी जैव रासायनिक क्रिया के कारण से होती है जिस पर सरल आनुवंशिक कारकों का नियन्त्रण होता है। कुछ फसलों में; जैसे—राई, गोभी, मूली आदि स्व अनिषेच्य (स्व-परागण) का प्रायः परागण के बाद अंकुरण नहीं होता है और यदि अंकुरण होता भी है तो परागनाल वर्तिकाग्र (Stigma) को पार करने में असफल रहती है। यदि वर्तिकाग्र को काटकर अलग कर दिया जाये तो अवरोध समाप्त हो जाता है और परागनाल सामान्य वृद्धि करके निषेचन करती है। इससे सिद्ध होता है कि अनिषेच्यता प्रक्रिया वर्तिकाग्र में ही होती है। कुछ अन्य जातियों में; जैसे—तम्बाकू, आलू आदि में यद्यपि अनिषेच्य पराग का वर्तिकाग्र पर सामान्य अंकुरण होता है तथा परागनाल वर्तिका में से वृद्धि भी करती है परन्तु परागनाल की वृद्धि इतनी धीमी होती है कि यह समय पर भ्रूणकोष तक नहीं पहुँच पाती है और निषेचन करने में असफल रहती है। इससे सिद्ध होता है कि अनिषेच्य प्रक्रिया वर्तिका में होती है।

स्व-अनिषेच्यता का पादप प्रजनन में महत्त्व
(ROLE OF SELF-INCOMPATIBILITY IN PLANT BREEDING)

पादप प्रजनन में स्व-अनिषेच्यता का बहुत अधिक महत्त्व है। यह पादप प्रजनन के लिये सहायक भी होती है और बाधक भी।

(1) स्व-अनिषेच्यता प्रजनकों के लिये सहायक (Self-incompatibility as an Aid to Breeder)

(i) उन फसलों में जहाँ फल में बीज की आवश्यकता नहीं होती है, स्व-अनिषेच्यता बहुत लाभदायक होती है; जैसे—अनन्नास आदि।

(ii) द्विगुणित तथा चतुर्गुणित पौधों को एकान्तरित पंक्तियों में उगाकर त्रिगुणित उत्पन्न करने के लिये।

(iii) संकर बीज उत्पादन के लिये जहाँ S समजननांशी (Homozygotes) उत्पन्न हो सकते हैं; जैसे—सरसों कुल में। कई प्रकार से अन्तःप्रजात वंशक्रम उत्पन्न

की जा सकती हैं; जैसे—(अ) वर्तिकाग्र को हटाकर, (ब) अवरोधी पदार्थ के बनने से पूर्व कलिका परागण (Bud pollination) करके, (स) निम्न तापमान उपचार देकर, (द) कूटनिषेच्य वंशक्रमों (Pseudocompatible lines) को छाँटकर तथा (य) उत्परिवर्तन द्वारा स्व-निषेच्यता युग्म विकल्पी (Self-compatibility alleles) उत्पन्न करके। इन अन्तः प्रजात वंशक्रमों का उपयोग एकल तथा द्विसंकर उत्पादन में किया जा सकता है।

जो फसलें बीज के लिये नहीं उगाई जाती हैं उनमें स्व-निषेच्यता बहुत उपयोगी हो सकती है क्योंकि निषेचन और बीज उत्पादन को रोककर पुष्पण काल को पर्याप्त बढ़ाया जा सकता है तथा सब्जियों में वानस्पतिक अवस्था को पर्याप्त लम्बा किया जा सकता है।

(2) स्व-निषेच्यता पादप प्रजनकों के लिये बाधक (Self-incompatibility as a Handicap to Breeders)

दाने वाली फसलों में निम्न कारणों से स्व-अनिषेच्यता एक बहुत बड़ी बाधा होती है—

(1) बहुत थोड़ा बीज बनना,

(2) उन्नतिशील प्रभेदों में आनुवंशिक शुद्धता को बनाये रखने में कठिनाई तथा

(3) अन्तःप्रजातों के उत्पादन तथा बनाये रखने में कठिनाई।

प्रश्न 9. ट्रिटिकेल के विकास को समझाइये।

Describe the evolution of triticale. **(CSJM, 2011)**

उत्तर— ट्रिटिकेल का विकास

(EVOLUTION OF TRITICALE)

ट्रिटिकेल, मनुष्य द्वारा कृत्रिम विधि से निर्मित प्रथम परबहुगुणित कृषित एक नवीन अनाज की फसल है। इसके संश्लेषण के लिये जब चतुर्गुणित गेहूँ (2n = 4x = 28) ट्रिटिकम का प्रयोग किया जाता है, तो षट्गुणित ट्रिटिकेल (2n = 6x = 42) और जब षट्गुणित ट्रिटिकम गेहूँ का प्रयोग किया जाता है तो अष्टगुणित (2n = 8x = 56) ट्रिटिकेल प्राप्त होता है। लेकिन प्रत्येक दशा में केवल द्विगुणित राई *(Cecale cereale;* 2n = 2x = 14) का ही प्रयोग किया जाता है। आज लगभग 200 से अधिक किस्में ट्रिटिकेल की विभिन्न देशों में विकसित की जा चुकी हैं, जिनका प्रयोग खेती के लिये किया जा रहा है।

1. गेहूँ *(Triticum durum)* (2n = 4x = 28; 14 bivalents) AABB × राई *(Secale cereale)* (2n = 2x = 14; 7 bivalents) RR

↓ F_1 hybrid (Sterile) ABR (2n = 21; 12 univalents)

↓ Chromosome doubling by colchicine

AABBRR (2n = 42; 21 bivalents)

Hexaploid triticale (Fertile)

षट्गुणित ट्रिटिकेल

2. गेहूँ *(Triticum aestivum)* × राई *(Secale cereale)*
(2n = 6x = 42; 21 univalents) | (2n = 2x = 14; 7 bivalents)
AABBDD | RR
↓
F_1 hybrid (Sterile)
ABDR 2n = 28; 28 univalents
↓ Chromosome doubling by colchicine
AABBDDRR
2n = 56; 28 bivalents (Fertile)
षटगुणित ट्रिटिकेल (Octaploid triticale)

चित्र : (1) षट्गुणित ट्रिटिकेल एवं (2) अष्टगुणित ट्रिटिकेल का कृत्रिम संश्लेषण।

प्रश्न 10. संकुल प्रजाति के बारे में लिखिए।
Write about Composite varieties.

अथवा

संकुल प्रजातियाँ क्या हैं ?
What is Composite varieties ? **(CSJM, 2014)**

उत्तर—

मिश्र किस्म
(COMPOSITE VARIETIES)

मिश्र किस्म का अर्थ ऐसे जननद्रव्य सम्मिश्रों (Germplasm complexes) से होता है जिनका आनुवंशिक आधार बहुत अधिक विस्तृत होता है। इसे संकुल किस्म भी कहते हैं। सामान्यतः मिश्र किस्म में उपज क्षमता, परिपक्वता, रोग रोधिता, कीट रोधिता तथा अन्य ऐच्छिक लक्षणों के आधार पर विभिन्न प्रकार की पादप सामग्री सम्मिलित की जाती है। संश्लिष्ट किस्म के विपरीत मिश्र किस्म में यह आवश्यक नहीं होता है कि इसके उत्पादन में प्रयुक्त किये जाने वाले अन्तः प्रजातों या विभेदों की सामान्य संयोग क्षमता का परीक्षण (General combining ability test) नहीं किया जाता है, केवल इनके निष्पादन का उत्कृष्ट होना ही पर्याप्त होता है। परिणामस्वरूप मिश्र किस्मों की उपज का आकलन संश्लिष्ट किस्मों की तरह सम्भव नहीं होता है। मिश्र किस्मों का अनुरक्षण संश्लिष्ट किस्मों की भाँति पार्थक्य में उगाकर मुक्त परागण द्वारा किया जा सकता है।

मिश्र किस्मों का प्रयोग परपरागित फसलों की प्रजनन तकनीक में सुधार की दिशा में एक और पग है विशेषतः उन फसलों में जहाँ संकर किस्मों को उत्पन्न करना सम्भव नहीं है अथवा जिन क्षेत्रों में संकर किस्मों का उगाना आर्थिक दृष्टि से लाभदायक नहीं है।

कम्पोजिट्स को कभी-कभी उत्तम प्रभेदीय जनसंख्या (Super varietal population) भी कहा जाता है तथा उनका निर्माण प्रायः निम्नांकित उद्देश्यों की पूर्ति के लिये किया जाता है—

(1) प्रायः पादप विविधता को बनाये रखने के लिये,
(2) पादप जनसंख्या में सुधार के लिये, नयी विविधता उत्पन्न करने के लिये,
(3) कृषि के लिये, तथा
(4) उत्तम अन्तः प्रजात उत्पादन हेतु उत्तम पादप सामग्री प्राप्त करने के लिये।

प्रश्न 11. कोशिकाद्रव्यी नर बन्ध्यता के पादप प्रजनन में अनुप्रयोग को समझाइये।

Explain the applications of cytoplasmic male sterility in Plant Breeding.

उत्तर——कोशिकाद्रव्यी नर बन्ध्यता (Cytoplasmic male sterility) का उपयोग संकर बीज उत्पादन के लिये किया जा सकता है। परन्तु इस प्रकार उत्पन्न संकर (Hybrid) पौधे नर बंध्य होंगे। अतः इसका उपयोग केवल उन्हीं फसलों में किया जा सकता है, जिनमें फल या बीज की जगह किसी वानस्पतिक भाग (Vegetative part) का आर्थिक महत्त्व हो।

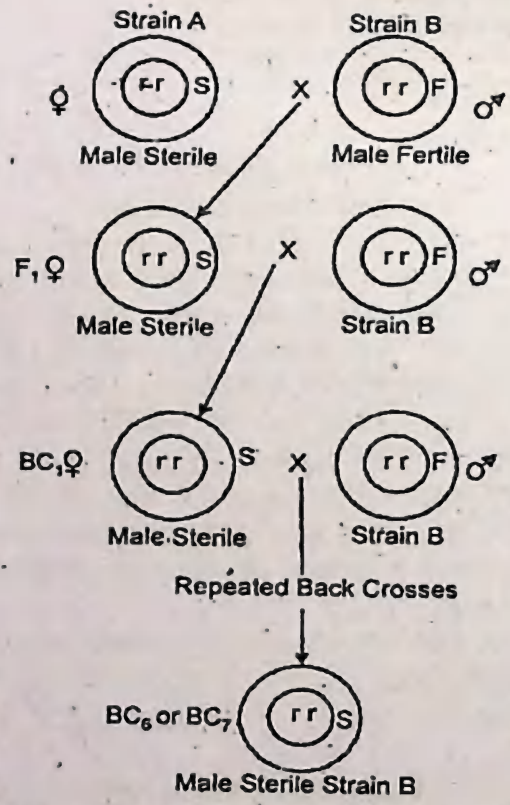

चित्र : नर बंध्य कोशिकाद्रव्य (Male sterile cytoplasm) का किसी नर उर्वर विभेद (Male fertile strain) में स्थानान्तरण (Transfer)।

प्रश्न 12. गेहूँ के विकास को समझाइये।

Describe the evolution of Wheat.

उत्तर— गेहूँ का विकास

(EVOLUTION OF WHEAT)

गेहूँ *(Triticum aestivum,* 2n = 6x = 42) एक परबहुगुणित (Allopolyploid) है जिसमें तीन भिन्न जीनोम (Genome) A, B एवं D पाये जाते हैं जिनमें से A जिनोम *Triticum monococum* (2n = 14); B जिनोम *Aegilops speltoides* (2n = 14) एवं D जिनोम *Aegilops squarrosa* (2n = 14) हैं। कुछ वैज्ञानिकों ने इन जनक स्पेसीज के बारे में शंका प्रकट की है, परन्तु इनकी अपेक्षा अधिक उपयुक्त कोई अन्य सम्भावित जनक स्पेसीज अभी तक ज्ञात नहीं है।

प्रश्न 13. पादप पुरःस्थापन के दोष लिखिए।

Write the demerits of Plant introduction. (CSJM, 2011)

उत्तर—पुरःस्थापन से हानियाँ (Disadvantages of Introduction)—यद्यपि पुरःस्थापन से फसलों के सुधार में पर्याप्त सहायता मिलती है तथा सस्य सुधार की यह विधि सरल भी है। परन्तु इसके असावधानीपूर्ण व्यावहारिक उपयोग से कुछ हानियाँ भी हो सकती हैं; जैसे—,

(1) पुरःस्थापित पादप सामग्री के साथ कुछ बीमारियाँ तथा हानिकारक कीट भी आ जाते हैं जो अन्य फसलों को भी हानि पहुँचाते हैं। उदाहरणार्थ फ्रांस से सन् 1865 में अंगूर का पुरःस्थापन किया गया। पुरःस्थापन पादप सामग्री के साथ अंगूर की पाऊडरी मिल्ड्यू (Powdery mildew of grapes) बीमारी भी आ गई जिसने दो साल के अन्दर ही सन् 1867 ई० में सम्पूर्ण फसल नष्ट कर दी थी। इस प्रकार से अखरोट के अंगमारी रोग (Chestnut blight) ने 1900 ई० में अमेरिका में प्रवेश किया तथा शीघ्र ही सम्पूर्ण देश में फैल गया। भारत में कपास का गुलाबी कीट अमेरिकन कपास के साथ आया तथा सारे भारत में फैल गया। इससे अब छुटकारा पाना अति कठिन है। भारत में बाजरा का अर्गट रोग (Ergot disease) विदेशी संकर बीज के साथ आया तथा 1973 में सम्पूर्ण संकर फसल नष्ट कर दी।

(2) कुछ पुरःस्थापित पौधे नये स्थानों में पहुँचकर हानिकारक खरपतवारों (Dangerous weeds) का रूप ले लेते हैं तथा बहुत अधिक हानि पहुँचाते हैं; जैसे— लेन्टाना केमरा भारत में सजावटी पौधे (Ornamental plant) के रूप में लाया गया था परन्तु यह शीघ्र ही रेलमार्ग तथा बगीचों में खरपतवार के रूप में फैल गया। पारथेनियम *(Parthenium)* खरपतवार भारत में अमेरिका से अभी हाल में आया था। यह बहुत नुकसानदायक खरपतवार है जिससे दमा जैसी बीमारी होती है।

(3) कभी-कभी पुरःस्थापित पादप सामग्री उपयोगी सिद्ध नहीं होती है। अतः उस पर खर्च किया गया पैसा और मेहनत बेकार हो जाते हैं।

प्रश्न 14. चने की पाँच किस्मों के नाम तथा उनका उद्भव दीजिए।

Give the name of five varieties of chick pea with their origin.

उत्तर—प्रजातियाँ—BG-329, पूसा-372, प्रगति, वरदान, पूसा-362।

उद्गम (Origin)—चने का उद्गम दक्षिण-पूर्वी टर्की (Turkey) में माना जाता है। इसकी सबसे अधिक संभावित जनक स्पेसीज *सा० रेटिकुलेटम (C. reticulatum)* है। ऐसी मान्यता है कि *सा० रेटिकुलेटम* से पहले देशी समूह का उद्गम हुआ। बाद में देशी किस्मों में वरण एवं संकरण से काबुली समूह का विकास हुआ। देशी एवं काबुली समूहों को दो भिन्न जीन कोश (Gene pool) माना जाता है। भारत में देशी चने का आगमन प्राचीनकाल में हुआ था, जबकि काबुली चने का पुरःस्थापन 1700 ईस्वी० के आसपास हुआ। भारत में देशी किस्मों की व्यापक खेती होती है, जबकि काबुली चने का उत्पादन चने के कुल उत्पादन का केवल 10-15% होता है।

प्रश्न 15. धान में प्रजनन का मुख्य उद्देश्य दीजिए।

Give major breeding objectives in Rice.

उत्तर—प्रजनन उद्देश्य (Breeding Objectives)

अधिक उपज (Higher Yields)—उपज में योगदान करने वाले प्रमुख लक्षण निम्नलिखित होते हैं : (1) पुष्पगुच्छ (Panicle) की लम्बाई, (2) प्रति पुष्पगुच्छ दोनों की संख्या, (3) परीक्षण भार (Test weight) एवं (4) प्रत्येक एकक क्षेत्रफल (Unit area) में पुष्पगुच्छों की संख्या।

दानों की गुणवत्ता (Quality of Grains)—चावल के पाक (Cooking), मिलीयन (Milling) एवं संसाधन (Processing) अभिलक्षण इसकी गुणवत्ता के महत्त्वपूर्ण घटक होते हैं। सुगंधित बासमती चावल का निर्यात बहुत ही आर्थिक महत्त्व का है।

रोग रोधिता (Disease Resistance)—चावल के प्रमुख रोग निम्नलिखित हैं : ब्लास्ट (Blast), बैक्टीरियाई पर्ण शीर्णता (Bacterial leaf blight), तना गलन (Stem rot), बभ्रु लक्ष्म (Brown spot) एवं वाइरस रोग।

कीट रोधिता (Insect Resistance)—चावल के प्रमुख कीट निम्नलिखित होते हैं : भूरा पादप फुदक (Brown plant hopper), गंधी कीट (Gundhi bug), पिटिका मशकाभ (Gall midge) आदि।

संकर धान (Hybrid Rice)—संकर चावल का विकास भारत में धान प्रजनन कार्यक्रम का एक प्रमुख अंग है।

उत्कृष्ट पादप प्ररूप (Improved Plant Type)—अधिक दक्ष (Efficient) आदर्श पादप प्ररूपों (Idiotypes) को विकसित करने के प्रयास किये जा रहे हैं। इस दिशा में IRRI, फिलीपीन एवं जापान में किये जा रहे प्रयासों के उत्साहवर्धक परिणाम मिले हैं।

प्रश्न 16. असुगुणितों का पादप प्रजनन में उपयोग लिखिए।

Write the use of Aneuploids in Plant Breeding.

उत्तर—असुगुणितों का पादप प्रजनन में उपयोग (Use of Aneuploids in Plant Breeding)—आनुवंशिक अध्ययनों में असुगुणितों का लगातार प्रयोग होता है

क्योंकि इनसे असामान्य विसंयोजन अनुपात (Abnormal segregation ratio) प्राप्त होता है। प्रायः असुगुणितों का प्रयोग पादप प्रजनन में निम्न उद्देश्यों के लिये किया जाता है—

(1) एक न्यूनसूत्रियों के प्रयोग द्वारा **प्रतिस्थापन लाइनें** (Substitution lines) बनाई जाती हैं। प्रतिस्थापन लाइनों के माध्यम से एक जाति से दूसरी जाति में रोग रोधिता जीन्स का स्थानान्तरण किया जाता है। एक जाति के किसी एक गुणसूत्र को दूसरी जाति के एक गुणसूत्र द्वारा विस्थापित करने से उत्पन्न लाइनों को प्रतिस्थापित लाइनें कहते हैं।

(2) एकाधिसूत्रियों (Trisomics) का उपयोग **विदेशी योग लाइनों** (Alien addition lines) के उत्पादन के लिये किया जाता है। इनमें एक गुणसूत्रों को जाति से दूसरी जाति में स्थानान्तरण किया जाता है।

(3) असमगुणितों में से मुख्यतः द्विन्यूनसूत्रियों (Nullisomics) का उपयोग यह निश्चित करने के लिये किया जाता है कि कौन-कौन जीन्स किन गुणसूत्रों पर उपस्थित हैं।

(4) **सन्तुलित तृतीयक एकाधिसूत्री** (Balanced tertiary trisomics) का प्रयोग जौ में संकर बीज उत्पादन के लिये किया जाता है क्योंकि तृतीयक एकाधिसूत्री की स्वनिषेचित संतति में केवल ms युग्मक बनते हैं।

प्रश्न 17. जीन क्रिया को प्रभावित करने वाले कारक लिखिए।

Write the factors affecting Gene action.

उत्तर—जीन क्रिया को प्रभावित करने वाले कारक (Factors Affecting Gene Action)—किसी भी मात्रात्मक लक्षण के लक्षण प्ररूप को कोई जीन समूह प्रभावित करता है उस जीन या जीन समूह की जीन क्रिया कहते हैं। जैसा कि पहले बता चुके हैं जीन क्रिया तीन प्रकार की होती हैं—(1) योगशील (2) प्रभाविता एवं (3) प्रबलता जीन क्रियाएँ। जीन क्रिया को मुख्य रूप से निम्नलिखित कारक प्रभावित करते हैं—

(1) अध्ययन में उपयोग किया गया आनुवंशिक पदार्थ, (2) परागण विधि, (3) वंशानुगति विधि (Mode of inheritance), (4) सहलग्नता, (5) प्रतिदर्श आमाप (Sample size), (6) प्रतिदर्श लेने की विधि, (7) आनुवंशिक प्रसरण के घटकों के आकलन की विधि।

प्रश्न 18. पर-परागण क्या है ?

What is Cross-pollination ?

उत्तर—पर-परागण (Cross pollination)—**वह क्रिया जिसमें एक पुष्प के परागकोष से परागकण दूसरे पौधे के पुष्प के वर्तिकाग्र पर पहुँच जाते हैं, पर-परागण कहलाती है।** पर-परागण की क्रिया एकलिंगी और द्विलिंगी दोनों प्रकार के पुष्पों वाले पौधों में होती है। इस क्रिया में सन्तान के उत्पादन में दो पौधे भाग लेते हैं। पर-परागण के लिये क्योंकि एक पौधे के पुष्प के परागकण दूसरे पौधे के पुष्प के वर्तिकाग्र पर जाते हैं अतः विभिन्न एजेन्टों के अनुसार पर-परागण निम्न प्रकार का होता है—

(अ) कीट पर-परागण (Entomophily),
(ब) वायु पर-परागण (Anemophily),
(स) जल पर-परागण (Hydrophily),
(द) जन्तु पर-परागण (Zoophily)।

पर-परागण के लाभ (Advantages of cross-pollination)

(1) सन्तान अच्छी तथा तन्दुरुस्त बनती है जो जीवन संग्राम में अपने आप को बनाये रखते हैं।

(2) स्वस्थ तथा अधिक बीज बनते हैं।

(3) नई किस्में तथा नई जातियाँ उत्पन्न हो जाती हैं तथा

(4) पौधे वातावरण के अधिक अनुकूल होते हैं।

प्रश्न 19. कपास की उत्पत्ति को समझाइये।

Explain the origin of Cotton.

उत्तर—कपास की दोनों द्विगुणित स्पेसीजों, *गा० आर्बोरियम* एवं *गा० हर्बेसियम*, का उद्गम अफ्रीका की रेशेदार जंगली स्पेसीज *गा० ऐफ्रीकानम* से हुआ मानते हैं। *गा० आर्बोरिसम* का उद्गम भारत में हुआ, जबकि *गा० हर्बेसियम* की उत्पत्ति अफ्रीका में हुई। ऐसी धारणा है कि दोनों ही परचतुर्गुणित स्पेसीजों की उत्पत्ति *गा० ऐफ्रीकानम* (AA जिनोम) एवं अमेरिका की जंगली स्पेसीज *गा० रैमांडियाई* के बीच प्राकृतिक संकरण (Natural hybridization) के द्वारा हुई। *गा० हिर्सुटम* की उत्पत्ति मध्य अमेरिका तथा *गा० बार्बाडेंस* का उद्गम पेरू में हुआ माना जाता है।

प्रश्न 20. स्वबहुगुणिता के प्रभाव को समझाइये।

Explain the effects of Autopolyploidy.

उत्तर—स्वबहुगुणिता का प्रभाव (Effects of Autopolyploidy)—स्वबहुगुणिता का प्रभाव अलग-अलग स्पेसीज में अलग-अलग होता है। इनमें से कुछ सर्वनिष्ठ (Coinmon) प्रभावों का वर्णन द्विगुणित से तुलनात्मक आधार पर नीचे दिया गया है :

(1) कुछ स्पेसीज में स्वबहुगुणिता का प्रभाव आमाप (Size) एवं ओज (Vigour) पर अपेक्षाकृत अधिक होता है।

(2) सामान्यतः स्वबहुगुणितों की पत्तियाँ बड़ी एवं मोटी, पुष्प, फल एवं बीज बड़े होते हैं परन्तु इनकी संख्या अपेक्षाकृत द्विगुणित से कम होती है।

(3) स्वबहुगुणितों में परागकण (Pollen grains) अपेक्षाकृत बड़े होते हैं।

(4) इनकी उर्वरता (Fertility), साधारणतः, द्विगुणितों की अपेक्षा काफी कम होती है।

(5) सामान्यतः स्वबहुगुणितों की वृद्धि दर (Growth rate) द्विगुणित से कम होती हैं, ओर फूल देर से आने शुरू होते हैं।

(6) स्वबहुगुणितों (Autopolyploids) की कोशिकायें एवं स्टोमेटा द्विगुणितों की अपेक्षा बड़े होते हैं।

(7) बहुगुणितों में जल अंश (Water content) अपेक्षाकृत द्विगुणितों से अधिक होता है, जिसके कारण इनका ताजा भार (Fresh weight) भी द्विगुणितों से अधिक होता है, परन्तु शुष्क भार (Dry weight) द्विगुणितों से सदैव कम होता है।

प्रश्न 21. अन्तःप्रजनन हास की कोटि को समझाइये।

Describe the Degree of Inbreeding Depression.

उत्तर— अन्तःप्रजनन हास की कोटि

(DEGREE OF INBREEDING DEPRESSION)

अन्तःप्रजनन की कोटि प्रत्येक स्पेसीज में अलग-अलग होती है। विभिन्न स्पेसीज में पायी जाने वाले अन्तःप्रजनन हास की कोटि के परिमाण के आधार पर फसलों को निम्नलिखित चार वर्गों में बाँटा जा सकता है—

(1) उच्च अन्तःप्रजनन हास,

(2) मध्य अन्तःप्रजनन हास,

(3) अल्प अन्तःप्रजनन हास एवं

(4) अन्तःप्रजनन हास का अभाव।

1. उच्च अन्तःप्रजनन हास (High Inbreeding Depression)

परपरागित फसलों, जैसे लूसर्न, गाजर आदि में बहुत अधिक अन्तःप्रजनन हास पाया जाता है। इन स्पेसीजों में 3-4 पीढ़ियों तक स्वनिषेचन के परिणामस्वरूप घातक व अवघातक (Lethal and sublethal) लक्षण प्रकट हो जाने के कारण ओज एवं उर्वरता (Vigour and fertility) में इतनी अधिक कमी आ जाती है कि इन लाइनों का अनुरक्षण (Maintenance) करना भी कठिन होता है और जो लाइनें जीवित रहती हैं उनकी उपज भी बहुत कम होती हैं।

2. मध्यम अन्तःप्रजनन हास (Medium Inbreeding Depression)

परपरागित फसलों में ही मध्यम अन्तःप्रजनन हास पाया जाता है। इस वर्ग में मक्का, ज्वार, बाजरा आदि कृषित फसलें आती हैं। अन्तः प्रजनन से घातक एवं अवघातक लक्षण प्रकट हो जाने के कारण इनकी उपज मुक्त परागित किस्मों (Open pollinated varieties) की उपज की एक तिहाई या इससे भी अधिक होती है। इन लाइनों का अनुरक्षण करना सम्भव होता है।

3. अल्प अन्तःप्रजनन हास (Low Inbreeding Depression)

प्याज, कुकुरबिटस, सूरजमुखी आदि फसलों में बहुत कम अन्तःप्रजनन हास पाया जाता है। इनकी अन्तःप्रजनन पीढ़ियों में बहुत कम घातक एवं अवघातक लक्षण मिलने के कारण ओज एवं उर्वरता में काफी कम हास होता है और बहुत ही कम लाइनें होती हैं जिनका अनुरक्षण करना सम्भव नहीं होता है। अन्तः प्रजात वंशक्रमों की उपज में बहुत कम कमी आती हैं और कई अन्तः प्रजातों की उपज मुक्त परागित किस्मों के बराबर होती हैं।

4. अन्तःप्रजनन हास का अभाव (Lack of Inbreeding Depression)

स्वपरागित फसलें, जैसे—गेहूँ, धान, जौ, दलहनें आदि में संकर ओज (Hybrid vigour) तो काफी पाया जाता है, परन्तु इनमें अन्तःप्रजनन हास का अभाव (Lack of inbreeding depression) होता है।

प्रश्न 22. बेड व्हीट का विकास लिखिये। (CSJM, 2016)

अथवा

षट्गुणित गेहूँ की उत्पत्ति एवं प्रजनन उद्देश्य का वर्णन कीजिए।
(BRAU, 2016)

उत्तर—षट्गुणित गेहूँ का विकास (Evolution of Hexaploid Wheat)—षट्गुणित गेहूँ को डबलरोटी गेहूँ (bread wheat) भी कहा जाता है। इसका वैज्ञानिक नाम ट्रिटिकम एस्टिवम वेराइटी एस्टिवम (*Triticum aestivum* variety *aestivum*) होता है। यह परषट्गुणित (allohaxaploid) है और इसकी क्रोमोसोम संख्या (2*n*) 42 होती है। इसमें तीन जिनोम उपस्थित होते हैं, जिन्हें क्रमशः A, B एवं D कहा जाता है। इन जिनोमों की स्रोत स्पीशीजें निम्नलिखित हैं—

जिनोम A = ट्रिटिकम मोनोकाकम (*T. monococcum*)।

सारणी : कुछ चुने हुए जीनस (genus), जिनमें परबहुगुणित स्पीशीजें पायी जाती हैं। इन जीन्सों में फसलें भी हैं, जो कि द्विगुणित अथवा परबहुगुणित हैं।

वैज्ञानिक नाम	सामान्य नाम	युग्मकी (Gametic) क्रोमोसोम
एवीना स्ट्राइगोसा (Avena strigosa)	बालू जई (Sand oats)	7
एवीना बार्बेटा (Avena barbata)	तनु जंगली जई (Slender wild oats)	14
एवीना सेटाइवा (Avena sativa)	जई (Oats)	21
ब्रैसिका नाइग्रा (Brassica nigra)	काली सरसों	8 (B)*
ब्रै० ओलेरेसिया (B. oleracea)	पातगोभी, फूलगोभी	9 (C)
ब्रै० कैम्पेस्ट्रिस (B. campestris)	रेप (rape)	10 (A)
ब्रै० कैरिनाटा (B. carinata)	एबीसीनियाई पातगोभी	17 (BC)
ब्रै० जन्सिया (B. juncea)	राई, भारतीय सरसों	18
ब्रै० नेपस (B. napus)	रेप, गोभी-सरसों	19 (AC)
गासीपियम आर्बोरियम (Gosspium arboreum)	एशियाई कपास	13 (A_2)
गा० हर्बेसियम (G. herbaceum)	एशियाई कपास	13 (A_1)
गा० थर्बेरी (G. thurberi)	जंगली अमेरिकी कपास	13 (D_1)
गा० बार्बेडेंस (G. barbadense)	मिस्री (Egyptian) कपास	26
गा० हिर्सुटम (G. hirsutum)	अमेरिकी उपरिभूमि कपास	26
होर्डियम बुल्गेयर (Hordeum vulgare)	जौ	7
ही० जुबैटम (H. jubatum)	गिलहरी-पुच्छ जौ	14
निकोटियाना सिल्वेस्ट्रिस (Nicotiana sylvestris)	जंगली तम्बाकू	12
नि० टोमेण्टोसा (N. tomentosa)	जंगली तम्बाकू	12
नि० रस्टिका (N. rustica)	तम्बाकू	24

नि० टबैकम (N. tabacum)	तम्बाकू	24
नि० बाइजेलोवी (N. bigelovii)	जंगली तम्बाकू	24
सोर्घम वर्सिकलर (Sorghum versicolor)	जंगली ज्वार	5
सो० बाइकलर (S. bicolor)	ज्वार	10
सो० हैलीपेंस (S. halepense)	जांसन घास	20
ट्रिटिकम मोनोकाकम (Triticum monococcum)	आइन्कार्न गेहूँ (Eincorn wheat)	7 (A)
ट्रि० टर्जिडम (T. turgidum)	चतुर्गुणित गेहूँ**	14 (AB)
ट्रि० टिमोफीवी (T. timopheevii)	—	14 (AG)
ट्रि० एस्टिवम (T. aestivum)	षट्गुणित गेहूँ**	21 (ABD)

* कोष्ठकों के भीतर लिखे गये अक्षर जिनोम को प्रदर्शित करते है।

** सभी चतुर्गुणित एवं षट्गुणित गेहूँ, जिनमें क्रमशः AB एवं ABD जिनोम उपस्थित होते हैं, क्रमशः **ट्रि० टर्जिडम** एवं **ट्रि० एस्टिवम** कहे जाते हैं। पहले की अन्य स्पीशीजें इन स्पीशीजों की उपस्पीशीज (subspecies) या वैरायटी के रूप में लिखी जाती हैं जैसे **ट्रि० टर्जिडम** वेराइटी **टर्जिडम, ट्रि० टर्जिडम** वेरा० **ड्यूरम, ट्रि० टर्जिडम** वेरा० **डाइकाकम** आदि। **ट्रि० टर्जिडम** एवं **ट्रि० एस्टिवम** स्पीशीजों की कुछ उपस्पीशीजें जंगली हैं, जैसे वेरा० **डाइककाएड्स।**

जिनोम B = अज्ञात जनक स्पीशीज, जो सम्भवतः लुप्त हो चुकी है।

जिनोम D = **ट्रि० टास्चाई** (*T. tauschii)*

षट्गुणित गेहूँ की उत्पत्ति निम्नलिखित तरीके से हुई होगी—

1. सबसे पहले **ट्रि० मोनोकाकम** का B जिनोम की स्रोत जनक स्पीशीज (अज्ञात) से संकरण हुआ होगा। इस संकरण से प्राप्त F_1 (AB) के क्रोमोसोम द्विगुणन से चतुर्गुणित गेहूँ **ट्रि० टर्जिडम** (*T. turgidum*, 4*x*, AABB, 2*n* = 28) की उत्पत्ति हुई होगी।

2. बाद में **ट्रि० टर्जिडम** का संकरण **ट्रि० टास्चाई** (*T. tauschii)* से हुआ होगा, जिससें प्राप्त F_1 (ABD) के क्रोमोसोम द्विगुणन से **ट्रि० एस्टिवम** (AABBDD, 6*x*, 2*n* = 42) की उत्पत्ति हुई होगी।

प्रश्न 23. बहुगुणिता के विकास में महत्त्व को समझाइये।

Describe the role of Polyploidy in Evolution.

उत्तर— बहुगुणिता का विकास में महत्त्व

(ROLE OF POLYPLOIDY IN EVOLUTION)

बहुगुणिता अन्तर्जातीय संकरण के साथ मिलकर कार्बनिक विकास (Organic evolution) की अति महत्त्वपूर्ण संरचना (Mechanism) प्रस्तुत करती है। यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि वर्तमान वनस्पति जगत की कम से कम एक तिहाई जातियों का उद्भव बहुगुणिता के द्वारा ही हुआ है। यही नहीं बल्कि बहुगुणिता की संरचना

से प्रभावित होकर कई जातियाँ में कृत्रिम बहुगुणिता उत्पन्न की गई हैं। बहुगुणिता द्वारा कार्बनिक विकास का सर्वविदित उदाहरण ब्रेसिका प्रजाति की जातियों का विकास है। **ब्रेसिका** प्रजाति की तीन द्विगुणित जातियाँ—**ब्रेसिका कॉपेस्ट्रिमस** (AA), **ब्रेसिका नाइग्रा** (BB) एवं **ब्रेसिका ओलिरेसिस** (CC) हैं। इन तीनों जातियों में प्राकृतिक संकरण एवं पर बहुगुणिता के द्वारा **ब्रे० जुन्सिया** (AABB), **ब्रे० नेपस** (AACC) तथा **ब्रे० कैरीनाटा** (BBCC) तीन पर चर्तुगुणित (Allotetraploids) जातियों का विकास हुआ है। अन्तर्जातीय संकरण तथा बहुगुणिता के द्वारा **अमेरिकन कपास, गेहूँ, गन्ना, आलू, तम्बाकू** आदि महत्त्वपूर्ण फसलों का विकास हुआ है।

बहुगुणिता से यद्यपि लक्षणों की अभिव्यक्ति बढ़ जाती है तथा व्यक्तियों में भूमि तथा जलवायु की परिवर्तित दशाओं के प्रति सहनशीलता बढ़ जाती है, परन्तु इससे न तो नये जीनों का उद्‌भव होता है और न ही आनुवंशिक विभिन्नता बढ़ती है बल्कि बहुगुणिता के कारण से बहुत समय तक अप्रभावी उत्परिवर्ती जीनों का प्रभाव दिखाई न दे पाने के कारण उनमें से बहुत से देखरेख की कमी के कारण समाप्त हो जाते है। परिणामस्वरूप आनुवंशिक विभिन्नता बहुगुणिता के कारण से कम हो जाती है जो विकास की दृष्टि से हानिकारक है। इससे सिद्ध होता है कि बहुगुणिता विकास में धनात्मक तथा ऋणात्मक दो प्रकार की शक्ति के रूप में कार्य करती है।

प्रश्न 24. सन्तति परीक्षण को लिखिए।
Write the Progeny Test.

अथवा

सन्तति परीक्षण के सन्दर्भ में लिखिए।
To write about Progeny Test. **(CSJM, 2014)**

उत्तर—पौधों की योग्यता का उनकी सन्तति के प्रदर्शन के आधार पर मूल्यांकन करना सन्तति परीक्षण कहलाता है (Evaluation of the worth of plants on the basis of performance of their progeny is known as progeny test)। सन्तति परीक्षण का आविष्कार 1856 में **लुइस डी विल्मोरिन** ने शकरकन्द (Sugarbeet) में किया था। अतः सन्तति परीक्षण **विल्मोरिन पृथक्करण सिद्धान्त** (Vilmorin isolation principle) अथवा **विल्मोरिन सिद्धान्त** कहलाता है। विल्मोरिन ने शकरकन्द में देखा कि चीनी की मात्रा के अनुसार तीन प्रकार के पौधे होते हैं एक वे जिनमें चीनी की मात्रा अधिक होती है तथा उनकी सन्तति में भी चीनी की मात्रा अधिक होती है, दूसरे वे जिनमें चीनी की मात्रा अधिक होती है परन्तु उनकी सन्तति में कुछ पौधों में अधिक चीनी होती है और कुछ में कम, तथा तीसरे वे जिनमें कम चीनी होती है और उनकी सन्तति में भी कम चीनी होती है। स्पष्ट है कि चीनी की अधिक मात्रा वाले पौधे चीनी की मात्रा में समान होते हुए भी विभिन्न प्रकार की सन्तति उत्पन्न करते हैं। अतः पौधों की दृश्यरूप पर विल्मोरिन ने परिणाम निकाला कि किसी पौधे का वास्तविक मूल्य उसकी सन्तति का अध्ययन करके ही मालूम किया जा सकता है। यही कारण है कि सन्तति परीक्षण आजकल पादप प्रजनन का प्राथमिक पग है और प्रजनन की प्रत्येक विधि में सन्तति परीक्षण का उपयोग किया जाता है।

सन्तति परीक्षण के मुख्यतः दो कार्य हैं—

(1) इससे पौधे के प्रजनन व्यवहार का ज्ञान होता है अर्थात् यह पता लगता है कि पौधा समजननांशी है अथवा विषमजननाशी।

(2) सन्तति परीक्षण से स्पष्ट होता है कि जिस लक्षण के लिये चयन किया जाता है वह आनुवंशिक रूप के कारण से है अथवा वातावरण या आनुवंशिक रूप और वातावरण की प्रतिक्रिया के कारण से, क्योंकि वही चयन सफल होता है जो दृश्यरूप के आधार पर उत्तम आनुवंशिक रूप छाँट सके अन्यथा चयन सफल नहीं होता है।

प्रश्न 25. फसलों के सुधार में बहुगुणिता के महत्त्व को समझाइये।

Describe the role of Polyploidy in the improvement of crops.

उत्तर— फसलों के सुधार में बहुगुणिता का महत्त्व

(ROLE OF POLYPLOIDY IN THE IMPROVEMENT OF CROPS)

फसलों के सुधार के लिये बहुगुणिता पादप प्रजनन का एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण तथा विशेष ढंग समझ जाता था तथा कोल्चीसीन द्वारा बहुगुणिता उत्पन्न करने के ज्ञान से वैज्ञानिकों को फसलों के सुधार से बहुगुणिता से बड़ी-बड़ी आशायें थीं परन्तु अभी तक बहुगुणिता फसलों के सुधार में विशेष महत्त्वपूर्ण सिद्ध नहीं हुई है। क्योंकि इसके द्वारा केवल बहुत थोड़े पौधों में ही सुधार सम्भव हो सका है तथा कृत्रिम रूप से उत्पन्न किये हुए बहुगुणित आर्थिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण सिद्ध नहीं हुए हैं। फिर भी कुछ फसलों के स्वबहुगुणित तथा परबहुगुणित दोनों ही आर्थिक दृष्टि से पर्याप्त महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुए हैं।

प्रेरित स्वबहुगुणितों के प्रभाव विभिन्न प्रकार के होते हैं तथा उनमें बहुत से आर्थिक ऐच्छिक गुण होते हैं। सुन्दरता वाले पौधों में पुष्प अधिक समय तक स्वस्थ तथा सुन्दर रहते हैं तथा उनका आकार बड़ा होता है **(इमस्वलर तथा रूटिल,** 1931)। फसल के पौधों में बहुत से अति महत्त्वपूर्ण पदार्थों की मात्रा बढ़ जाती है जैसे विटामिन, प्रोटीन्स, बीजों का बड़ा आकार तथा चारे की फसलों जैसे *ट्राइफोलियम प्रेटेन्स (Trifolium pratence)* आदि में शुष्क पदार्थ की उपज बढ़ जाती है, परन्तु इसके साथ ही साथ कुछ अनैच्छिक गुण भी पौधों में आ जाते हैं, जैसे धीमी वृद्धि तथा कम फलदता। स्वबहुगुणिता का सबसे बड़ा अवगुण यह होता है कि उन परद्विगुणितों की अपेक्षा बहुत ही कम बीज बनते हैं। परबहुगुणिता को तीन प्रकार से फसलों में सुधार के लिये प्रयुक्त किया जाता है :

(1) एक जाति से किसी ऐच्छिक लक्षण को दूसरी जाति में पहुँचाना (Transfer of a single character from one species to another)—प्रेरित परबहुगुणितों का सबसे महत्त्वपूर्ण प्रयोग फसलों में सुधार के लिये सम्बन्धित जंगली जातियों से फसलों की जातियों में रोग निरोधकता अथवा अन्य महत्त्वपूर्ण लक्षणों को स्थानान्तरित करने के लिये किया जाता है। जब दो विभिन्न जातियों में संकरण करते हैं तो संकरण प्रायः वन्ध्य होता है। इस बन्ध्यता के कारण से एक जाति के लक्षण दूसरी जाति में स्थानान्तरित नहीं होते हैं। अतः बन्ध्य संकरों को फलद बनाना आवश्यक होता है

तथा बन्ध्यता दोनों जातियों के गुणसूत्रों में असमानता के कारण से होती है। ऐसे बन्ध्य संकरों में गुणसूत्रों की संख्या को कृत्रिम रूप से दोगुनी करके उन्हें फलद बनाया जाता है। उदाहरणार्थ, तम्बाकू मौजेक रोधिता के लिये जीन *निकोटिआना ग्लुटिनोमा* से तम्बाकू *(Nicotiana tabacum)* में परबहुगुणित (Amphidiploid) *निकोटिआना डिग्लुटा* द्वारा स्थानान्तरित किया गया है।

(2) बहुगुणिता की सहायता से एक जाति के बहुत से लक्षण एक साथ ही दूसरी जाति में स्थानान्तरित किये जा सकते हैं तथा जिन जातियों में सीधा संकरण सम्भव नहीं होता है उनमें एम्फीडिप्लॉयड के द्वारा संकरण किये जाते हैं। इसका बहुत अच्छा उदाहरण गेहूँ तथा एग्रोपाइरोन की विभिन्न जातियों के संकरण द्वारा बहुवर्षीय गेहूँ उत्पन्न करने में एम्फीडिप्लॉयड का प्रयोग है। **मेकफेडन** तथा **सियर्स** (1947) का सुझाव है कि गेहूँ में बहुगुणित शृंखला के बहुत-से ऐच्छिक लक्षण पूरे जीनोम्स को दूसरी शृंखला में स्थानान्तरित करके ही एक जाति में इकट्ठा किया जा सकता है। एक जाति के पूरे जीनोम को दूसरी जाति में स्थानान्तरित करने को उन्होंने मूलज गेहूँ प्रजनन (Radical wheat breeding) कहा है। उदाहरणार्थ यदि कोई प्रजनक चतुर्गुणित *ट्रिटिकम टिमोफीवी* से षट्गुण *ट्रिटिकम एस्टीवम* में कुछ ऐच्छिक लक्षण स्थानान्तरित करना चाहता है तो उपरोक्त दोनों जातियों में सीधा संकरण करके ऐसा नहीं कर सकता है बल्कि उसे पहले ट्रिटिकम टिमोफिवी तथा एजीलोप्स स्कुवेरोसा में संकरण करके परषट्गुणित उत्पन्न करना पड़ेगा। इस प्रकार से *एजीलोप्स स्कुवेरोसा* को जीनोम *ट्रिटिकम टिमोफीवी* में स्थानान्तरित करने से जो परषट्गुणित उत्पन्न होता है, उसको *ट्रिटिकम एस्टीवम* के साथ संकरण करके ऐच्छित लक्षणों को गेहूँ में स्थानान्तरित किया जा सकता है।

कपास की *गोसीपियम एनोमेलम (Gossypum anomalum,* n = 13) जाति को *गोसीपियम हिर्सूटम (G. hirsutum,* n = 26) के साथ सफलतापूर्वक संकरण नहीं किया जा सकता है। परन्तु पहले *गोसीपियम एनोमेलम* को *गोसीपियम आर्बोरियम* से संकरण करके F_1 के अन्दर उपस्थित गुणसूत्रों की संख्या दुगुनी कर दी जाती है तो इस एम्फीडिप्लॉयड (Amphidiploid, n = 26) के साथ आसानी तथा सफलतापूर्वक *गोसीपियम हिर्सूटम* को संकरण किया जा सकता है। ठीक इसी प्रकार से विभिन्न जातियों के एम्फीडिप्लॉयड्स की सहायता से बहुत-सी कपास की अमेरिकन जातियों का प्राचीन विश्व की जातियों के साथ सफल संकरण करके बहुत-सी उन्नतिशील किस्में प्राप्त की हैं।

(3) बहुगुणिता द्वारा फसलों की बहुत-सी नई जातियाँ निकाली गई हैं। ट्रिटिकेल एक मानव निर्मित धान्य फसल है यह गेहूँ एवं राई के संकरण द्वारा निकाली गयी है जो कि अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुई है।

बहुगुणितों में द्विगुणितों की अपेक्षा जीन्स की संख्या अधिक होने के कारण उत्परिवर्तन अधिक होते हैं अतः बहुगुणितों में अधिक विभिन्नतायें पाई जाती हैं। बहुगुणिता से बहुत से दूरस्थ संकरण (Wide crosses) भी सम्भव हो जाते हैं जैसे गन्ने की ग्रेमिनी कुल की विभिन्न जातियों से संकरण किया जाता है।

अन्त में हम यह कह सकते हैं कि बहुगुणिता की सहायता से फसलों की कई एक बहुत ही अच्छी जातियाँ निकाली गई हैं तथा अधिकतर खेतीहर जातियाँ बहुगुणित ही हैं, परन्तु अभी तक इससे फसलों में उतना सुधार सम्भव नहीं हो सकता है जितना उससे आशा की जाती थी। बहुत से वैज्ञानिक तो यहाँ तक भी कहते हैं कि यह पादप प्रजनन का सफल तरीका नहीं है।

प्रश्न 26. भुट्टे की पंक्ति विधि क्या है ? इसके गुण-दोष लिखिये।

(CSJM, 2016)

उत्तर—इस विधि की वरण प्रक्रिया काफी सरल होती है और वरण चक्र (selection cycle) एक ही वर्ष में पूरा हो जाता है। वरण प्रक्रिया का सरल एवं संक्षिप्त वर्णन नीचे दिया गया है।

1. प्रथम वर्ष (First Year)—इनमें सुधारी जा रही समष्टि (population) में से कई (50-100) उत्तम लक्षणप्ररूप वाले पौधों का चयन किया जाता है। इन पौधों में मुक्त परागण (open pollination) होने दिया जाता है और प्रत्येक पौधे के बीजों को अलग-अलग एकत्रित कर लिया जाता है।

2. द्वितीय वर्ष (Second Year)—वरण किये गये प्रत्येक पौधे (मक्के में भुट्टे) के बीज से 10-50 पौधों की एक लाइन उगाई जाती है। इन संतति लाइनों (progeny rows) का सूक्ष्म निरीक्षण किया जाता है एवं निकृष्ट (inferior) कतारों का परित्याग (reject) कर दिया जाता है। प्रत्येक उत्तम कतार में से उत्तम लक्षणप्ररूपों (pheno-type) वाले कई (5-10) पौधों का चयन किया जाता है। चयन किये गये पौधों के बीजों को अलग-अलग एकत्रित कर लिया जाता है।

3. तृतीय वर्ष (Third Year)—द्वितीय वर्ष की क्रिया को पुनः किया जाता है।

भुट्टे से पंक्ति विधि के गुण (Merits of Ear to Row Method)

1. यह विधि में एक चयन चक्र (selection cycle) एक वर्ष में पूरा हो जाता है।
2. इस विधि में चयन संतति परीक्षण (progeny test) पर आधारित होता है। अतः यह विधि समूह चयन विधि की अपेक्षा अधिक प्रभावशाली होती है।
3. यह अपेक्षाकृत सरल विधि है।

भुट्टे से पंक्ति विधि के दोष (Demerits of Ear to Row Method)

1. चयन किये गये पौधों का परागण (pollination) उत्तम एवं निकृष्ट दोनों ही प्रकार के पौधों द्वारा होता है। इससे चयन का प्रभाव कम हो जाता है।
2. इस विधि में समूह चयन (mass selection) की अपेक्षा अधिक समय व दक्षता (skill) की आवश्यकता होती है।

प्रश्न 27. जननद्रव्य बैंक क्या है ?

What is Germplasm Bank ?

उत्तर— जननद्रव्य बैंक

(GERMPLASM BANK)

किसी फसल स्पेसीज एवं उनके जंगली सम्बन्धियों में उपस्थित सम्पूर्ण आनुवंशिक द्रव्य के पूरे समूह को उस स्पेसीज का जननद्रव्य कहते हैं। यहाँ पर

सम्पूर्ण आनुवंशिक द्रव्य का अर्थ उस स्पेसीज में उपस्थित सभी जीनों के सभी विकल्पियों से है। (The sum total of hereditary material or genes present in a species is known as germplasm.) **यदि किसी जाति से सम्बन्धित अधिकांश जीन्स अथवा विविधता को किसी एक स्थान पर एकत्रित करके बनाये रखा जाये तो उस स्थान को उस विशेष जाति का जननद्रव्य बैंक, जीन बैंक अथवा विश्व संग्रह** (World collection) **कहते हैं।** इस तरह से जननद्रव्य संग्रह किसी जाति विशेष की विश्व की अधिकांश कृषिगत आनुवंशिक रूपों तथा सम्बन्धित जंगली पूर्वजों (Wild relatives) का जीवित अवस्था में संग्रह होता है। यह सर्वविदित है कि आनुवंशिक विविधता ही पादप प्रजनन का आधार है तथा भविष्य में यह आनुवंशिक विविधता पादप प्रजनकों के लिये अधिक उपयोगी तथा अधिक आवश्यक होगी। किसी फसल का जननद्रव्य उसकी विविध किस्मों, विभेदों (Strains), लाइनों और समष्टियों के रूप में होता है। अतः जननद्रव्य को निम्नलिखित प्रकार की लाइनों में विभाजित किया जाता है—

(1) देशी किस्में (Land races),

(2) पुरानी किस्में (Obsolete varieties),

(3) कृषित प्रजातियाँ (Varieties in cultivation),

(4) प्रजनन लाइनें (Breeding lines), तथा जंगली प्ररूप एव इसके जंगली सम्बन्धी (Wild forms and is wild relatives)।

हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि पौधों के विकास में कृषिगत रूपों के अपने जंगली पूर्वजों के साथ सतत् संकरण से ही आज की कृषिगत रूपों का निर्माण (विकास) हुआ है तथा बहुत-सी ऐसी आनुवंशिक रूप उत्पन्न हुई हैं जो आज भले ही कृषिगत न हों परन्तु भविष्य में कृषिगत आनुवंशिक रूपों को अधिक आर्थिक महत्त्व के बनाने में सहयोगी होंगी।

प्रश्न 28. अंतः प्रजनन ओजहीनता को समझाइये।

Describe the Inbreeding depression.

उत्तर— संकर ओज तथा अन्तः प्रजनन ह्रास

(HETEROSIS AND INBREEDING DEPRESSION)

आनुवंशिकतः निकट सम्बन्धित व्यक्तियों (Individuals) में संगम या संकरण को **अन्तः प्रजनन** कहते हैं तथा आनुवंशिकतः असम्बन्धित व्यक्तियों में संगम या संकरण की क्रिया **बहिः प्रजनन** (Out breeding) कहलाती है। अन्तः प्रजनन ओजहीनता तथा संकर ओज एक-दूसरे को ठीक विपरीत क्रियायें हैं और जब किसी जाति में इनमें से कोई एक क्रिया होती है तो दूसरी भी निश्चित रूप से होती है। अन्तः प्रजनन से यदि सन्तति में कुछ लक्षणों की अभिव्यक्ति में कमी होती है तो उसे **अन्तः प्रजनन ओजहीनता अथवा अन्तः प्रजनन ह्रास** कहते हैं। यह क्रिया लगभग सभी परपरागित फसलों में तथा स्वपरागित फसलों की संकर सन्ततियों में आसानी से देखी जा सकती है। अन्तः प्रजनन से ओज में हुई कमी को बहिःप्रजनन (Out breeding) के द्वारा फिर से दूर किया जा सकता है। संकर ओज तथा अन्तः प्रजनन ह्रास का

सीधा सम्बन्ध प्रायः उन लक्षणों से माना जाता है जो किसी व्यक्ति की वातावरण में अनुकूलता निश्चित करते हैं तथा अगली पीढ़ी में समानुपातिक योगदान को निश्चित करते हैं। इस प्रकार से अन्तः प्रजनन के कारण अनुकूलता में आयी कमी की पूर्ति बहिःप्रजनन के द्वारा की जाती है। अन्तः प्रजनन ह्रास का सीधा सम्बन्ध समयुग्मजता में वृद्धि (Increase in homozygosity) से माना जाता है परन्तु संकर ओज का सीधा सम्बन्ध केवल उपस्थित विषमयुग्मजता (Heterozygosity *per se)* से नहीं होता है।

बहुत से पौधों के संकरों में अत्यधिक संकर ओज होती है तथा उनमें अत्यधिक अन्तः प्रजनन ह्रास होता है। अतः बहुत प्राचीन काल से ही जीव वैज्ञानिक अन्तः प्रजनन ह्रास और संकर ओज के कारणों का पता लगाने के लिये प्रयत्नशील रहे हैं। **कोल रियूटर** (1761-66) ने संकर ओज के सम्बन्ध में दो महत्त्वपूर्ण तथ्य प्रस्तुत किये हैं—(1) संकर ओज जनकों की आनुवंशिक विषमता पर निर्भर होती है तथा जैसे-जैसे जनकों की आनुवंशिक विषमता बढ़ती है संकर ओज भी बढ़ती जाती है (The vigour of a hybrid is related to the degree of genetic dissimilarity of its parent) तथा (2) संकर ओज का विकास में विशेष महत्त्व होता है (Hybrid vigour is of particular significance in evolution.)

प्रश्न 29. संकर ओज का फसल सुधार में उपयोग लिखिए।

Write the utilization of heterosis in crop improvement.

उत्तर— संकर ओज का फसल सुधार में उपयोग

(UTILIZATION OF HETEROSIS IN CROP IMPROVEMENT)

फसल सुधार का सर्वप्रथम उद्देश्य होता है, फसल से पहले की अपेक्षा अधिक आर्थिक उपज प्राप्त करना। फसलों की आर्थिक उपज बढ़ाने की सबसे सरल तथा सस्ती विधि जहाँ सम्भव हो सके संकर ओज का उपयोग करने की है। परन्तु अभी तक केवल कुछ परपरागित फसलों में और एक-दो स्वपरागित फसलों में ही संकर ओज का उपभोग सम्भव हो सका है।

परपरागित फसलों में संकर ओज

(HETEROSIS IN CROSS POLLINATED CROPS)

परपरागित फसलों में पुष्प की रचना संकर बीज उत्पादन के अनुकूल होती है तथा आसानी से बहुत कम खर्च में पर्याप्त संकर बीज उत्पन्न किया जा सकता है। यही कारण है कि संकर ओज के प्रयोग से सम्बन्धित अधिकांश कार्य परपरागित फसलों में ही हुआ है।

मक्का में संकर ओज

संकर ओज का सबसे अधिक उपयोग मक्का में किया गया है तथा वास्तविकता यह है कि मक्का में प्राप्त संकरों की सफलता से ही कुछ अन्य फसलों में संकर ओज का लाभ उठाने की प्रेरणा मिली है। मक्का में ही संकर ओज उपयोग तथा संकर बीज उत्पादन सम्बन्धी सिद्धान्तों का विकास हुआ है तो अन्य फसलों में भी समान रूप से लागू होते हैं। संकर ओज उपयोग के लिये मक्का में निम्नलिखित सिद्धान्तों का विकास हुआ है :

(i) स्वतंत्र परागित जनसंख्या में से ऐच्छिक पौधों का चयन (Selection of desirable plants from open-pollinated population)।

(ii) चयन किये गये पौधों को निरन्तर 5-6 पीढ़ियों तक स्वरागण करके समयुग्मजी अन्तःप्रजात वंशक्रमों का विकास (Development of homozygous inbred lines by selfing selected plants continuously for 5 to 6 generations)।

(iii) उत्पादित अन्तःप्रजात वंशक्रमों की संयोग क्षमता का परीक्षण करना (Testing the combining ability of the developed inbred lines)।

(iv) एकल संकरण बीज का उत्पादन (Production of single crossed seed)।

(v) द्विसंकरण बीज का उत्पादन (Production of double cross seed)।

प्रश्न 30. मक्का में प्रजनन का मुख्य उद्देश्य दीजिए।

Give major breeding objectives in Maize.

उत्तर—प्रजनन उद्देश्य (Breeding Objectives)

उपज (Yield)—मक्के में उपज के मुख्य घटक (Component) लक्षण निम्नलिखित होते हैं : (1) भुट्टे का आमाप, (2) प्रति भुट्टा दानों की कतारों की संख्या, (3) प्रत्येक कतार में दानों की संख्या, (4) दानों का आमाप, तथा (5) प्रति पौधा भुट्टों की संख्या। मक्के की प्रति एकड़ उपज 180 कुंतल प्रति हेक्टेयर या इससे भी अधिक हो सकती है।

अनुकूलन (Adaptation)—अनुकूलन को प्रभावित करने वाले मुख्य लक्षण निम्नलिखित होते हैं : पकने की अवधि, ताप एवं सूखा सहिष्णुता तथा मृदा उर्वरता से अनुक्रिया।

पतन रोधिता (Lodging Resistance)—अच्छे निष्पादन के लिये यह अत्यन्त जरूरी है कि पौधों का पतन न हो अथवा तना टूटे नहीं; इसे **पतन रोधिता** कहा जाता है।

रोग रोधिता (Disease Resistance)—मक्के के महत्त्वपूर्ण रोग निम्नलिखित हैं : मूल, तना एवं भुट्टा गलन (Rot), पर्ण शीर्णता (Leaf blight), पर्ण चित्ती (Leaf spot), मृदुरोमिल आसिता (Downy mildew) एवं मोजेक वाइरस (Mosaic virus)।

कीट रोधिता (Insect Resistance)—भारत में तना छेदक (Stalk borer) मक्के का प्रमुख नाशी कीट (Insect pest) है।

गुणवत्ता (Quality)—भारत में फ्लिंट (Flint) मक्का डेंट (Dent) मक्के की तुलना में अधिक पसन्द किया जाता है। मक्के की पोषण गुणवत्ता (Nutritional quality) में सुधार के भी प्रयास किये गये हैं। जेइन (Zein) मक्के का प्रमुख बीज भण्डारण (Seed storage) प्रोटीन होता है; इसमें लाइसीन (Lysine) एवं ट्रिप्टोफैन (Tryptophan) की न्यूनता होती है। *ओपेक-2* (Opaque-2, O_2) जीन का उपयोग लाइसीन न्यूनता के निवारण के लिये किया गया है। मधुर (Sweet) या शर्करीय प्ररूपों (Sugary types) तथा फुल्ली मक्का (Popcorn) की किस्मों का भी विकास महत्त्वपूर्ण है। मधुर मक्का संकर 1 (Sweet Maize Hybrid No. 1) मक्के की एक शर्करीय संकर किस्म है।

प्रश्न 31. हेटरोसिस क्या है ?

What is Heterosis ? **(CSJM, 2011)**

उत्तर—परिभाषा (Definition)—अनेक जनक से F_1 संकर की अधिक ओजपूर्णता को संकर ओज कहते हैं।

(The increased vigour of F_1 over its parents is known as heterosis.)

जब दो भिन्न-भिन्न जातियों का संकरण करने से अधिक ओजपूर्ण संकर उत्पन्न होती है तो उसे संकर ओज कहते हैं।

"The increased vigour produced by crossing two different strains is known as heterosis."

संकर ओज भिन्न रतरों पर हो सकती हैं—

1. F_1 का अपने किसी भी जनक से ओजपूर्ण होना।
2. F_1 का दोनों जनकों के मध्यमान (Mean or average) से ओजपूर्ण होना।
3. F_1 का सर्वोत्तम जनक से ओजपूर्ण होना।

मुख्यतः F_1 संकर की दोनों जनकों के मध्यमान या सर्वोत्तम जनक ये ओजपूर्णता को संकर ओज कहते हैं। प्रयोगात्मक रूप से यह लाभदायक होती है।

"The increased vigour of F_1 over the mean of the parents or over the better parent is called heterosis."

प्रश्न 32. मक्का की पुष्प जैविकी का वर्णन कीजिए।

Give the floral biology of Maize.

उत्तर—मक्का की प्रजाति जिआ (Genus-*Zea*) है तथा यह ग्रेमिनी कुल का है। *ज़िआ* प्रजाति में केवल एक जाति *मेज* (Species-*mays*) है। *ज़िआ मेज* ही कृषिगत मक्का हैं। इसकी द्विगुणित क्रोमोसोम संख्या $2n = 20$ है तथा अगुणित, $n = 10$ हैं।

इसकी दो समीप सम्बन्धी प्रजातियाँ है—

(i) *ट्रिपसेकम (Tripsacum)*—गायाग्रास

(ii) *यूक्लीना* (Euchlaena)—टिओसिन्टी

मक्का की उत्पत्ति के विषय में विभिन्न धारणायें हैं। आधुनिक मत के अनुसार मैक्सिको की प्राचीन मक्का पोड कार्न (Pod corn) तथा पॉप कार्न (Pop corn) प्रकार की थी। दक्षिण से विदेशज (Exotic) किस्मों के आगमन से तथा उनका देशज (Indigenous) किस्मों से संकरण होने पर विभिन्नता तथा उत्पादकता बढ़ी। इस प्रकार तथा टिओसिन्टी के जर्मप्लाज्म के साथ अतिक्रामी संकरण (Introgressive hybridization) से मैक्सिको के प्राकृतिक पश्चिम भौगोलिक क्षेत्र में मक्का के विभिन्न प्रकारों का विकास हुआ जिससे मैक्सिको मक्का के उद्भव का द्वितीय केन्द्र हुआ।

प्रजातीय गुण (Generic characters)

1. प्रोप मूल (Prop roots) भूमि से ऊपर की पर्व सन्धियों से निकलती है।
2. उभयलिंगाश्री (Monoecious)।

3. झिल्लीदार जिभिका पर्णछद एवं फलक के पास तने से लिपटती रहती है।

4. नर पुष्पक्रम गुच्छ (Panicle) या बल्लर (Tassal) तने पर शीर्षस्थ उपस्थित होती है।

5. मादा पुष्पक्रम भुट्टा (Cob or ear) पौधे के मध्य में उत्पन्न होता है। यह निपत्रों से घिरा रहता है।

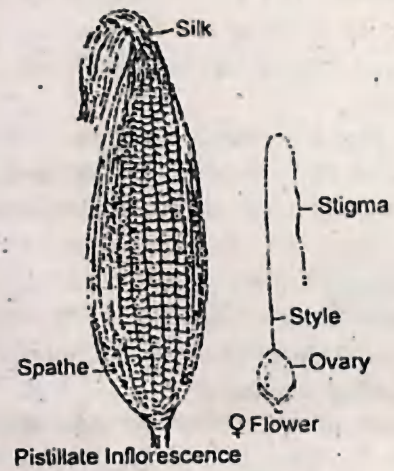

चित्र : *Zea mays* (Maize)

6. स्पाइमिका मोटे अक्ष पर लम्बवत पंक्तियों में विन्यस्त रहती है।

7. वृत्तिका लम्बी सिल्क (Silk) के रूप में उपस्थित होती है जो कि भूसी के शीर्ष से बाहर निकल जाती है।

प्रश्न 33. कपास के विकास को समझाइये।

Describe the origin of Cotton.

उत्तर—कपास का विकास (Origin of Cotton)—अपलैण्ड कपास *(Gossypium hirsutum;* 2n = 4x = 52) एक मुख्य उभयद्विगुणित (Amphidiploid) है। पुरानी दुनिया की कपास (Old world cotton) में लम्बे गुणसूत्रों के 13 युग्म (Pairs) होते हैं, जबकि अमेरिकन कपास में अपेक्षाकृत छोटे गुणसूत्रों के 13 युग्म होते हैं। नयी दुनिया की कपास में 13 छोटे एवं 13 लम्बे (कुल 26) गुणसूत्र युग्म पाये जाते हैं। **बील्ले** (J. O. Bisley) ने अमेरिकन कपास *(Gossypium raimondii;* 2n = 2x = 26) का पुरानी दुनिया की कपास *(Gossypium herbaceum;* 2n = 2x = 26) के बीच संकरण किया और प्राप्त F_1 संतति गुणसूत्र की संख्या को दुगुना करके उभयद्विगुणित कपास उत्पन्न की। इसका नयी दुनिया की कपास के साथ संकरण किया गया तो उर्वर (Fertile) संकर प्राप्त हुआ जिससे इस बात की पुष्टि होती है कि नयी दुनिया की चर्तुगुणित कपास *गौसिपियम हिर्सुटम (G. hirsutum)* की उत्पत्ति भूतकाल में दो द्विगुणित जातियों अर्थात् *गौसिपियम हर्बेसियम (G. herbaceum;* 2n = 26) तथा *गौ० रैमोण्डियाई (G. raimondii;* 2n = 26) से हुई होगी।

प्रश्न 34. उभयद्विगुणित ब्रैसिका स्पेसीज के विकास को समझाइये।
Describe the evolution of Amphidiploid *Brassica* species.

उत्तर—उभयद्विगुणित ब्रैसिका स्पेसीज का विकास (Evolution of Amphidiploid *Brassica* species)—ब्रैसिका की तीन द्विगुणित जनक स्पेसीजों के आपस में संकरण (Hybridization) से तीन उभयद्विगुणित (Amphidiploid) स्पेसीजों की उत्पत्ति हुई है जिसे नागाहारू यू (Nagaharu U) ने 1935 ई० में एक त्रिभुज के रूप में दर्शाया था, जिसको यू त्रिकोण (U's triangle) कहा जाता है। तीन द्विगुणित (Diploid) जनक स्पेसीज—ब्रैसिका नाइग्रा (*Brassica nigra;* 2n = 2x = 16), *ब्रैसिका कैम्पेस्ट्रिस* (*Brassica compestries;* 2n = 2x = 20) तथा ब्रैसिका ओलेरेसिया (*Brassica oleracea;* 2n = 2x = 18) हैं। उभयद्विगुणित ब्रैसिका जुंसिया (*Brassica juncea;* 2n = 4x = 36) की उत्पत्ति *ब्रै० नाइग्रा (B. nigra)* एवं *ब्रै० कैम्पेस्ट्रिस* के संकरण से, *ब्रैसिका नैपस* (*B. napius;* 2n = 4x = 38) की उत्पत्ति *ब्रै० ओलेरेसिया* एवं *ब्रै० कैम्पेस्ट्रिस* के संकरण से एवं *ब्रैसिका कैरिनाटा* (*B. carinata;* 2n = 4x = 34) का उद्गम *ब्रै० नाइग्रा* एवं *ब्रै० ओलेरेसिया* के संकरण के बाद गुणसूत्र द्विगुणन से हुई है। इस प्रकार उत्पन्न सभी उभयगुणित ब्रैसिका स्पेसीज परचर्तुगुणित (Allotetraploid) हैं और सभी उभयद्विगुणितों का द्विगुणित से वैज्ञानिकों द्वारा कृत्रिम संश्लेषण भी किया जा चुका।

प्रश्न 35. सरसों में प्रजनन के मुख्य उद्देश्य दीजिए।
Give the major objectives of breeding in Mustard.
(CSJM, 2011; BRAU, 2017)

उत्तर—उपज (Yield)—उपज के प्रमुख घटक लक्षण निम्नलिखित होते हैं : (1) प्रति पौधा प्राथमिक एवं द्वितीयक शाखाओं की संख्या, (2) प्रति पौधा सिलिक्वा (Siliquae = फलियों) की संख्या, (3) प्रति सिलिक्वा बीजों की संख्या तथा (4) 1,000 बीजों का भार।

गुणवत्ता (Quality)—प्रमुख गुणवत्ता लक्षण निम्नलिखित होते हैं : उच्च तेल अंश, निम्न इरूसिक अम्ल (Erucid acid) अंश एवं निम्न ग्लुकोसिनोलेट (Glucosinolate) अंश। कुछ 'शून्य' इरूसिक अम्ल एवं 'शून्य' ग्लुकोसिनोलेट लाइनों का विकास किया गया है।

रोग रोधिता (Disease Resistance)—*ब्रैसिका* स्पेसीज के प्रमुख रोग निम्नलिखित हैं : मृदुरोमिल आसिता (Downy mildew), *आल्टर्नेरिया* शीर्णता (Alternaria blight) एवं सफेद किट्ट (White rust); इनमें से *आल्टर्नेरिया* शीर्णता सबसे अधिक क्षतिकारी रोग है।

कीट रोधिता (Insect Resistance)—एफिड तोरिया एवं सरसों का सबसे प्रमुख नाशी कीट है। लेकिन इस कीट के लिये रोधिता का स्रोत उपलब्ध नहीं है।

पादप प्ररूप (Plant Type)—संहत शाखन (Compact branching) वाले पादप प्ररूप वांछनीय होते हैं।

विशरण रोधिता (Shattering Resistance)—कई किस्मों की फलियाँ या

सिलिक्वा विशरित होते हैं, जो कि अवांछनीय हैं। ब्रैसिका स्पेसीज की न विशरित होने वाली लाइनें अत्यधिक वांछनीय होती हैं।

प्रश्न 36. संकर धान के बीज उत्पादन को समझाइये।

Describe the Seed Production of Hybrid Rice.

उत्तर— संकर धान का बीज उत्पादन

(SEED PRODUCTION OF HYBRID RICE)

धान का संकर बीज उत्पादन तकनीक का विकास एवं उपयोग सर्वप्रथम चीन में प्रारम्भ हुआ है। भारत में भी इस दिशा में काम हो रहा है। संकर धान का बीज उत्पादन आनुवंशिक कोशिकाद्रव्यी नर बन्ध्यता का उपयोग करके किया जाता है, जिसके लिये नर बंध्य वंशक्रम (A), अनुरक्षक (B), तथा प्रत्यास्थापक वंशक्रम (R) की आवश्यकता होती है। प्रमाणित संकर बीज उत्पादन के लिये नर बंध्य वंशक्रम (A) को मादा जिस पर पीला टैग (Yellow tag) लगा होता है तथा प्रत्यास्थापक वंशक्रम (R) को नर जनक के रूप में जिस पर लाल टैग लगा होता है, प्रयोग किया जाता है।

(1) क्षेत्र तथा मौसम सम्बन्धी आवश्यकता—धान का बीज उत्पादन उन क्षेत्रों में किया जाना चाहिये, जहाँ पुष्प खिलने तथा पराग बनने के समय अनुकूलतम मौसम हो। क्षेत्र का औसत तापमान 24-28 से० तथा सापेक्षित आर्द्रता 70-80 प्रतिशत होनी चाहिये। दिन और रात के तापमान में 8-10° से० से अधिक नहीं होना चाहिये तथा साफ धूप खिलनी चाहिये। तापमान से अत्यधिक अन्तर, लगातार बारिश तथा तेज हवाएँ, पुष्पन, परागण तथा निषेचन के लिये हानिकारक है। अतः फसल का वृद्धि काल इस प्रकार समायोजित किया जाना चाहिये, जिससे पुष्पन के समय तापमान कम होना शुरू हो जाये।

(2) खेत का चयन—खेत धान के स्वैच्छिक उगे पौधों से मुक्त हो, मृदा उर्वर व खेत समतल हो तथा जल निकास की उचित व्यवस्था हो।

(3) पृथक्करण—धान के अन्य खेतों से जनकों के आधार बीज उत्पादन के लिये बीज फसल के खेत की दूरी 200 मीटर तथा प्रमाणित संकर बीज उत्पादन के लिये 100 मीटर होनी चाहिये।

(4) नर्सरी तैयार करना—नर्सरी की उचित तैयारी की जानी चाहिये और तैयारी करते समय उचित मात्रा में खाद एवं उर्वरक मिलायें, जिससे स्वस्थ तथा ओजपूर्ण पौद प्राप्त हो सके। नर्सरी में बुवाई का समय ऐसा रखा जाये जिससे फसल में पुष्पन उचित समय पर हो।

(5) रोपाई—जब पौद 20-25 दिन की हो जाये तो रोपाई कर देनी चाहिये। मादा जनक की पंक्तियों में पंक्ति से पंक्ति की दूरी 20 सेमी० तथा पौधे से पौधे की दूरी 10-15 सेमी० रखी जा सकती है, लेकिन नर जनक के लिये अंतरण कम (10 सेमी० × 10 सेमी०) रखा जा सकता है। एक स्थान पर दो पौध लगायी जाती हैं। पंक्तियों की दिशा वायु की दिशा के विपरीत रखी जाती है, जिससे परपरागण अधिक हो सके। नर तथा मादा पंक्तियों का अनुपात 1 : 6 अथवा 2 : 8 रखा जा

सकता है जिसके लिये बीज की मात्रा क्रमशः 10 व 25 किग्रा० तथा 10 व 30 किग्रा० रखी जाती है।

(6) उर्वरक—पोषक तत्त्वों की मात्रा मृदा परीक्षण के बाद निर्धारित की जाती है। 150 किग्रा० नत्रजन, 60 किग्रा० फॉस्फोरस तथा 50 किग्रा० पोटाश प्रति हेक्टेयर पर्याप्त है।

(7) जल प्रबन्ध—रोपाई के दूसरे दिन हल्की सिंचाई करनी चाहिये। यदि खेत की मिट्टी पानी से तर है तो खेत को पानी से पूरा भरने की आवश्यकता नहीं होती। पुष्पन के समय तापमान बढ़ने पर दिन में खेत में पानी भरकर रात में निकाल देना चाहिये। ऐसा करने से तापमान में कमी लायी जा सकती है।

(8) पुष्पन का एक समय करना—पराग अधिक समय तक मिलते रहें, इसके लिये नर जनक की मादा जनक के समयांतर बुवाइयाँ की जाती हैं। यूरिया (3 प्रतिशत घोल) का छिड़काव करके पुष्पन 2-3 दिन पहले कराया जा सकता है एवं खेत में पानी कम करके पुष्पन में कुछ देरी की जा सकती है।

(9) संपूरक परागण—कोशिकाद्रव्यी नर बंध्य किस्मों में बालियों का लगभग 1/3 भाग फ्लेग लीफ से अंदर रह जाता है। अतः पूरी बाली बाहर आ जाये, इसके लिये बालियाँ निकलने से 2-3 दिन पूर्व ऊपरी (फ्लेग लीफ सहित) पत्तियों का आधार या कुछ अधिक भाग काट दिया जाता है। जिब्रेलिक अम्ल का छिड़काव (50 ग्रा०/हे०) तीन बार बाँट कर (10 ग्रा०, 20 ग्रा० 20 ग्रा०) क्रमशः तीन अवस्थाओं (5%, 10% व 30% बाली निकलने) पर करने से भी पूरी बालियाँ बाहर निकल आती हैं। सुबह के समय प्रत्यारोपक जनक की पंक्तियों में बालियों के ऊपर से 30-30 मिनट के अन्तर पर कई बार रस्सी खींचने अथवा छड़ घुमाने से परपरागण में वृद्धि होती है।

(10) अवांछित पौधा निष्कासन—भिन्न तथा रोगग्रस्त पौधे पुष्पन से पूर्व तथा पुष्पन के समय नर तथा मादा जनक की पंक्तियों से निकाले जाते हैं। बीज जनक की पंक्तियों से पराग वितरकों को निकाला जाता है।

(11) कटाई—बीज जनक की पंक्तियों की कटाई से पूर्व नर जनक की पंक्तियों की कटाई कर ली जाती है, जिससे यांत्रिक मिश्रण का भय न रहे।

धान के संकर बीज का उत्पादन प्रकाश प्रभावित नर बंध्य किस्मों (Photo-sensitive genetic male sterile lines) का उपयोग करके भी किया जा सकता है, जिसके लिये कोई सामान्य किस्म प्रत्यारोपक का कार्य करती है। नर बंध्य वंशक्रम न मिलने पर रसायनों का प्रयोग करके नपुंसीकरण कराया जा सकता है।

प्रश्न 37. लवण सहनशीलता के लिये पादप प्रजनन को समझाइये।

Describe the breeding for salt tolerance.

उत्तर—लवणीय दशाओं के लिये प्रजनन (Breeding for saline conditions)—चावल में साधारंण (Moderate) लवण सहिष्णुता होती है तथापि लवणीय भूमियों में इसकी खेती की जाती है जिनमें औसत उपज बहुत कम होती है, अतः लवणीय अवस्थाओं के लिये अधिक उपज देने वाली किस्मों के प्रजनन की अत्यधिक आवश्यकता है। भारत के विभिन्न राज्यों में उगायी जाने वाली लवण सहिष्णु देशी किस्में निम्न हैं :

पश्चिमी बंगाल—दामोदर, गिटु, देशाल, नोनाबोखरा, नोनासेल, रूपसेल।
केरल—पोकाली, वाइटिला-1 ओरपन्डी ओर मुन्डाकन, चिरुविरिपु छोटुपोकाली
महाराष्ट्र—भुरारट, कालारता।
तमिलनाडु—PUR—1
आन्ध प्रदेश—MCM—1, MCM—2

CRRI तथा दूसरे अनुसंधान केन्द्रों पर देशी किस्मों का अधिक उपज देने वाली किस्मों के साथ संकरण तथा वरण से नई किस्में विकसित करने का कार्यक्रम चल रही है। गुटु, दामोदर तथा ओरमुन्डाकन S. R. किस्मों का H. Y. V. (High Yielding Varieties) जैसे IR 8, पंकज इत्यादि के साथ संकरण किया गया है। S. R. R. S. कैनिंग (Saline Rice Research Station Canning) में इस प्रकार के संकरणों से IR. 20, IR. 24, IR. 2153—4 इत्यादि अधिक उपजाऊ वंशक्रमों (Lines) का चयन किया गया है। अब लवण सहिष्णु किस्मों पर भौतिक तथा रासायनिक उत्परिवर्तक के प्रचरण से नये उत्परेवर्तक उत्पन्न करने का कार्यक्रम चालू किया गया है।

प्रश्न 38. शुद्ध वंशक्रमों में आनुवंशिक विभिन्नता को समझाइये।
Describe the Genetic Variation in Pure Lines.

उत्तर— शुद्ध वंशक्रमों में आनुवंशिक विभिन्नता
(GENETIC VARIATION IN PURE LINES)

कोई भी शुद्ध वंशक्रम किस्म कितने समय तक शुद्ध रहती है, यह उस फसल विशेष, उसकी आनुवंशिक स्थिरता (Genetic stability), प्राकृतिक परपरागण की मात्रा तथा उत्पन्न करते समय की सावधानी आदि पर निर्भर होता है। एक शुद्ध वंशक्रम में प्रायः निन तीन कारणों से आनुवंशिक विभिन्नता उत्पन्न हो सकती है—

(अ) भौतिक मेश्रण द्वारा (Mechanical mixture)—संयुक्त कटाई (Combine harvesting) तथा बीज शौधित्रक उपकरण (Seed cleaning equipment) आदि भौतिक मिश्रणों केमुख्य साधन होते हैं। इसके अतिरिक्त जब खेतों में पास-पास दो अथवा अधिक प्रभेद एक ही फसल की उगाई जाती हैं तो प्राकृतिक परपरागण भी कुछ सीमा तक हो सकता है जिससे भी विचरण हो सकता है।

(ब) उत्पगिर्तन द्वारा (Mutations)—सभी फसलों में प्राकृतिक रूप से उत्परिवर्तन होते रहते हैं और क्योंकि उत्परिवर्तन स्थायी होते हैं अतः उनसे भी विशुद्ध वंशक्रमों में विचरण होते हैं।

(स) आनुवंशिक स्थिरता (Genetic stability)—आनुवंशिक स्थिरता अलग-अलग किस्मों में भिन्न-भिन्न होती है। कुछ किस्में बहुत दिनों तक स्थिर रहती है और कुछ में बहुत शीघ्र विचरण होते रहते हैं।

(द) संकरण द्वारा (Hybridization)—संकरण द्वारा भी स्वपरागित फसलों में विभिन्नता उत्पन्न होती है।

शुद्ध वंशक्रम चन द्वारा सुधार (Improvement by Pure Line Selection)

भारत में हुत से अनुसंधान केन्द्रों पर शुद्ध वंशक्रम चयन द्वारा फसलों में

सुधार के प्रयत्न जारी हैं; जैसे—हैवारी, गन्तरु अनाकापल्ले, कोईलपट्टी, पट्ठालम्बी तथा मदूसुराई आदि। यहाँ पर बहुत-सी फसलों की अच्छी-अच्छी किस्में शुद्ध वंशक्रम द्वारा निकाली गई हैं; जैसे—चावल (Adt. 1, 3, 10, 21; Ptb. 1, 2, 7, 9; Co. 4, 5, 6, 10 etc); कपास (Co2); बाजरा (P. T. 248 and 2229, M. C. 105 and 292) रागी, (Co. 1, 2, 4, A K. P. 5, 7)।

उपरोक्त के अतिरिक्त गेहूँ की, NP 4, NP 6, NP 12, Pb 9D, K 13 K 54, K 67 तथा K 68, आदि; मूँगफली की A. H. HG 8, T 18 तथा K. T. B. 23 व KTP 24 आदि तथा मूँग की T. B. 1 किस्में भी शुद्ध वंशक्रम चयन द्वारा निकाली गई हैं।

प्रश्न 39. स्व तथा पर-परागित जनसंख्याओं के संगठन को लिखिए।

Write the composition of Self and Cross-pollinated Populations.

उत्तर—स्व तथा पर-परागित जनसंख्याओं का संगठन (COMPOSITION OF SELF AND CROSS-POLLINATED POPULATIONS)

किसी भी पादप प्रजनक को किसी मिश्रित जनसंख्या (Mixed population) में 'चयन' का परिणाम मालूम करने के लिये पौधों की आनुवंशिक प्रकृति का ज्ञान आवश्यक होता है क्योंकि स्वपरागण वाले पौधे **समयुग्मजी** (Homozygous) होते हैं तथा परपरागण वाले **विषमयुग्मजी** (Heterozygous)। स्वपरागण वाले पौधे समयुग्मजी इसलिये होते हैं कि (1) समयुग्मजी जीन युग्म (AA or aa) स्वपरागण से समयुग्मजी ही रहते हैं, (2) विषमयुग्मजी जीन युग्म (Aa) स्वपरागण से विषमयुग्मजी तथा समयुग्मजी पौधे बराबर संख्या में उत्पन्न करता है। स्वपरागण से प्रत्येक पीढ़ी में विषमयुग्मजता घटकर आधी हो जाती है।

स्पष्ट है कि कई बार लगातार स्वपरागण से विषमयुग्मजी पौधों का अनुपात बहुत कम हो जाता है तथा एक स्थिति ऐसी आती है जब जनसंख्या प्रयोगात्मक रूप से समयुग्मजी हो जाती है परन्तु कभी भी सैद्धान्तिक रूप से (Theoretically) पूर्ण समयुग्मजता (Complete homozygosity) नहीं आ पाती है। प्रायः 8-10 पीढ़ियों तक लगातार परागण से जनसंख्या समयुग्मजी हो जाती है।

वास्तव में स्वपरागण वाली मिश्रित जनसंख्या समयुग्मजी आनुवंशिक रूपों (Homozygous genotypes) का एक मिश्रण होता है। स्वपरागण वाली समयुग्मजी जनसंख्या में विषमयुग्मजी पौधे दो प्रकार से उत्पन्न हो सकते हैं—

(1) प्राकृतिक परपरागण द्वारा तथा (2) उत्परिवर्तन (Mutation) द्वारा।

प्राकृतिक परपरागण वाली फसलों में प्रति पीढ़ी में परपरागण के कारण से नई-नई आनुवंशिक रूपों के मिश्रण से प्रत्येक पौधा अत्यधिक विषमयुग्मजी होता है। परपरागण वाली फसलों में प्रायः स्वपरागण बहुत ही कम होता है और जब तक परागण को नियन्त्रित नहीं किया जाता है तब तक उसका कोई प्रभाव नहीं होता है तथा ऐसी फसलों में स्वपरागण करने से ओज (Vigour) तथा उत्पादकता (Productivity) कम हो जाती है।

प्रश्न 40. कीट रोधिता प्रजनन में समस्याएँ लिखिए।
Write the Problems in Insect Resistance Breeding.

उत्तर— **कीट रोधिता प्रजनन में समस्याएँ**
(PROBLEMS IN INSECT RESISTANCE BREEDING)

(1) कभी-कभी एक कीट के लिये रोधिता प्रजनन करने पर किसी अन्य कीट के लिये ग्राहिता (Susceptibility) पौधों में उत्पन्न हो जाती है।

(2) कीट रोधिता प्रजनन कार्य में काफी समय एवं धन लगता है। कई बार धन अभाव आदि के कारण कार्य क्रम बीच में ही बन्द कर देना पड़ता है।

(3) कई बार रोधिता जीन जंगली जातियों में ही उपलब्ध होता है। ऐसे रोधी जीन का कभी-कभी उत्पादों के गुण पर भी खराब प्रभाव पड़ने के कारण, रोधिता के लिये पादप प्रजनन को काफी कठिनाई एवं समस्यायें आती हैं।

(4) कीट रोधिता प्रजनन काफी मुश्किल, खर्चीला, धन एवं समय लेने वाला है लेकिन यह कीट रोधिता प्रजनन की आधारभूत आवश्यकतायें हैं।

उपलब्धियाँ—आज सभी देशों में कीट रोधी प्रजनन पर कार्य चल रहा है और बहुत-सी रोधी किस्म विकसित की हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका (USA) में गेहूँ की 25 किस्में हेसियन मक्खीरोधी, जौ की किस्म 'बिल' हरा बग रोधी; ऐल्फाल्फा की 'कोडी' तथा मोआपा एवं मक्का की किस्में चित्तीदार एल्फाल्फा एफिड रोधी हैं।

भारतवर्ष में विकसित कपास की G-227, DS 1, LD 327, MCU 7, H 777, Lh 900, LR 516, लोहित शारदा, अवाधिता आदि किस्में गोलक शलभ सहिष्णु हैं। कपास की ही B 1001, SRT-1 खंडवा 2, DHY 286, PKV HY 2 आदि किस्में जैसिड रोधी हैं।

प्रश्न 41. संश्लिष्ट प्रभेद क्या है ?
What is Synthetic Varieties ?

उत्तर— **संश्लिष्ट प्रभेद या किस्में**
(SYNTHETIC VARIETIES)

परपरागित फसलों में सुधार के लिये मुख्यतः संकर ओज का उपयोग किया जाता है। परन्तु संकर ओज का प्रत्यक्ष उपयोग संकर किस्मों के रूप में केवल उन फसलों में ही किया जा सकता है जिनमें या तो स्वपरागित और परपरागित बीज का उत्पादन आसानी से बहुत कम खर्च में किया जा सकता है; जैसे—मक्का में अथवा जिनमें कोशिका द्रव्यात्मक आनुवंशिक नरबन्ध्यता (Cytoplasmic genetic male sterility) हो। परन्तु बहुत-सी परपरागित फसलों में नियन्त्रित संकर बीज का उत्पादन वाणिज्य स्तर (Commercial scale) पर करना या तो सम्भव नहीं है अथवा बहुत अधिक मंहगा होता है। अतः ऐसी फसलों में संकर ओज का उपयोग संश्लिष्ट किस्मों अथवा संकुल किस्मों के रूप में किया जाता है। मक्का में भी उन स्थानों पर संश्लिष्ट किस्में, संकर किस्मों की अपेक्षा अधिक उपयोगी होती हैं जहाँ पर (1) संकर किस्मों की उपज, स्वतन्त्र परागित किस्मों से निश्चित रूप से अधिक नहीं होती है।

(2) जहाँ की जलवायु सम्बन्धी वातावरणीय दशायें अस्थिर होती हैं क्योंकि ऐसे स्थानों पर द्विसंकरण की अपेक्षा संश्लिष्ट किस्मों में अधिक आनुवंशिक विविधता होने के कारण अनुकूलन क्षमता (Adaptability) अधिक होती है तथा (3) जहाँ पर मक्का बहुत ही कम क्षेत्र में उगाई जाती है।

संश्लिष्ट किस्मों के उत्पादन का सुझाव हेज तथा गार्बर (1919) ने दिया था— **"संश्लिष्ट किस्म, परपरागित फसल की ऐसी किस्म होती है जो कई एक अधिक संयोग-क्षमता वाली आनुवंशिक रूपों में सभी सम्भव संकरण करके बनायी जाती है तथा बाद में स्वतन्त्र-परागण द्वारा बनाये रखी जाती है।"** संश्लिष्ट किस्म के निर्माण हेतु जिन आनुवंशिक रूपों का उपयोग करते हैं वे अन्तः प्रजात वंशक्रम, कृत्तक, पुन्ज चयन पौधे अथवा अन्य प्रकार की पादप सामग्री हो सकती हैं। विशेष बात यह होती है कि जिन आनुवंशिक रूपों का प्रयोग करते हैं उनकी सामान्य संयोग क्षमता पूर्व परीक्षित होती है तथा उनको भविष्य में वैसी ही नई संकुल किस्म बनाने के लिये सुरक्षित रखा जाता है।

संश्लिष्ट किस्मों के प्रदर्शन को प्रभावित करने वाले कारक (Factors affecting the performance of synthetic varieties)

एकल संकर (F_1 पौधों से स्वतन्त्र परागण द्वारा उत्पन्न F_2 पौधों की पित्रों की तुलना में उत्तमता (Superiority or hybrid vigour) F_1 की अपेक्षा आधी (1/2) अथवा कम हो जाती है और यदि दो से अधिक पित्र किसी संकर (संश्लिष्ट) के उत्पादन में भाग लेते हैं तो F_2 सन्तति में पित्रों की तुलना में उत्तमता F_1 की अपेक्षा 1/3, 1/4.....1/n कम हो जाती है तथा **हाडी-वेनबर्ग** नियम के अनुसार भावी पीढ़ियों (Generations) में संकर ओज में ह्रास होता है। इसी आधार पर **सीवाल राईट** (1922) ने संश्लिष्ट-2 की उपज का अनुमान लगाने के लिये एक सूत्र दिया जो निम्न प्रकार से है—

$$Syn_2 = Syn_1 - [Syn_1 - (Syn_0)/N]$$

जबकि Syn_2 = संश्लिष्ट-2 की अनुमानित उपज।

Syn_1 = सभी एकल संकरों की औसत उपज।

Syn_0 = संकरों के अनुसार पित्र आनुवंशिक रूपों की औसत उपज।

N = संकरों के अनुसार पित्र आनुवंशिक रूपों की संख्या।

अतः प्रगत संश्लिष्ट किस्मों का प्रदर्शन निम्न बातों पर निर्भर होगा—

1. सम्बन्धित पित्र आनुवंशिक रूपों की सख्या।
2. इन आनुवंशिक रूपों का औसत प्रदर्शन।
3. इन आनुवंशिक रूपों से उत्पन्न सभी सम्भव संकरों का औसत प्रदर्शन।

अतः किसी संश्लिष्ट किस्म की उपज तीन प्रकार से बढ़ा सकते हैं—(अ) पित्र वंशक्रमों की संख्या बढ़ाकर, (ब) F_1 संकरों की औसत उपज बढ़ाकर तथा (स) पित्र वंशक्रमों की उपज बढ़ाकर। पहले प्रकार से उपज बढ़ाने में मुख्य कठिनाई यह है कि 6 तक संख्या बढ़ाने से उपज बढ़ती है परन्तु उससे अधिक संख्या बढ़ाने से उपज

कम हो जाती है क्योंकि पित्रों की संख्या बढ़ाने से F_1 की औसत उपज कम होने लगती है। अतः तीसरी विधि अर्थात् पित्रों की उपज बढ़ाकर संश्लिष्ट की उपज बढ़ाना आसान है। S_1 वंशक्रमों से उत्पन्न संश्लिष्ट अधिक प्रगत अन्तः प्रजातों से उत्पन्न संश्लिष्टों से अधिक उपज देती हैं, क्योंकि प्रगत अन्तः प्रजातों से S_1 वंशक्रमों की उपज अधिक होती है।

संश्लिष्ट किस्म का प्रयोग चारे की फसलों, घासों, शकरकन्द, मक्का, बाजरा तथा कुछ अन्य परपरागित फसलों में सुधार के लिये किया जाता है।

प्रश्न 42. अन्तःप्रजनन के प्रभाव लिखिए।

Write the effects of Inbreeding. **(CSJM, 2011)**

उत्तर— अन्तःप्रजनन के प्रभाव

(EFFECTS OF INBREEDING)

1. अन्तःप्रजनन से पौधों का ओज (Vigour) घट जाने के कारण पौधे कमजोर व छोटे हो जाते हैं।

2. अन्तःप्रजनन से पौधों की जनन क्षमता घट जाती है जिससे पौधों में बहुत कम बीज बनते हैं, उनका अनुरक्षण (Maintenance) करना भी मुश्किल होता है।

3. अन्तःप्रजनन से घातक (Lethal) व अघातक (Sublethal) लक्षणों वाले पौधे उत्पन्न होते हैं।

4. अन्तःप्रजनन से समयुग्मजता (Homozygosity) में वृद्धि होती है तथा विषमयुग्मजता प्रत्येक पीढ़ी में 50% घट जाती है। केवल 7-8 पीढ़ियों में स्वनिषेचन करने पर 99% से अधिक समयुग्मजता हो जाती है, जिसके बाद किसी भी एकल पादप संतति में बहुत कम विविधता (Variation) पायी जाती है। इन लाइनों को अन्तःप्रजात क्रम (Inbred lines) कहते हैं।

5. अन्तःप्रजनन में समष्टि कई सुस्पष्ट अभिलक्षणों वाली लाइनों में बँट जाती हैं। ये लाइनें विभिन्न जीन प्ररूपों के कारण विभिन्न लक्षणप्ररूपों वाली होने के कारण समष्टि का प्रसरण (Population variation) काफी बढ़ जाता है।

6. अन्तःप्रजनन के कारण कुछ फसलों की उपज में काफी कमी हो जाती है और यह कमी कभी-कभी मुक्त परागित एवं परपरागित फसलों में एक चौथाई तक पायी जाती है। केवल कुछ फसलों में अन्तःप्रजनन से ओज व उपज (Vigour and yield) में बहुत कम या कुछ भी कमी नहीं होती है।

प्रश्न 43. कृत्तक चयन की सीमायें लिखिए।

Write the limitations of Clonal selection.

उत्तर— कृत्तक चयन की सीमायें

(LIMITATIONS OF CLONAL SELECTION)

1. नयी विविधता उत्पन्न करने में असमर्थ—कृत्तक चयन में केवल पहले से उपस्थित कृत्तकों में से ही चयन किया जा सकता है तथा कोई नयी कृत्तक उत्पन्न नहीं की जा सकती है। यदि कोई नयी कृत्तक उत्पन्न करना चाहते हैं तो उसके लिये उत्परिवर्तन अथवा संकरण का सहारा लेना पड़ेगा।

2. कम गुणन अनुपात (Low multiplication ratio)—कृत्तक चयन में प्रजनन की वानस्पतिक विधि होने के कारण एक बार में सन्तति की केवल एक सीमित संख्या ही उत्पन्न की जा सकती है जबकि लैंगिक जनन में अपेक्षाकृत बहुत अधिक सन्तति उत्पन्न की जा सकती है।

3. यह विधि केवल वानस्पतिक जनन वाली फसलों में ही प्रयोग की जा सकती है।

प्रश्न 44. गेहूँ की पुष्प जैविकी का वर्णन कीजिए।

Give the floral biology of Wheat. **(CSJM, 2011)**

उत्तर—पुष्प जैविकी (Floral biology)—गेहूँ की बुवाई के 2-2$^1/_2$ महीने बाद पुष्प बनने शुरू हो जाते हैं। सबसे पहले पुष्पन की क्रिया बाल के मध्य भाग की स्पाइकिकाओं में आरम्भ होती है। फिर ऊपर-नीचे दोनों तरफ बढ़ने लगती है। पुष्पन की क्रिया 2-5 दिन तक चलती है। प्रत्येक स्पाइकिका में आधार की ओर का पुष्प पहले खिलता है। उसके बाद क्रम से ऊपर के पुष्प खिलते हैं। सामान्यतः सबसे अधिक प्रफुल्लन सवेरे 8-10 बजे के मध्य होता है। पुष्पों का खिलना लाडिक्यूलों की स्फीति पर निर्भर होता है। पुष्पों के खिलने के समय लाडिक्यूल वातावरण से नमी सोखकर फूल तथा फैल जाता है। फलस्वरूप लेमा और पेलिया और तुषनियत्र खुल जाते हैं। पुष्प लगभग आधा घण्टा खिले रहते हैं।

प्रश्न 45. पुंजविधि के गुण समझाइये।

Describe the merits of Bulk method.

उत्तर—पुंजविधि के गुण (Merits of Bulk method)—1. यह विधि सरल, सुविधाजनक और कम खर्चीली है।

2. Disease resistance इत्यादि लक्षणों के लिये Bulk generations में Artificial selection किया जा सकता है। इसके साथ ही, इनके वरण के लिये उचित वातावरण मिलने तक Population को Bulk के रूप में उगाया जा सकता है।

3. केवल इस विधि में Natural selection का लाभ उठाया जा सकता है। इसके लिये F20-F30 तक Population को Bulk में उगाना पड़ता है।

4. Bulk generations में Breeder को कोई विशेष ध्यान और समय नहीं देना पड़ता है।

5. वंशावली रिकार्ड रखने का श्रम नहीं करना पड़ता है।

6. वांछनीय लक्षणों, जैसे जल्दी पकना, बड़े बीज इत्यादि, के लिये Bulk generations में भी Selection किया जा सकता है।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न
(LONG ANSWER TYPE QUESTIONS)

प्रश्न 1. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखिए :

(i) संकर ज्वार का बीज उत्पादन

(ii) बाजरा का बीज उत्पादन

(iii) संकर बाजरा का बीज उत्पादन
(iv) कपास का बीज उत्पादन
(v) संकर कपास का बीज उत्पादन
Write short notes on the following :
(i) Seed Production of Hybrid Sorghum **(CSJM, 2015)**
(ii) Seed Production of Bajara **(CSJM, 2015)**
(iii) Seed Production of Hybrid Bajara **(CSJM, 2015)**
(iv) Seed Production of Cotton
(v) Seed Production of Hybrid Cotton

अथवा

कपास में संकर बीज के उत्पादन को समझाइये।
Explain the Hybrid seed production in Cotton.

उत्तर-- (i) संकर ज्वार का बीज उत्पादन

(SEED PRODUCTION OF HYBRID SORGHUM)

संकर ज्वार का बीज उत्पादन आनुवंशिक व कोशिकाद्रव्यी नर बन्ध्यता का उपयोग करके किया जाता है। प्रमाणित बीज उत्पादन में नरबन्ध्य (Male sterile) वंशक्रम (A) तथा प्रत्यास्थापक (Restorer) वंशक्रम (R) की आवश्यकता होती है। प्रत्यास्थापक वंशक्रम उस अन्तःप्रजात वंशक्रम को कहते हैं, जो नरबन्ध्य विभेद (Strain) से संकरण कर उसमें पुनः जनन क्षमता उत्पन्न कर देता है। अतएव प्रत्यास्थापक वंशक्रम को नर जनक के रूप में प्रयोग करते हैं।

(1) बीज स्रोत—नरबन्ध्य वंशक्रम (A) लाल टैग युक्त तथा प्रत्यास्थापक वंशक्रम (R) पीले टैग युक्त को नर जनक के रूप में आधार बीज प्रमाणीकरण संस्था के मान्य स्रोत से प्राप्त किया जाता है। बोने से पहले थैलों पर लगे लेबिल से किस्म व शुद्धता की जाँच कर ली जाती है और बुवाई के बाद लेबिल व टैग संभालकर रखे जाते हैं।

(2) पृथक्करण—बीज फसल के लिये सामान्य किस्मों से 200 मी० तथा बनचरी के खेतों से 400 मी० पृथक्करण दूरी आवश्यक है।

(3) बुवाई—संकर बीज उत्पादन में बीज दर मादा जनक (नर बन्ध्य वंशक्रम A) तथा नर जनक प्रत्यास्थापक वंशक्रम, R) की पंक्तियों के अनुपात (4 : 2) में क्रमशः 8 व 4 किग्रा० प्रति हेक्टेयर रखी जाती है। लगातार पराग मिलता रहे इसके लिये नर जनक की समयान्तर बुवाइयाँ (Periodical sowings) 8-10 दिन के अन्तर पर की जाती है। चारों ओर नर जनक की 4-6 सीमान्त पंक्तियाँ बोयी जाती हैं।

(4) अवांछित पौधा निष्कासन—नर जनक की पंक्तियों में भिन्न पौधों को व मादा जनक की पंक्तियों में उगे नर जनक के पौधों को भी पराग झड़ने से पूर्व निकाल देना चाहिये।

(5) कटाई—संकर बीज उत्पादन में नर जनक की पंक्तियाँ पहले काटकर निकाल दी जाती हैं और मादा जनक की कतारों से ही बीज संग्रहित किया जाता है।

(ii) बाजरा का बीज उत्पादन
(SEED PRODUCTION OF BAJARA)

(1) बीज स्रोत—बाजरा *(Pennisetum americanum)* का आधार बीज उत्पादन के लिये प्रजनक या आधार बीज तथा प्रमाणित बीज उत्पादन के लिये आधार बीज मान्य स्रोत से प्राप्त किया जाता है।

(2) खेत का चयन—चयनित खेत में यदि पिछले मौसम में बाजरा की फसल उगायी गई थी तो बुवाई से 3-4 सप्ताह पूर्व सिंचाई करके स्वैच्छिक पौधों का अंकुरण कराकर जुताई करके नष्ट कर दिया जाता है और पिछली फसल में यदि डाउनी मिल्ड्यू, ग्रीन ईयर व अर्गट रोग प्रमाणीकरण स्तर से अधिक थे, तो फिर ऐसे खेत का चयन नहीं किया जा सकता। साथ ही खेत में जल निकास का उचित प्रबन्ध होना भी आवश्यक है।

(3) पृथक्करण—बाजरा परपरागित फसल है। अतः बीज फसल की उसी किस्म के अन्य खेतों से दूरी, जो शुद्धता के प्रमाणीकरण मानकों के अनुरूप न हों, 200 मी० व अन्य खेतों की दूरी 100 मी० होनी आवश्यक है।

(4) बुवाई—खेत की एक बार मिट्टी पलटने वाले हल से जुताई करने के बाद 2-3 बार हैरा चलाकर मिट्टी और पाटा लगाकर भूमि समतल कर लेनी चाहिये। उत्तर भारत में बाजरा खरीफ की फसल है, जहाँ इसकी बुवाई का समय मध्य जुलाई है, परन्तु दक्षिणी भारत में बाजरा कई बार बोया जाता है। बुवाई का समय ऐसा रखना चाहिये कि कटाई के समय वर्षा की सम्भावना न हो। बुवाई में पंक्ति से पंक्ति की दूरी 50 सेमी०, पौधे से पौधे की दूरी 20 सेमी० तथा बीज की गहराई 2.5 सेमी० रखी जाती है। 3.0-3.5 किग्रा० बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होता है। जब बीज की कमी हो अथवा खेत देर से खाली हो रहा हो तो बाजरे की बीज फसल की रोपाई (बीज दर 1 किग्रा०/हे०) भी की जा सकती है।

(5) उर्वरक—बाजरे के लिये 100 किग्रा० नत्रजन, 50 किग्रा० फॉस्फोरस तथा 50 किग्रा० पोटाश प्रति हेक्टेयर पर्याप्त है। नत्रजन की एक तिहाई तथा फॉस्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के समय तथा नत्रजन की शेष मात्रा दो बार (20-25 दिन बाद तथा 40-45 दिन बाद) बाँट कर दी जानी चाहिये।

(6) सिंचाई—मृदा में पर्याप्त नमी बनाये रखने के लिये आवश्यकतानुसार सिंचाई करनी चाहिये और साथ ही जल निकास का भी उचित प्रबन्ध होना चाहिये।

(7) फसल सुरक्षा—

(क) खरपतवार नियंत्रण—खेत में 2-3 बार निराई-गुड़ाई करके अथवा पंक्तियों के मध्य कल्टीवेटर चलाकर खरपतवार नियंत्रण हो जाता है। बुवाई के एक दम बाद 1 किग्रा० एट्राजीन प्रति हेक्टेयर प्रयोग करने से भी खरपतवार नियंत्रित रहते हैं।

(ख) रोग नियंत्रण—खेत की गर्मी में गहरी जुताई करने उपचारित बीज (0.5 प्रतिशत एग्रोसन जी० एन० से) बोने व उचित फसल चक्र अपनाने से रोगों से बचाव हो जाता है। हरी बाली रोग, कंड रोग व अर्गट रोग से ग्रसित पौधों को उखाड़कर जला या दबा देना ही एकमात्र निदान है। हरी बाली रोग से बचाने के लिये डाइथेन

जेड़, 78 का 2.5 किग्रा० प्रति हेक्टेयर की दर से (100 ली० पानी में घोलकर) छिड़काव करें जो 10 दिन बाद दोहराया जाये।

(ग) कीट नियंत्रण—जहाँ दीमक का प्रकोप होता हो, खेत में बुवाई से पूर्व 10 प्रतिशत बी० एच० सी० 25 किग्रा० प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिये। तना मक्खी के लिये 15 किग्रा०/हे० थिमेट का प्रयोग बुवाई के समय करें व तना बेधक की रोकथाम के लिये मोनोक्रोटोफॉस (0.04 प्रतिशत) का छिड़काव करना चाहिये।

(8) अवांछनीय पौधों को निकालना—बीज फसल से सभी अवांछनीय पौधों को दो बार (पुष्पन तथा परिपक्व अवस्था) निकालना चाहिये, जिन्हें कल्ले निकलने के ढंग, ऊँचाई, पुष्पन अवधि, तना, पत्ती, डंठल, फूल व दाने के लक्षणों के आधार पर पहचाना जाता है। साथ ही रोगग्रस्त पौधों को भी उखाड़कर जला या दबा देना चाहिये।

(9) कटाई, गहाई आदि—उचित समय पर फसल की कटाई करके संक्रमित बालियाँ निकाल दी जाती हैं और बीज निकालकर, सुखाकर भंडारित किये जाते हैं।

(iii) संकर बाजरा का बीज उत्पादन
(SEED PRODUCTION OF HYBRID BAJARA)

संकर बाजरा का बीज उत्पादन भी संकर ज्वार की भाँति आनुवंशिक तथा कोशिकाद्रव्यी नर बंध्यता का उपयोग करके किया जाता है। प्रमाणित बीज उत्पादन में नर बंध्य वंशक्रम (A) तथा प्रत्यास्थापक वंशक्रम (R) की आवश्यकता होती है। नर बंध्य वंशक्रम को मादा पीला टैग युक्त तथा प्रत्यास्थापक वंशक्रम को नर जनक के रूप में प्रयुक्त किया जाता है जिस पर लाल टैग लगा होता है।

(1) बीज स्रोत—संकर बाजरा के बीज उत्पादन के लिये नर बंध्य वंशक्रम (मादा जनक) तथा प्रत्यास्थापक वंशक्रम (नर जनक) का आधार बीज किसी मान्य स्रोत से प्राप्त किया जाता है।

(2) पृथक्करण—संकर बाजरा उत्पादन में बीज फसल की अन्य बाजरा के खेतों से 200 मी० दूरी पर्याप्त है।

(3) बुवाई—बुवाई हेतु मादा जनक (नर बंध्य वंशक्रम, A) तथा नर जनक (प्रत्यास्थापक वंशक्रम, R) की आवश्यकता होती है, जिनकी बुवाई 4 : 2 के अनुपात में (4 पंक्तियाँ मादा जनक व 2 पंक्तियाँ नर जनक) की जाती हैं। पहले मादा जनक की पंक्तियों की बुवाई की जाती है, जिसके पूरा होने के बाद नर जनक की बुवाई की जाती है। नर जनक की पंक्तियों को झंडी आदि लगाकर चिन्हांकित कर दिया जाता है। खेत के चारों ओर नर जनक की 8 सीमान्त पंक्तियाँ बोयी जाती हैं। बीज की मात्रा मादा जनक के लिये 1.5 किग्रा तथा नर जनक के लिये 0.5 किग्रा० प्रति हेक्टेयर रखी जाती है। लगातार पराग मिलता रहे, इसके लिये नर जनक की समयान्तर पर बुवाइयाँ की जाती हैं।

(4) अवांछित पौधों को निकालना—बीज फसल से सभी भिन्न पौधों व रोगग्रस्त पौधों को पुष्पन अवस्था से पूर्व निकालना प्रारम्भ कर देना चाहिये। नर जनक की पंक्तियों से सभी भिन्न पौधों तथा मादा जनक की पंक्तियों से नर जनक के पौधों को

पराग झड़ने से पूर्व निकाल देना चाहिये। शेष बचे भिन्न पौधों की कटाई से पूर्व बालियों के लक्षण के आधार पर पहचान कर निकाल देना चाहिये।

(5) कटाई, गहाई आदि—नर जनक की पंक्तियों के पौधों को पुष्पन अवधि के बाद कभी भी काटा जा सकता है। मादा जनक की पंक्तियों को पकने पर कटाई कर बीज संग्रहित कर लिया जाता है।

(iv) कपास का बीज उत्पादन
(SEED PRODUCTION OF COTTON)

(1) बीज स्रोत—कपास *(Gossypium* spp.*)* आधार बीज उत्पादन के लिये किसी मान्य स्रोत से प्रजनक या आधार बीज तथा प्रमाणित बीज उत्पादन के लिये आधार बीज प्राप्त करना चाहिये। बीज थैलों से किस्म की जाँच कर लेनी चाहिये और टैग व लेबिल संभालकर रखने चाहिये।

(2) खेत का चयन—चयनित खेत कपास के स्वैच्छिक उगे पौधों से मुक्त हो। भूमि की उर्वराशक्ति व जलधारण शक्ति अच्छी हो। काली व बलुई दोमट मृदा उत्तम रहती है। खेत में जल निकास का उचित प्रबन्ध हो।

(3) पृथक्करण—कपास में 10-15 प्रतिशत परपरागण होता है। अतः आधार बीज उत्पादन के लिये 50 मी० व प्रमाणित बीज के लिये 30 मी० दूरी आवश्यक है।

(4) खेत की तैयारी—एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करके 2 बार हैरो चलाकर मिट्टी भुरभुरी और पाटा लगाकर समतल कर ली जाती है।

(5) बुवाई—उत्तरी क्षेत्रों में सिंचाई की सुविधा होने पर बुवाई अप्रैल-मई में और सिंचाई की सुविधा न होने पर जून-जुलाई में की जाती है, लेकिन दक्षिणी भारत में बुवाई साल भर की जाती है। आकार में बड़े व भारी बीजों का प्रयोग करना चाहिये। बीज कीट व रोगरहित हों। पंक्तियों की दूरी किस्म के अनुसार 60-90 सेमी० तथा पौधे से पौधे की दूरी 30-45 सेमी० रखी जाती है। एक स्थान पर 3-4 बीज बोये जाते हैं। 3-4 सप्ताह बाद विरल करके एक स्थान पर एक ही पौधों रखा जाता है। बीज की मात्रा प्रति हेक्टेयर 15-20 किग्रा० रखी जाती है। बीजों को अलग करने के लिये मिट्टी और गोबर के मिश्रण से मसल लिया जाता है।

(6) उर्वरक—असिंचित भूमि में कपास की बीज फसल लेने के लिये 25 किग्रा० नत्रजन 20 किग्रा० फॉस्फोरस तथा 80 किलोग्राम पोटाश प्रति हेक्टेयर देना चाहिये। सिंचित भूमि में इनकी दोगुनी मात्राएँ दी जायें। यदि गोबर की खाद दी जा सके तो अच्छा है। फॉस्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा तथा नत्रजन की आधा मात्रा बुवाई से पूर्व तथा नत्रजन की शेष मात्रा कलियाँ निकलने से पहले देनी चाहिये।

(7) सिंचाई—सिंचाई की संख्या वर्षा एवं भूमि की किस्म पर निर्भर करती है। सामान्य वर्षा की स्थिति में 2-3 सिंचाइयों की आवश्यकता होती है।

(8) फसल सुरक्षा—

(क) खरपतवार नियंत्रण—खरपतवार नियंत्रण के लिये दो बार निराई-गुड़ाई की आवश्यकता होती है। दक्षिणी भारत के असिंचित क्षेत्रों में खरपतवार नियंत्रण के साथ-साथ नमी बनाये रखना भी आवश्यक है। अतः वहाँ 4-5 बार निराई की

आवश्यकता होती है। बुवाई के समय 0.75 किग्रा० ट्रेफ्लान (1000 ली० पानी में घोल) प्रति हेक्टेयर की दर से भूमि में मिलाने से भी खरपतवार नियंत्रण हो जाता है।

(ख) रोग नियंत्रण—उकटा तथा जड़ विगलन कपास के प्रमुख रोग हैं। इनसे बचाव के लिये उपचारित बीज (2.5 ग्राम सेरेसान अथवा एग्रोसन जी० एन० प्रति किग्रा० बीज) बोना चाहिये।

(ग) कीट नियंत्रण—गुलाबी कीड़ा, चित्तीदार कीड़ा, हरा तेला, पत्ती लपेट कीड़ा कपास के प्रमुख कीट हैं। गुलाबी कीड़ा की रोकथाम के लिये 1.5 लीटर मैटासिस्टॉक्स अथवा 0.5 लीटर न्यूवाक्रॉन (1000 ली० पानी में घोल) प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें। चित्तीदार कीड़े के लिये थायोडॉन या मैलाथियॉन (0.15 प्रतिशत) का छिड़काव लाभदायक है। हरा तेला व पत्ती लपेट कीट के लिये 0.1 प्रतिशत बी० एच० सी० या 0.15 प्रतिशत एन्डोसल्फान (35 ई० सी०) का छिड़काव करें।

(9) अवांछनीय पौधों को निकालना—समय-समय पर भिन्न तथा रोगग्रस्त पौधों को निकाला जाता है।

(10) चुनाई व बिनौला निकालना—कपास में लम्बे समय तक फूल-फल बनते रहते हैं। अतः स्फुटित गूलरों की कई बार चुनाई की जाती है। चुनाई के बाद बीज निकालकर सुखा लेना चाहिये। बीज निकालते समय उन्हें कोई क्षति न पहुँचे और यांत्रिक मिश्रण न होने पाये। बीजों को 8-10 प्रतिशत आर्द्रता मात्रा पर भंडारित करें। कभी-कभी बीज (बिनौले) से रासायनिक (अम्लों का प्रयोग) अथवा ज्वाला उपचार से तन्तु (रेशे) हटाये जाते हैं, जिससे बुवाई में आसानी होने के साथ-साथ अंकुरण जल्दी और अच्छा होता है।

(v) संकर कपास का बीज उत्पादन
(SEED PRODUCTION OF HYBRID COTTON)

कपास का संकर बीज उत्पादन हाथ से नपुंसीकरण (Emasculation) तथा परागण करके किया जाता है। इसके लिये मादा तथा नर जनक के रूप में प्रयोग किये जाने वाली किस्मों की बुवाई 4 : 1 अनुपात में की जाती है तथा इनके खेतों के बीच कम से कम 5 मीटर की दूरी रखी जाती है। लम्बे समय तक पराग मिलते रहें, इसके लिये नर जनक की 8-10 दिन के अन्तर से समयांतर बुवाइयाँ की जाती हैं, जिससे बड़े पैमाने पर (2-2.5 माह) हस्त परागण का कार्य सम्पन्न किया जा सके। इसके लिये विशेष सावधानी बरतनी होती है। इसके लिये मादा जनक की चुनी हुई कलियों का नपुंसीकरण करके लिफाफे लगा दिये जाते हैं तथा नर जनक की कलियों को भी खिलने से पहले लिफाफे से बंद कर दिया जाता है। मादा पुष्पों का परागण (पुष्प खिलने से एक दिन पूर्व) कराकर पुनः लिफाफे लगा दिये जाते हैं। पहले से ही खिले पुष्प निकाल दिये जाते हैं। बीज जनक से संकर बीज वाले गूलर एकत्र करके बीज निकाल लिये जाते हैं।

सामान्य फसल की अपेक्षा अंतरण (Spacing) कुछ अधिक (मादा जनक के लिये 150 सेमी० × 150 सेमी० तथा नर जनक के लिये 100 सेमी० × 100 सेमी०)

तथा बीज की मात्रा कम (मादा जनक के लिये 4 किग्रा०/हे० तथा नर जनक के लिये 2.5 किग्रा०/हे०) रखी जाती है। अन्य क्रियायें कपास का बीज उत्पादन की तरह ही हैं। उनका वर्णन पूर्व में किया जा चुका है।

प्रश्न 2. धान के विकास के लिये पादप प्रजनन की विभिन्न विधियाँ क्या हैं ? इसके संकर बीज उत्पादन का सविस्तार वर्णन कीजिए।

What are different breeding procedures for improvement in Rice ? Describe hybrid production of seed in it. (CSJM, 2016)

अथवा

धान में प्रयुक्त होने वाली विभिन्न प्रजनन विधियाँ लिखिये तथा किसी एक का विस्तृत वर्णन कीजिए।

Write the various breeding methods in Rice crop. Explain one of them in detail. (BRAU, 2015)

उत्तर—चावल (Rice; *ओराइजा सेटाइवा, Oryza sativa;* 2n = 24)—उष्ण एवं शीतोष्ण जलवायु वाले क्षेत्रों में धान (चावल) प्रमुख खाद्य फसल है। विश्व के 80% धान का उत्पादन चीन, जापान, भारत, दक्षिण-पूर्व एशिया एवं प्रशांत महासागर में स्थित पड़ोस के द्वीपों में होता है। भारत में धान की खेती हिमालय की घाटियों से लेकर उष्ण जलवायु वाले केरल तक में फैली हुई है।

कृष्ट स्पेसीज (Cultivated Species)—धान ग्रैमिनी कुल के *ओराइजा* (Oryza) जीनस का सदस्य है। *ओराइजा* जीनस में 22 जंगली एवं दो कृष्ट स्पेसीजें हैं; कृष्ट स्पेसीजों (Cultivated species) का संक्षिप्त वर्णन नीचे दिया गया है।

1. ओराइजा सेटाइवा (*Oryza sativa* L.)—यह प्रमुख कृष्ट स्पेसीज है; इसकी खेती पूरे विश्व में होती है। अब *ओ० सेटाइवा* की खेती उन क्षेत्रों में भी होने लगी है, जो कि दूसरी कृष्ट स्पेसीज *(ओराइजा ग्लैबरीमा, Oryza glaberrima)* के उद्गम क्षेत्र हैं; इन क्षेत्रों में भी *ओ० सेटाइवा* अब *ओ० ग्लैबरीमा* को विस्थापित करती जा रही है। ओ० सेटाइवा के तीन वेराइटी समूह होते हैं : (1) *इंडिका (indica)*, (2) *जैपोनिका (japonica)*, एवं (3) *जवानिका (javanica)*। इन वेराइटी समूहों में आकारिकीय (Morphological), शरीर क्रियात्मक (Physiological) एवं आनुवंशिक (Genetic) अंतर पाये जाते हैं। *इंडिका* की खेती उष्ण जलवायु वाले क्षेत्रों में होती है, जबकि *जैपोनिका* अपेक्षाकृत ठंडे क्षेत्रों उगाई जाती है। *जवानिका* धान इंडोनेशिया में पाया जाता है; यह *इंडिका* एवं *जैपोनिका* वेराइटियों के मध्यवर्ती होता है। *इंडिका* एवं *जैपोनिका* में संकरण से प्राप्त F_1 संकर आंशिक बंध्य होते हैं, लेकिन इस कारण इन संकरों के पादप प्रजनन कार्यक्रमों में उपयोग में बाधा नहीं पड़ती है।

2. ओराइजा ग्लैबरीमा (*Oryza glaberrima*)—इस स्पेसीज की उत्पत्ति उष्ण पश्चिमी अफ्रीका में हुई है और इसकी खेती इसी क्षेत्र तक सीमित है। धीरे-धीरे इसका स्थान *ओ० सेटाइवा* स्पेसीज लेती जा रही है।

जनन (Reproduction)—धान में लैंगिक जनन होता है। इसमें 2% से कम स्वपरागण (Self-pollination) होता है। इसका पुष्पक्रम (Inflorescene) एक पुष्पगुच्छ (Panicle) होता है। पुष्पगुच्छ की प्रत्येक स्पाइकिका (Spikelet) में केवल एक पुष्पक

(Floret) होता है। प्रत्येक पुष्पगुच्छ में स्पाइकिकाओं की संख्या 80 से 300 तक हो है। पुष्पगुच्छ की सबसे ऊपरी प्राथमिक शाखा से पुष्पन (Anthesis) शुरू होता और धीरे-धीरे नीचे की ओर खिसकता है। पूरे पुष्पगुच्छ के पुष्पन में 6-7 दिन लग हैं। किसी भी प्राथमिक शाखा (Primary branch) में सबसे ऊपरी स्पाइकिका क पुष्पन सबसे पहले होता है। इसके बाद, इसकी सबसे नीचे वाली स्पाइकिका क पुष्पन होता है। अब इस प्राथमिक शाखा में पुष्पन नीचे से ऊपर की ओर बढ़ता है

प्रजनन उद्देश्य (Breeding Objectives)

अधिक उपज (Higher Yields)—उपज में योगदान करने वाले प्रमुख लक्षण निम्नलिखित होते हैं : (1) पुष्पगुच्छ (Panicle) की लम्बाई, (2) प्रति पुष्पगुच्छ दानों की संख्या, (3) परीक्षण भार (Test weight) एवं (4) प्रत्येक एकक क्षेत्रफल (Unit area) में पुष्पगुच्छों की संख्या।

दानों की गुणवत्ता (Quality of Grains)—चावल के पाक (Cooking), मिलीयन (Milling) एवं संसाधन (Processing) अभिलक्षण इसकी गुणवत्ता के महत्त्वपूर्ण घटक होते हैं। सुगन्धित बासमती चावल का निर्यात बहुत ही आर्थिक महत्त्व का है।

रोग रोधिता (Disease Resistance)—चावल के प्रमुख रोग निम्नलिखित हैं : ब्लास्ट (Blast), बैक्टीरियाई पर्ण शीर्णता (Bacterial leaf blight), तना गलन (Stem rot), बभ्रु लक्ष्म (Brown spot) एवं वाइरस रोग।

कीट रोधिता (Insect Resistance)—चावल के प्रमुख कीट निम्नलिखित होते हैं : भूरा पादप फुदक (Brown plant hopper), गंधी कीट (Gundhi bug), पिटिका मशकाभ (Gall midge) आदि।

संकर धान (Hybrid Rice)—संकर चावल का विकास भारत में धान प्रजनन कार्यक्रम का एक प्रमुख अंग है।

उत्कृष्ट पादप प्ररूप (Improved Plant Type)—अधिक दक्ष (Efficient) आदर्श पादप प्ररूपों (Idiotypes) को विकसित करने के प्रयास किये जा रहे हैं। इस दिशा में IRRI, फिलीपीन एवं जापान में किये जा रहे प्रयासें के उत्साहवर्धक परिणाम मिले हैं।

प्रजनन युक्तियाँ (Breeding Approaches)

धान के प्रजनन की प्रमुख युक्तियाँ एवं उनसे हुई उपलब्धियों का संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत दिया गया है : (1) पुरःस्थापन (Introduction), (2) शुद्ध वंशक्रम वरण (Pure line selection), (3) किस्म संकरण (Intervarietal hybridization), (4) दूरस्थ संकरण (Distant hybridization), (5) उत्परिवर्तन प्रजनन (Mutation breeding) एवं (6) अन्य प्रजनन युक्तियाँ।

1. पुरःस्थापन (Introduction)—कई पुरःस्थापित किस्मों को सीधे खेती के लिये विमोचित किया गया है; इनके कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं : Ch 1039 (चीन से कश्मीर में पुरःस्थापित), नोरिन 18 (Norin 18: जापान से हिमाचल प्रदेश में आयातित), महसूरी (Mahsuri; जैपोनिका × इंडिका संकरण से प्राप्त) एवं मलेशिया से आन्ध्र प्रदेश में पुरःस्थापित), IR8 (IRRI से 1968 में पुरःस्थापित; भारत में धान प्रजनन की दिशा बदलने वाली घटना), IR5, IR20, IR22, IR34, IR36, IR50

आदि। IR8 की लोकप्रियता का कुछ अंदाज इस बात से लगाया जा सकता है कि इसकी उपज क्षमता से खुश होकर एक किसान ने अपने नवजात शिशु का नाम IR8 रख दिया। पूर्वी उत्तर प्रदेश में इस किस्म को जनसाधारण 'घर भरन' के नाम से जानता था। मध्य प्रदेश में 1999 में धान के कुल क्षेत्रफल के ~40% में IR36 की खेती की गई। भारत से होने वाले गैर बासमती चावल के निर्यात का लगभग 80% IR64 होता है। इसके अलावा, बहुत से पुरःस्थापनों का संकरण कार्यक्रमों में व्यापक उपयोग किया गया है।

कई पुरःस्थापित किस्में अत्यन्त लोकप्रिय हुई हैं। लेकिन जब वे किस्में किसी रोग से ग्राही (Disease susceptible) हो गईं, तो किसानों को काफी हानि हुई। उदाहरण के लिये, TN1 को 1966 में बैक्टीरियाई पर्ण शीर्णता (Bacterial leaf blight) की महामारी से क्षति हुई। इसी प्रकार, तमिलनाडु में 1983 में IR50 में ब्लास्ट (Blast) की महामारी आई थी।

2. शुद्ध वंशक्रम वरण (Pure line Selection)—एक अनुमान के अनुसार, भारत में धान की 60,000 से अधिक परंपरागत किस्मों की खेती होती है। इनमें से बहुत सी किस्मों का शुद्ध वंशक्रम वरण द्वारा सुधार किया गया है। वर्ष 1911 से 1956 के बीच भारत में धान की कुल 445 किस्मों का विमोचन (Release) किया गया; इनमें से 394 किस्मों का विकास शुद्ध वंशक्रम वरण द्वारा किया गया था। हाल के वर्षों में भी शुद्ध वंशक्रम वरण द्वारा कई किस्मों का विकास किया गया है। इस विधि से प्राप्त एवं हाल में विमोचित कुछ किस्में इस प्रकार हैं : मधुकर, जलमग्न, V. L. 206 (उ० प्र०); जलगांव 5 (तमिलनाडु), स्वर्णमोदन, विटिला 2 (केरल), जानकी (बिहार), जलधि (पश्चिम बंगाल), न्गोबा (Ngoba, मेघालय) आदि।

शुद्ध वंशक्रम वरण से प्राप्त कुछ किस्में कुछ अजैविक या जैविक प्रतिबलों (Stresses) के लिये रोधी (Resistant) या सहिष्णु (Tolerant) हैं। उदाहरण के लिये, SR 26B लवणता रोधी है, जबकि FR 43B बाढ़ सहिष्णु है; ये दोनों ही किस्में काफी लोकप्रिय हुई थीं।

3. अंतराकिस्म संकरण (Intervarietal Hybridization)—यह धान सुधार की सबसे अधिक लोकप्रिय एवं सबसे अधिक सफल युक्ति है (सारणी)। धान की उपज क्षमता में काफी अधिक वृद्धि तब हुई जब देशी (Indigenous) × विदेशी (Exotic) लाइनों के संकरण से बौनी किस्मों का विकास किया गया। इन बौनी किस्मों ने लम्बी देशी किस्मों को लगभग पूरी तरह विस्थापित कर दिया है। केवल उत्तम गुणवत्ता वाली किस्में, जैसे बासमती, की लम्बी देशी किस्मों की खेती हो रही है; इन धानों में भी बौनी किस्मो के विकास के प्रयास किये जा रहे हैं। वंशावली विधि (Pedigree method) का सबसे व्यापक उपयोग किया गया है, लेकिन कुछ किस्मों का विकास प्रतीप संकरण विधि (Back cross method) द्वारा भी किया गया है। जैपोनिका × इंडिका संकरणों से भी कुछ किस्मों का विकास किया गया है। अंतराकिस्म संकरणों से हाल ही में विकसित कुछ किस्में निम्नलिखित हैं : बिरसा धान 12, CSR 10, शंकुतला, चेनाब, जितेन्द्र, पूर्णेन्दु, पूसा 834, महानाया, निधि, पूसा 677 आदि।

4. दूरस्थ संकरण (Distant Hybridization)—*ओ० रोटाइवा* का जंगली

स्पेसीजों से संकरण मुख्य रूप से रोग रोधिता के स्थानान्तरण के लिये किया गया है, जैसे *ओ० निवारा* (O. nivara) से टुंग्रो वाइरस (Tungro virus) रोधिता आदि। अभी हाल में दो मात्रात्मक लक्षण विस्थल (Quantitative trait loci), YLD1 एवं YLD2, को *ओ० रूयूफीपोगान* (O. rufipogan) से *ओ० सेटाइवा* में स्थानान्तरित किया गया है; इन विस्थलों के कारण 15-17% तक अधिक उपज प्राप्त होती है।

सारणी : अंतराकिस्म संकरण (Intervarietal hybridization) से विकसित धान की किस्मों के कुछ उदाहरण।

संकरण का प्रकार (Type of cross)	किस्म (Variety)
	इंडिका × इंडिका
देशी × देशी (लम्बी किस्में)	Co25, Co26, तरावरी बासमती, रनबीर बासमती
देशी × विदेशी (बौनी किस्में)	रत्ना, बाला, आकाशी, विकास, सावित्री, अनामिका मानसरोवर
प्रतीप संकरण विधि	पेटा (Peta, IRRI में), साबरमती एवं जमुना (TN1 का बासमती 370 से प्रतीप संकरण)
	इंडिका × जैपोनिका
	Adt 27, अन्नदा, महसूरी (पुरःस्थापित किस्म)

5. उत्परिवर्तन प्रजनन (Mutation Breeding)—स्वतः उत्परिवर्त्तनों का उपयोग करके निम्नलिखित किस्मों का विकास किया गया है : GEB 24 (कोनामनी किस्म से) एवं श्यामा (सुगन्धित किस्म कालीमूँछ से)। प्रेरित उत्परिवर्तनों से कई किस्मों का विकास हुआ है, जैसे जगन्नाथ (T141 का बौना उत्परिवर्ती), सतरी (केवल 70 दिनों में पकने वाला उत्परिवर्ती), K 84 (जम्मू-कश्मीर में), संकर उत्परिवर्ती 25 (पंजाब), परभणी 1, प्रभावती (महाराष्ट्र में), AU-1 (तमिलनाडु में), इंदिरा (उड़ीसा में) एवं बिराज (पश्चिम बंगाल में)। उत्परिवर्तन से प्राप्त अन्य किस्में निम्नलिखित हैं : CNM 6, CNM 20, CLM 25, CLM 31, AU-4, मोहन, पद्मिनी, रश्मि, PL 56, IET 60, IEt 5878 एवं HUR 36 (महसूरी का बौना एवं अपेक्षाकृत शीघ्र पकने वाला उत्परिवर्ती)।

6. अन्य युक्तियाँ (Other Approaches)—चीन में धान प्रजनन में निम्नलिखित युक्तियों का उपयोग बड़े पैमाने पर किया गया है : (1) परागकोष कल्चर (Anther culture), एवं (2) संकर धान (Hybrid rice)। उत्कृष्ट F_1 संकरों के परागकोषों को कल्चर करके अगुणित (Haploid) पौधे प्राप्त किये जाते हैं। इन अगुणित पौधों के क्रोमोसोम द्विगुणन (Chromosome doubling) से समयुग्मज पौधे/लाइनें मिलती हैं। इस विधि से चीन में धान की एक दर्जन से अधिक लोकप्रिय किस्मों का विकास किया गया है। लेकिन भारत में इस विधि से किसी किस्म का विकास नहीं किया जा सका है।

संकर धान के बीज उत्पादन की विधि का विकास चीन में किया गया था। आरम्भ में संकर बीज उत्पादन CGMS (कोशिकाद्रव्यी आनुवंशिक नर बंध्यता) पर आधारित था, लेकिन अब इसके लिये TGMS (तापसंवेदी आनुवंशिक नर बंध्यता) तथा PGMS (दीप्तिकाल संवेदी आनुवंशिक नर बंध्यता) का उपयोग किया जा रहा

है। भारतवर्ष में CGMS पर आधारित कई संकर किस्मों का विकास किया गया है, जैसे KHR1, CNRH3, CRH1, CORH1, PHB71 आदि। बासमती की भी संकर किस्मों के विकास के प्रयास किये जा रहे हैं, और TGMS एवं PGMS को भी संकर बीज उत्पादन में उपयोग करने का प्रयास हो रहा है।

प्रश्न 3. मूँगफली में प्रजनन का उद्देश्य तथा उन्नति का वर्णन कीजिए।

Describe the objectives of breeding and progress in Groundnut.

उत्तर—प्रजनन उद्देश्य (Breeding Objectives)

उपज (Yield)—मूँगफली की उपज के मुख्य घटक लक्षण निम्नलिखित होते हैं : (1) प्रति पौधा फली की संख्या, (2) फली का आमाप (Size), (3) प्रति फली दानों की संख्या, (4) दानों का आमाप तथा छिलका रहित प्रतिशत (Shelling percentage)।

जल्दी पकना (Early Maturity)—अगेती किस्में उगाने पर सिंचित क्षेत्रों में एक वर्ष में दो फसलें उगाई जा सकती हैं। बरानी खेती (Rainfed cultivation) के लिये भी अगेती किस्में महत्त्वपूर्ण होती हैं।

पादप प्ररूप (Plant Type)—सिंचित क्षेत्रों में ऊर्ध्व प्ररूपों (Erect types) की खेती होती है, जबकि बरानी (Rainfed) क्षेत्रों के लिये प्रसारी प्ररूप उपयुक्त होते हैं। अधिक शाखन (Branching) वांछनीय होता है, लेकिन फलियों को कम गहराई पर बनना चाहिये, जिससे उनका संलवन (Harvesting) सरलतापूर्वक किया जा सके।

प्रसुप्ति (Dormancy)—फलियों के भीतर ही, अंकुरण (Germination) निरोध के लिये प्रसुप्ति जरूरी होती है। कुछ किस्मों, जैसे TMV4, में प्रसुप्ति पाई जाती है।

रोग रोधिता (Disease Resistance)—मूँगफली की उपज को सीमित/कम करने में रोगों की सबसे महत्त्वपूर्ण भूमिका है। मूँगफली के प्रमुख रोग निम्नलिखित हैं : किट्ट (Rust), पर्ण चित्ती (Leaf spot), म्लानि (Wilt), मूल विगलन (Root rot) तथा मोजेक। 'टिक्का' पर्ण चित्ती, सर्कोस्पोरिडियम पर्सोनेटम (Cercosporidium personatum) के द्वारा उत्पन्न, सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण रोग है।

कीट रोधिता (Insect Resistance)—मूँगफली के महत्त्वपूर्ण कीट निम्नलिखित होते हैं : लाल रोमिल झिल्ली (Red hairy caterpillar), बिहार रोमिल झिल्ली (Bihar hairy caterpillar), पर्ण सुरंगक (Leaf miner), तना छेदक (Stem borer) एवं फली चूषी मत्कुण (Pod sucking bug)।

गुणवत्ता (Quality)—मूँगफली के महत्त्वपूर्ण गुणवत्ता लक्षण निम्नलिखित होते हैं : बीज आमाप एवं रंग, तेल अंश, छिलका रहित प्रतिशत (Shelling percentage), सुगंध, मिलीयन गुणवत्ता एवं प्रोटीन अंश।

प्रजनन युक्तियाँ (Breeding Approaches)

पुरःस्थापन (Introduction)—दक्षिण-पूर्व एशिया, ब्राजील, अफ्रीका तथा U. S. A. से कई लाइनें पुरःस्थापित की गई हैं। पुरःस्थापित लाइनों में वरण से कई किस्में विकसित की गई हैं, जैसे RSB87 ब्राजील से पुरःस्थापित एक लाइन में वरण से प्राप्त हुई थी।

वरण (Selection)—शुद्ध वंशक्रम वरण (Pureline selection) द्वारा मूँगफली की कई किस्में विकसित की गई हैं। ऐसी किस्मों के कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं

: MH1, MH2, PG1, MI3, RS1, T28, T24, चंद्रा, ज्योति, कोपरगांव 1, कोपरगांव 3, फूले, प्रगति, कादिरी 2, कादिरी 3, स्पेनिश इंप्रूव्ड, TMV1, TMV2, TMV3, TMV4, TMV6, TMV7, TMV8, TMV11 आदि।

संकरण (Hybridization)—मूँगफली में किस्म विकास के लिये केवल एकल संकरणों (Single crosses) का उपयोग किया गया है। एक ही उपस्पेसीज की किस्मों के बीच संकरण को **अंतराकिस्म संकरण** (Intervarietal cross) कहते हैं, जबकि भिन्न उपस्पेसीजों के किस्मों में संकरणों को **अवजातीय संकरण** (Infraspecific cross) कहा जाता है। संकरण के द्वारा विकसित कुछ किस्में निम्नलिखित हैं : C501, M37, M197, J11, GAUG1, GAUG2, TG13A, TG14, TG15, TG16, TG18, TG19, TG19A, किसान, TMV9, POL2 आदि। TG किस्में ऐसे संकरों से विकसित की गई हैं, जिनके एक या दोनों ही जनक उत्परिवर्ती थे।

दूरस्थ संकरण (Distant Hybridization)—रोग रोधिता जैसे कुछ वांछनीय लक्षणों को जंगली स्पेसीजों से मूँगफली में स्थानान्तरित करने के लिये अंतरास्पेसीज संकरण के उपयोग करने के प्रयास जारी हैं।

उत्परिवर्तन (Mutation)—उत्परिवर्तन प्रजनन द्वारा कई किस्मों का विकास किया गया है; इनमें से कुछ महत्त्वपूर्ण किस्में निम्नलिखित हैं : BP1, BP2, TG1 (= विक्रम), TG3, TG4, TG7, Co2।

प्रश्न 4. पादप पुरःस्थापन को परिभाषित कीजिए। फसल सुधार में इसके महत्त्व की विवेचना करें।

Define Plant introduction. Explain its importance in crop improvement. अथवा **(CSJM, 2011)**

द्वितीयक पुरःस्थापन को समझाइये।

Describe the Secondary Introduction. अथवा

प्राथमिक पुरःस्थापन की व्याख्या कीजिए।

Explain the Primary Introduction. **(CSJM, 2011)**

उत्तर—पुरःस्थापन (Introduction)—पौधों का उनके उगने वाले स्थान (Growing locality) से नये स्थान (New locality) में प्रवेश कराना जहाँ पर वह पहले नहीं उगते थे, **पुरःस्थापन** (Introduction) कहलाता है अर्थात् एक देश के विभिन्न अनुसंधान केन्द्रों से विभिन्न सस्यों की उन्नत किस्मों अथवा नये पौधों को उसी देश के दूसरे भागों में अथवा एक देश से दूसरे देश में जहाँ वे पहले से न हों, ले जाकर उगाना **पुरःस्थापन** कहलाता है। यद्यपि पुरःस्थापन के द्वारा एक ही वर्ष में अति शीघ्र सस्य सुधार किया जा सकता है परन्तु इसकी सफलता दशानुकूलन (Acclimatization) पर निर्भर होती है।

Plant introduction consists of taking a genotype or a group of genotypes of a plant into a new environment where they were not being grown before.

पुरःस्थापन के उद्देश्य
(PURPOSES OF INTRODUCTION)

पौधों का पुरःस्थापन कई उद्देश्यों से किया जाता है; जैसे—

(अ) कृषि, वन तथा उद्योग में सीधा प्रयोग करने के लिये (For direct use

न Agriculture, Forestry and Industry)—कई धान्य फसलें, घासें तथा बहुत-सी ौषधि वाले पौधे विदेशों से लाकर भारतवर्ष में उगाये गये हैं तथा स्वयं भारत में ही क प्रदेश में निकाली गई उत्तम किस्मों को दूसरे प्रदेशों में ले जाया जाता है; जैसे—ारतीय कृषि अनुसंधान केन्द्र, नई दिल्ली से निकाली गई गेहूँ की विभिन्न किस्मों को ारे देश के विभिन्न भागों में उगाया जा रहा है। हाल ही में गेहूँ की मैक्सिकन किस्में ैक्सिको से पुरःस्थापित की गई हैं।

(ब) सौन्दर्य के लिये (For Beautyfication)—बहुत-से सुन्दर शाकों तथा ाड़ियों को बगीचों, पार्कों तथा जंगलों आदि में सुन्दरता के लिये विभिन्न देशों तथा विभिन्न स्थानों से लाकर उगाया जाता है।

(स) आर्थिक फसलों के आनुवंशिक सुधार के लिये (For the Genetical Improvement of Economic Crops)—विभिन्न देशों तथा स्थानों से फसल के पौधों तथा उनसे सम्बन्धी जंगली पौधों को पुरःस्थापित किया जाता है, ताकि पुरःस्थापित पौधों का स्थानीय किस्मों के आर्थिक महत्त्व के लक्षणों के सुधार के लिये संकरण में प्रयोग किया जा सके।

पुरःस्थापन के प्रकार
(TYPES OF INTRODUCTION)

प्राथमिक पुरःस्थापन (Primary Introduction)

समय-समय पर कृषिगत फसलों की किस्मों का विदेशों से भारत में पुरःस्थापन किया गया है इनमें से कुछ किस्में भारत में भारतीय किस्मों की अपेक्षा कुछ स्थानों पर अधिक अच्छी सिद्ध हुई हैं अतः इन किस्मों को भारत में बिना किसी परिवर्तन के उगाया जाता है। भारत में प्राथमिक पुरःस्थापन के मुख्य उदाहरण निम्न प्रकार हैं—

गेहूँ—रिडले किस्म गेहूँ की किस्म आस्ट्रेलिया में निकाली गई तथा भारत में उत्तर प्रदेश, पंजाब तथा हिमाचल प्रदेश की पहाड़ियों में सफलतापूर्वक उगाई जाती है।

सोनोरा 64 तथा लरमा रोजा—मैक्सिको की किस्में जो कुछ समय तक उत्तरी पश्चिमी भारत में बहुत अधिक प्रचलित रहीं।

जई—सेन्ट, फ्लैमिंग गोल्ड, ओवर लैट, ग्रीन ग्राफ तथा माऊंटेन सभी आस्ट्रेलियन किस्में। ग्रे-ऐलजीरियन एल्जीरिया से भारत में पुरःस्थापन की गई है।

धान—चाइना 10 चीन की किस्म जो उत्तर प्रदेश में बहुत अच्छी सिद्ध हुई। IR 8, IR 36 अन्तर्राष्ट्रीय चावल अनुसंधान संस्थान, फिलीपीन्स में निकाली गई। टाईचुंग नेटिव-1, ताइवान से भारत में पुरःस्थापित की गई है।

मटर—बोनविले तथा अर्ली बेजर अमेरिकन किस्में तथा सालविया स्वीडन की किस्म है।

टमाटर—सिओक्स अमेरिकन किस्म जो मध्य प्रदेश में प्रचलित है।

लोबिया—ब्रेन्को किस्म, ब्राजील से तथा इ० सी० 4211, इ० सी० 4216, इ० सी० 4893 अमेरिका से प्रवेशित किस्में हैं।

सोयाबीन—अमेरिका से मोटेजो क्वीमसन, विलोमी तथा आरट्रेलिया से लाइसीन-2, हैरमैन-36 तथा हैरमैन-107 किस्में पुरःस्थापित की गई हैं।

प्याज—टैक्साल अर्ली ग्रेनो अमेरिका से मंगाई गई है।

द्वितीयक पुरःस्थापन (Secondary Introduction)

बहुत-सी फसलों की किस्में जो विदेशों से भारत में पुरःस्थापित की गई तथा उनमें चयन करके नई किस्में निकाली गई, वे हैं—कल्याण सोना तथा सोनालिका गेहूँ; उन्नतशील घाना बाजरे की किस्म; पूसा लाल तथा पूसा सुनहरी, शकरकन्द की किस्म; पूसा बरसाती, लोबिया की किस्म तथा जापानी सफेद और 40 दिन मूली की विदेशी किस्में हैं जो देशी किस्मों में सुधार के लिये संकरण में प्रयुक्त की गई हैं।

प्रायः पुरःस्थापित किस्में नये वातावरण में वांछित परिणाम नहीं देती हैं तथा उनको ज्यों का त्यों कृषि में प्रयोग करना उपयोगी नहीं होता है और उनमें चयन द्वारा ही उत्तम प्रभेद निकाली जा सकती हैं। अतः पुरःस्थापित सामग्री का अधिकतर उपयोग देशी किस्मों में सुधार करने के लिये संकरण में करते हैं। इस उद्देश्य से गेहूँ की रोधी किस्मों का विदेशों से पुरःस्थापन करके उनका भारतीय किस्मों के साथ संकरण किया गया है जिसके फलस्वरूप गेहूँ की प्रसिद्ध N.P. किस्में तथा C 306 किस्म निकाली गई थी। बाजरा संकरों में टिफ्ट 23 A किस्म का उपयोग हुआ है तथा टमाटर की पूसा रूबी किस्म सी ओक्स × मारूति किस्मों के संकरण से निकाली गई।

पुरःस्थापन के लाभ (Advantages of Introduction)

विभिन्न फसलों की उपज तथा गुण (Yield and quality) सभी स्थानों तथा सभी देशों में नहीं होते हैं बल्कि कुछ स्थानों पर श्रेष्ठ और कुछ पर निकृष्ट होते हैं। अतः श्रेष्ठ किस्मों (Superior types) को पुरःस्थापित करने की आवश्यकता होती है। परन्तु नये स्थानों पर नवागंतुकों (New commers) में से सभी अपने निवास स्थानों जैसा व्यवहार नहीं दिखाते हैं तथा उनमें से कुछ नये स्थानों पर भी अच्छे सिद्ध होते हैं और कुछ खराब। अतः पुरःस्थापित पौधों को उनकी उपयोगिता के आधार पर निम्न तीन प्रकार से प्रयोग किया जाता है—

1. पुरःस्थापन किस्म का ज्यों का त्यों नई किस्मों के रूप में कृषि में उपयोग (Use of introduced material as such as a new variety in agriculture)—यदि सम्पूर्ण पुरःस्थापित पादप सामग्री समान तथा स्थानीय किस्मों से अच्छी सिद्ध होती है तो इसको नई किस्म (New variety) के रूप में सीधा उगाया जाता है; जैसे—गेहूँ की रिडले, सोनोरा 64, लरमा रोजो आदि किस्में। परन्तु पुरःस्थापित सामग्री प्रायः स्थानीय जातियों से अच्छी सिद्ध नहीं होती है। अतः पुरःस्थापित पादप सामग्री का सीधा नई किस्म के रूप में उपयोग कभी-कभी ही किया जाता है।

2. पुरःस्थापित सामग्री में से ऐच्छिक पौधों का चयन करना (Selection of desirable plants from introduced material)—यदि पुरःस्थापित सामग्री समान (Uniform) तथा स्थानीय किस्मों से अच्छी सिद्ध नहीं होती है तो दशानुकूलन के समय इसमें से अच्छे-अच्छे पौधे छाँट लिये जाते हैं जिनका नई किस्म के रूप में अथवा संकरण में पित्रों के रूप में प्रयोग करते हैं।

3. संकरण में पित्रों के रूप में प्रयोग (Using as parents in hybridization)—प्रायः पुरःस्थापित पादप सामग्री का उपयोग स्थानीय कृषिगत किस्मों के कुछ लक्षणों के सुधार के लिये किया जाता है क्योंकि पुरःस्थापित सामग्री में कुछ ऐच्छिक श्रेष्ठ लक्षण (Desirable superior characters) होते हैं; जैसे—रोग रोधिता, शीत रोधिता (Drought resistance) आदि। इन लक्षणों को स्थानीय किस्मों में प्रविष्ट कराने के लिये उनका पुरःस्थापित पौधों के साथ संकरण करते हैं तथा पुरःस्थापित पौधों के ऐच्छिक लक्षणों को स्थानीय किस्मों में स्थानान्तरित कर देते हैं।

प्रश्न 5. परपरागित एवं स्वपरागित फसलों में संकर ओज का वर्णन कीजिए।

Describe the Heterosis in Cross and Self Pollinated Crops.

उत्तर— (अ) परपरागित फसलों में संकर ओज

(HETEROSIS IN CROSS POLLINATED CROPS)

परपरागित फसलों में पुष्प की रचना संकर बीज उत्पादन के अनुकूल होती है तथा आसानी से बहुत कम खर्च में पर्याप्त संकर बीज उत्पन्न किया जा सकता है। यही कारण है कि संकर ओज के प्रयोग से सम्बन्धित अधिकांश कार्य परपरागित फसलों में ही हुआ है।

मक्का में संकर ओज

संकर ओज का सबसे अधिक उपयोग मक्का में किया गया है तथा वास्तविकता यह है कि मक्का में प्राप्त संकरों की सफलता से ही कुछ अन्य फसलों में संकर ओज का लाभ उठाने की प्रेरणा मिली है। मक्का में ही संकर ओज उपयोग तथा संकर बीज उत्पादन सम्बन्धी सिद्धान्तों का विकास हुआ है तो अन्य फसलों में भी समान रूप से लागू होते हैं। संकर ओज उपयोग के लिये मक्का में निम्नलिखित सिद्धान्तों का विकास हुआ है :-

(i) स्वतन्त्र परागित जनसंख्या में से ऐच्छिक पौधों का चयन (Selection desirable plants from open-pollinated population)।

(ii) चयन किये गये पौधों को निरन्तर 5-6 पीढियों तक स्वपरागण करके समयुग्मजी अन्तःप्रजात वंशक्रमों का विकास (Development of homozygous inbred lines by selfing selected plants continuously for 5 to 6 generations)।

(iii) उत्पादित अन्तःप्रजात वंशक्रमों की संयोग क्षमता का परीक्षण करना (Testing the combining ability of the developed inbred lines)।

(iv) एकल संकरण बीज का उत्पादन (Production of single crossed seed)।

(v) द्विसंकरण बीज का उत्पादन (Production of double cross seed)।

अन्तःप्रजात वंशक्रमों का उपयोग

अन्तःप्रजात वंशक्रमों का उपयोग (Utilization of inbred lines)—संकर ओज उत्पादन के लिये विभिन्न तरीकों द्वारा अन्तःप्रजात वंशक्रमों का उपयोग किया

जाता है। चार A, B, C तथा D अन्तःप्रजात वंशक्रम मानकर विभिन्न संकरों के उत्पादन को निम्न प्रकार से प्रदर्शित किया जा सकता है :

1. एकल संकरण (Single Cross)—एकल संकरण दो अन्तःप्रजात वंशक्रमों की संकर सन्तति होती है; जैसे—A × B, A × C, A × D, B × C, B × D अथवा C × D।

एकल संकरण बीज उत्पादन के लिये दोनों अन्तःप्रजात वंशक्रमों को पास-पास अलग-अलग पंक्तियों में उगाया जाता है तथा इनमें से जिस अन्तःप्रजात वंशक्रम पर अधिक पराग (Pollen) बनता है उसे नर के रूप में तथा जिस पर अच्छे भुट्टे और अच्छे दाने बनते हैं उसे मादा के रूप में प्रयोग करते हैं। मादा अन्तःप्रजात वंशक्रम का नर पुष्पक्रम (Tassal) तोड़ दिया जाता है अथवा नरबन्ध्यता का उपयोग किया जाता है। मादा वंशक्रम तब नर वंशक्रम द्वारा स्वतन्त्र परागण द्वारा परागित की जाती है। नर और मादा पंक्तियों का अनुपात 1 : 2 अथवा 1 : 3 रखा जाता है।

2. द्विसंकरण (Double cross)—द्विसंकरण दो एकल संकरणों की संकर सन्तति होती है जैसे (A × B) × (C × D)। बीज नियन्त्रित परागण करके अथवा पृथक् खेत में नर और मादा एकल संकर सन्ततियों को पंक्तियों में उगाकर स्वतन्त्र परागण द्वारा प्राप्त किया जाता है। मादा एकल संकर से परागकणों के बिखरने से पूर्व ही नर पुष्पक्रम को तोड़ दिया जाता है अथवा नरबन्ध्य मादा वंशक्रम का उपयोग किया जाता है और तब नर वंशक्रम द्वारा स्वतन्त्र परागण से परागित किया जाता है। इसके लिये नर और मादा पंक्तियों का अनुपात 1 : 3 अथवा 1 : 4 रखा जाता है।

3. थ्री वे संकरण (Three way cross)—थ्री वे संकरण, एकल संकरण और एक अन्तःप्रजात वंशक्रम की संकर सन्तति होती है; जैसे—(A × C) × B। इस संकरण का उपयोग उस समय करते हैं जब केवल तीन ही उत्तम अन्तः प्रजाति वंशक्रम होती है।

4. अन्तःप्रजात वंशक्रम प्रभेद संकरण (Inbred variety cross)—अन्तःप्रजात वंशक्रम प्रभेद संकरण एक अन्तःप्रजात और स्वतन्त्र परागित प्रभेद में संकरण होता है; जैसे—A × variety, B × variety आदि।

5. Advanced generation cross—(adv. generation A × B, adv. generation C × D) आदि।

मक्का में बहुत बड़े पैमाने पर संकर ओज का उपयोग किया जा रहा है। वैसे तो मक्का उगाने वाले सभी देशों में संकर मक्का उगाई जा रही है परन्तु अमेरिका में तो मक्का के कुल क्षेत्रफल के लगभग 95% में संकर मक्का की खेती होती है। संकर मक्का से स्वतन्त्र परागणित किस्मों की अपेक्षा 25-30 प्रतिशत अधिक उपज प्राप्त होती है।

बाजरा में संकर ओज

बाजरा में पुष्प की पूर्व स्त्रीपक्वता (Protogyny) का संकर बीज उत्पादन में लाभ उठाया जाता है तथा अब कोशिकाद्रव्यी नरबन्ध्यता (Cytoplasmic male sterility) का प्रयोग भी बाजरा में संकर ओज उत्पन्न करने के लिये किया जा रहा है। **राव, नाम्बियार तथा कृष्णास्वामी** (1949) के अनुसार संकर बाजरा सामान्य

किस्मों की अपेक्षा 75% तक अधिक उपज देते हैं। तमिलनाडु प्रदेश में बहुत पहले दो संकर X.1 तथा X.2 काफी प्रचलित भी हुए थे परन्तु बाजरा में संकर उत्पादन का कार्य सफलतापूर्वक **1963 से Co-ordinated Millet Improvement Programme** के अन्तर्गत आरम्भ हुआ तथा कई बहुत अधिक उत्पादन क्षमता वाले संकर उत्पन्न किये गये जिनमें से कुछ निम्न प्रकार से हैं :

HB-1 (Tift 23 A × Bil. 3B), HB-2 (Tift 23 A × J. 88), HB-3 (Tift 23 A × J. 104), HB-4 (Tift 23 A × Kanpur local), HB-5 (Tift 23 A × K-559), H 6-15 (MS 41 H 90/425)। इनके अतिरिक्त NB-3 (MS 5071 A × J. 104), PHB 10 or HB-6 (Pb 111 A × PIB 155), PHB 14 or HB 7 (Pb 111 A × B-228), PHB-47 (PB 111-37 A × PIB 1234) आदि भी अच्छे संकर निकाले गये हैं।

चुकन्दर में संकर ओज

चुकन्दर में मूल के आकार तथा चीनी की मात्रा दोनों के लिये पर्याप्त संकर ओज देखी गयी है तथा इस फसल में चीनी की मात्रा बढ़ाने के लिये संकर ओज का उपयोग किया जा रहा है।

मूली में संकर ओज

भारतीय कृषि अनुसन्धान, संस्थान, नई दिल्ली में मूली की स्वबन्ध्यता (Self-sterility) का लाभ उठाकर स्थानीय किस्मों का चीनी किस्मों के साथ संकरण करके संकर उत्पन्न किये हैं जो जनकों की अपेक्षा 30 से 60% तक अधिक उपज दे रहे हैं।

प्याज में संकर ओज

प्याज में बल्ब के आकार तथा भार में संकर ओज होती है तथा उच्च संयोज्य क्षमता वाली किस्मों के प्रयोग से 20% से 30% तक अधिक उपज देने वाले संकर उत्पन्न किये हैं। मुख्य संकर जाति V. L. Piaze-67 (Male sterile BG 2207 A × V. L. line 31) है।

उपरोक्त फसलों के अतिरिक्त धान, सूरजमुखी तथा गोभी में भी संकर उत्पन्न किये गये हैं तथा अच्छे परिणाम दे रहे हैं।

(ब) स्वपरागित फसलों में संकर ओज
(HYBRID VIGOUR IN SELF POLLINATED CROPS)

बहुत-सी स्वपरागित फसलों में भी आर्थिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण संकर ओज देखी जा चुकी है परन्तु इन फसलों में वाणिज्य स्तर के संकर बीज का उत्पादन एक अति कठिन कार्य है तथा संकर बीज उत्पादन में खर्च भी अधिक आता है। फिर भी उन स्वपरागित फसलों में जिनमें एक ही फल में बहुत से बीज बनते हैं अथवा पुष्प पर्याप्त बड़ा होता है, संकर ओज का वाणिज्य स्तर पर उपयोग किया जाता है तथा कुछ फसलों में संकर बीज उत्पादन के लिये विशिष्ट विधियों का आविष्कार किया गया है।

(i) टमाटर में संकर ओज

टमाटर में फल के आकार तथा संख्या और शीघ्र पक्वता दशाओं में संकर ओज

प्राप्त हुई है। **पावर्स** ने संकरों में औसत से 56% अधिक उपज प्राप्त की। उसने यह भी बताया कि सर्वोत्तम संकर सामान्य किस्मों की अपेक्षा 300% तक अधिक उपज दे सकता है। **भारतीय कृषि अनुसंधान केन्द्र, नई दिल्ली** में भी स्थानीय किस्मों का अमेरिकन किस्मों के साथ संकरण करने से प्राप्त संकरों से 25% से 30% अधिक उपज प्राप्त की है।

(ii) बैंगन में संकर ओज

टमाटर की तरह ही बैंगन में भी एक फल में बहुत से बीज बनते हैं तथा प्रति इकाई क्षेत्रफल में सापेक्षतः कम पौधे लगाये जाते हैं। बैंगन में प्रति पौधा फलों की संख्या में संकर ओज होती है। **(ओल्डलैंड तथा नील, 1948)**। भारतीय कृषि अनुसंधान, नई दिल्ली में पूसा पर्पिल लोंग × हैदरपुर का संकरण करके पूसा अनमोल संकर निकाला गया है जो बहुत अधिक उपज देता है।

(iii) कपास में संकर ओज

वैसे तो कपास में संकर ओज **हचिनसन** के साथियों ने 1947 ई० में देखी थी परन्तु कपास में संकर ओज का वाणिज्य स्तर पर उपयोग 1970 के दशक में ही सम्भव हो सका है तथा अभी भी वाणिज्य स्तर पर संकर ओज का उपयोग केवल भारत के दक्षिणी भाग में ही होता है। कृषि अनुसंधान संस्थान, कोयम्बटूर ने सर्वप्रथम सिद्ध किया कि कपास में संकर ओज का उपयोग सम्भव है। परन्तु वाणिज्य महत्त्व के स्तर के **संकर कपास अनुसंधान संस्थान, सूरत तथा धारवार** में उत्पन्न किये गये हैं जिनकी काफी बडे क्षेत्र में कृषि की जा रही है।

कपास के कुछ मुख्य संकर किस्में निम्नलिखित हैं :

गोदावरी—यह अन्तर्जातीय संकर है (Buri Nectariless × M. C. U.-5)।

संकर 4—यह एक अन्तर्जातीय संकर है जो **सूरज** अनुसंधान केन्द्र पर अमेरिकन कपास **गोसीपियम हिरसुटम** की दो किस्मों (गुजरात 67 × अमेरिकन नेक्टैरीलैस) के संकरण से प्राप्त किया गया है। इसकी उपज अधिक है तथा रेशा लम्बा और मजबूत है।

वारालक्ष्मी—यह **गोसीपियम हिरसुटम** (लक्ष्मी) × **गो० बार्बेडैंस** (SB-289-E) का अन्तर्जातीय संकर है जो धारवार केन्द्र पर उत्पन्न किया गया है। इसकी उपज अधिक है तथा रेशा औसत लम्बाई का मजबूत होता है।

सावित्री—यह भी अन्तर्जातीय संकर है (KOH-203 × SB-1085-6) है।

(iv) ज्वार में संकर ओज

ज्वार में संकर ओज की खोज **कार्पर तथा कुइनबाई** (1937) ने की थी। तब से बाद में अनेकों वैज्ञानिकों ने ज्वार में संकर ओज का वर्णन किया है। ज्वार में अन्तर्जातीय संकरों में संकर ओज अधिक होती है परन्तु ज्वार का पुष्प छोटा होने से तथा समपरिपक्वता के कारण से वाणिज्य स्तर पर संकर ओज का उपयोग बहुत लम्बे समय तक नहीं किया जा सका। अब कोशिकाद्रव्यी नर बन्ध्यता के प्रयोग से ज्वार में कई बहुत ही महत्त्वपूर्ण संकर उत्पन्न किये गये हैं जो सामान्य प्रभेदों की अपेक्षा पर्याप्त अधिक उपज देते हैं तथा बड़े क्षेत्रफल में इनकी खेती की जा रही है;

जैसे—CSH-1 (MS Combine Kafir 60 A × Feterita or I. S.-84), CSH-2 (MSCK 60 A × Hagari or I. S. 3691), CSH-3 (2219 A × I. S. 3691), CSH-4 (MSCK 1036 A × Swarna), CSH-5 (2077 A × CS 3541), CSH-6 (MSCK 2219 A × CS-3541).

उपरोक्त फसलों के अतिरिक्त अन्य बहुत-सी स्वपरागित फसलों में संकर ओज का उपयोग किया जा सकता है। भारत में चूँकि श्रमिक बहुत सस्ते मिलते हैं तथा बेरोजगारी बहुत अधिक है, बहुत-सी सब्जियों में संकर ओज का उपयोग करके संकर बीज उत्पन्न किये जा सकते हैं जिनका निर्यात करके महत्त्वपूर्ण विदेशी मुद्रा अर्जित की जा सकती है तथा बेरोजगारी कम की जा सकती है।

प्रश्न 6. स्वबंध्यता तथा नर बंध्यता का पादप प्रजनन में संबद्धता की विवेचना कीजिए। संक्षेप में प्रत्येक की सीमाओं का स्पष्टीकरण कीजिए।

Discuss the relevance of self incompatibility and male sterility in plant breeding. Briefly explain the limitations of each system.

अथवा

कोशिकाद्रव्यात्मक आनुवंशिकी नर बन्ध्यता क्या है ? इसका योजनाबद्ध विवरण दीजिए।

What is cytoplasmic genetic male sterility (CMS) ? Give its schematic description.

अथवा

कोशा रसीय नर बंध्यता के उपयोग से मक्का में संकर बीज उत्पादन का संक्षिप्त विवरण दीजिए।

Give a brief account of hybrid seed production in maize using cytoplasmic male steritity. (BRAU, 2015)

उत्तर— **स्व-अनिषेच्यता या स्वबंध्यता**
(SELF-INCOMPATIBILITY)

स्व-अनिषेच्यता स्व-परागण को रोककर पर-परागण को बढ़ावा देने की एक प्राकृतिक संरचना (Natural mechanism) है जिसके अन्तर्गत नर और मादा दोनों युग्मकों के सामान्य तथा फलद (Fertile) होते हुए भी स्वपरागण के बाद बीज नहीं बनता है अर्थात् **नर और मादा युग्मकों के फलद होते हुए भी जब स्वपरागण के बाद परागनाल की धीमी वृद्धि के कारण वह वर्तिका की पूरी लम्बाई को पार करके निषेचन करने में असफल हो और परिणामस्वरूप बीज न बने तो इस दशा को अनिषेच्यता कहते हैं** (The failure of production of seed in self pollination due to failure of pollen tubes to penetrate the full length of the style and to effect fertilization even when both male and female gametes are normal, is known as self-incompatibility.)

अनिषेच्यता दो प्रकार की होती हैं—

(1) स्व-अनिषेच्यता (Self-incompatibility)—अर्थात् स्व-परागण से निषेचन नहीं होता है लेकिन पर-परागण से निषेचन हो जाता है।

(2) पर-अनिषेच्यता (Cross-incompatibility)—अर्थात् पर-परागण से निषेचन नहीं होता है लेकिन स्व-परागण से निषेचन हो जाता है।

दोनों स्व तथा पर-अनिषेच्यता परागण तथा निषेचन के बीच में कहीं पर सामान्य संरचना में बाधा के कारण से होती हैं तथा ऐसा अनुमान है कि यह बाधा किसी जैव रासायनिक क्रिया के कारण से होती है जिस पर सरल आनुवंशिक कारकों का नियन्त्रण होता है। कुछ फसलों में; जैसे—राई, गोभी, मूली आदि स्व अनिषेच्य (स्व-परागण) का प्रायः परागण के बाद अंकुरण नहीं होता है और यदि अंकुरण होता भी है तो परागनाल वर्तिकाग्र (Stigma) को पार करने में असफल रहती है। यदि वर्तिकाग्र को काटकर अलग कर दिया जाये तो अवरोध समाप्त हो जाता है और परागनाल सामान्य वृद्धि करके निषेचन करती है। इससे सिद्ध होता है कि अनिषेच्यता प्रक्रिया वर्तिकाग्र में ही होती है। कुछ अन्य जातियों में; जैसे—तम्बाकू, आलू आदि में यद्यपि अनिषेच्य पराग का वर्तिकाग्र पर सामान्य अंकुरण होता है तथा परागनाल वर्तिका में से वृद्धि भी करती है परन्तु परागनाल की वृद्धि इतनी धीमी होती है कि यह समय पर भ्रूणकोष तक नहीं पहुँच पाती है और निषेचन करने में असफल रहती है। इससे सिद्ध होता है कि अनिषेच्य प्रक्रिया वर्तिका में होती है।

यहाँ पर हमारा सम्बन्ध केवल स्व-अनिषेच्यता से है जो कि संकर बीज उत्पादन की एकलिंगता (Dioecy) से भी अधिक दक्ष संरचना है। यद्यपि अनिषेच्यता प्रक्रिया का ज्ञान प्राचीन काल (**कोल रियुटर, 1764**) से है परन्तु स्व अनिषेच्यता के लिये 'incompatibility' शब्द का प्रयोग प्रथम बार **स्टाउट** (1917) ने किया। स्व-अनिषेच्यता पुष्पोद्भिदों की आधी से अधिक जातियों में होती है (**डार्लिंगटन तथा माथुर, 1949**)। पुष्पोद्भिदों के लगभग सभी महत्त्वपूर्ण कुलों; जैसे—ग्रैमिनी (बहुवर्षीय घासों), लेग्यूमिनोसी (चारे वाली फसलों), क्रूसीफेरी (आलू, गोभी, मस्टर्ड), कम्पोजिटी (सूर्यमुखी, कोसमोस), सोलेनेसी (आलू, तम्बाकू, पिटुनिया) आदि में स्व-अनिषेच्यता की विभिन्न संरचनाएँ होती हैं।

स्व-अनिषेच्यता के कारण
(CAUSES OF SELF-INCOMPATIBILITY)

स्व-अनिषेच्यता तीन कारणों से होती हैं—

(1) पुष्प आकारिकी, (2) आनुवंशिक एवं (3) कार्यिकीय।

पुष्प आकारिकी (Flower Morphology)

लेविस (1949) के अनुसार पुष्प आकारिकी स्व-अनिषेच्यता दो प्रकार की होती हैं—

1. विषम-आकारिकी स्व-अनिषेच्यता (Heteromorphic self-incompatibility)

इस प्रकार की अनिषेच्यता परागकोष तथा वर्तिकाग्र की ऊँचाई में अन्तर के कारण से होती है अर्थात् या तो परागकोष वर्तिकाग्र से अधिक ऊँचाई पर होते हैं या वर्तिकाग्र पर्याप्त नीचे होते हैं; जैसे—प्राइमुला, लाइनम तथा पोलीगोनम आदि। प्राइमुला के अलग-अलग पौधों में दो प्रकार के पुष्प होते हैं—

(i) पिन (Pin)—जिनमें वर्तिका लम्बी होती है तथा पुमंग (Stamens) छोटे होते हैं।

(ii) थ्रम (Thrum)—जिनमें छोटी वर्तिका तथा लम्बे पुमंग होते हैं। निषेचन केवल उस परागण से होता है जो उन पौधों में होता है जिनमें वर्तिका तथा पुमंग की ऊँचाई समान होती है अर्थात् पिन और थ्रम में तथा थ्रम और पिन में। पिन × पिन तथा थ्रम × थ्रम में संकरण से या तो पराग का अंकुरण नहीं होता है अथवा वर्तिका में परागनाल की वृद्धि रोक दी जाती है।

विषम-आकारिकी स्व-अनिषेच्यता आनुवंशिकतः एक जीन S/s द्वारा नियन्त्रित होती है। थ्रम पौधों में प्रभावी विकल्पी S होता है तथा वे प्रायः विषम जननांशी (Heterozygous) S/s होते हैं जबकि पिन पौधे सदैव अप्रभावी समजननांशी ss होते हैं। स्व-अनिषेच्यता विकल्पी वर्तिका की लम्बाई (G/g) तथा पुमंग की लम्बाई (A/a) के लिये जीन्स के निकट सहवर्ती होते हैं जिससे प्रायः निम्न स्टैण्डर्ड आनुवंशिक रू. बनती हैं—

$$\frac{G\,S\,A}{g\,s\,a} \text{ थ्रम तथा } \frac{g\,s\,a}{g\,s\,a} \text{ पिन}$$

यहाँ पर विशेष बात यह है कि थ्रम का सारा पराग प्रभावी S जैसा व्यवहार करता है अर्थात् पराग की अनिषेच्यता प्रक्रिया पैतृक पौधे की कायिक आनुवंशिक रूप (Sporophytic genotype) पर निर्भर करती है। अतः यह Heteromorphic and sporophytic system होता है और थ्रम सदैव पिन पर प्रभावी होता है।

सारणी : प्राइमुला (Primula) में विषमरूपी स्व-अनिषेचकता
(Heteromorphic self-incompatibility in primula)

लक्षण प्ररूप संगम (Mating phenotype)	जीनप्ररूप (Mating genotype)	संतति लक्षण (Progeny phenotype)	संतति जीन प्ररूप (Progeny genotype)
पिन × पिन	ss × ss	अनिषेच्य संगम	अनिषेच्य संगम
पिन × थ्रम	ss × Ss	1 पिन : 1 थ्रम	1 ss : 1 Ss
थ्रम × पिन	Ss × ss	1 थ्रम : 1 पिन	1 Ss : 1 ss
थ्रम × थ्रम	Ss × Ss	अनिषेच्य संगम (Incompatible mating)	अनिषेच्य संगम

2. समरूपी स्व अनिषेच्यता (Homomorphic Self-incompatibility)

इस वर्ग के पौधों के पुष्पों की अकारिकी एक समान (Identical) होती है। वे सभी पौधे जिनमें आपस में संकरण करने पर स्व अनिषेच्यता के कारण बीज नहीं बनता है। सभी में समरूपी स्व-अनिषेच्यता पायी जाती है। यह पद्धति विषमरूपी स्व-

अनिषेच्यता की तुलना में अधिक व्यापक रूप में पायी जाती हैं। समरूपी स्व अनिषेच्यता जीन के द्वारा नियन्त्रित होती है। इस पद्धति में स्व-अनिषेच्यता का निर्धारण निम्न दो प्रकार से होता है—

(अ) युग्मकीय उद्भिदी (Gametophytic) एवं

(ब) बीजाणु उद्भिदी (Sporo-phytic)।

(अ) युग्मक उद्भिदी स्व-अनिषेच्यता (Gametophytic Self-incompatibility)—इस प्रणाली में परागकण और वर्तिका में उपस्थित युग्म विकल्पियों के स्वतन्त्र व्यवहार द्वारा अनिषेच्यता नियन्त्रित होती है तथा युग्म विकल्पियों में सहप्रभाविता होती है। यह बहुविकल्पी द्वारा नियन्त्रित होती है। इस प्रणाली में मुख्यतः तीन प्रकार के संयोग होते हैं जो तालिका से स्पष्ट हैं।

युग्मक अनिषेच्यता तम्बाकू, सोलेनम, कॉफी, टमाटर आदि में पायी जाती है।

(ब) बीजाणु उद्भिदी स्व-अनिषेच्यता (Sporophytic Self-incompatibility)—इस प्रकार की अनिषेच्यता कई महत्त्वपूर्ण कुलों में पायी जाती है; जैसे—कम्पोजिटी, क्रूसीफेरी आदि। बीजाणुविक अनिषेच्यता भी युग्मक अनिषेच्यता के समान एक ही संस्थिति पर उपस्थित बहुयुग्म विकल्पियों द्वारा नियन्त्रित होती है परन्तु इनमें परागकण की विशिष्टता पित्र की कायिक आनुवंशिक रूप (Genotype of sporophyte) पर निर्भर करती है तथा युग्म विकल्पियों में पूर्ण प्रभाविता होती है। अतः S_1S_2 पौधों का पराग समजननांशी S_1S_1 अथवा S_2S_2 पौधों की तरह व्यवहार करता है अर्थात् यदि S_1 विकल्पी S_2 पर प्रभावी होता है तो S_1S_2 पौधे का सारा पराग S_1 की भाँति ही व्यवहार करता है तथा इस पौधे का सारा पराग (S_1 तथा S_2) किसी भी S_2S_2 वर्तिका में सामान्य वृद्धि करके स्व-निषेचन करता है।

स्व-अनिषेच्यता का कार्यिकीय कारण (Physiological Causes of Self-Incompatibility)

स्व-अनिषेच्यता कार्यिकीय कारणों से भी होती है तथा कार्यिकीय स्व-अनिषेच्यता का वर्णन दो प्रकार से किया गया है—

(अ) प्रतिजन-प्रतिकाय वाद (Antigen-antibody theory)—**ईस्ट** (1926) के अनुसार पौधों में आत्म-अनिषेच्यता पशुओं में रक्त समूह में प्रतिजन-प्रतिकाय प्रक्रिया के समान पराग तथा वर्तिका में प्रक्रिया के कारण होती है। S युग्म विकल्पी पराग में एक विशिष्ट प्रतिजन का निर्माण करते हैं जो समान युग्मविकल्पी वाली वर्तिका द्वारा उत्पन्न प्रतिकाय से प्रक्रिया करती है जिससे वर्तिका में परागनाल की वृद्धि रुक जाती है।

(ब) पूरक प्रोत्साहन वाद (Complementary stimulation theory)—**स्ट्रोब** (1966) के अनुसार परागनाल की वृद्धि के लिये एक विशिष्ट पदार्थ की एक निश्चित मात्रा की आवश्यकता होती है जो कि S युग्म विकल्पी की उपस्थिति में बनता है। यदि यह पदार्थ न बने अथवा समाप्त कर दिया जाये तो परागनाल की वृद्धि रुक जाती है।

एक दूसरा पदार्थ वर्तिका में बनता है। निषेच्य परागण की दशा में वर्तिका पदार्थ परागनाल पदार्थ से प्रक्रिया नहीं करता है जिससे सारा परागनाल पदार्थ परागनाल की वृद्धि के लिये प्राप्त होता है तथा परागनाल की सामान्य वृद्धि होती है परन्तु अनिषेच्य वर्तिका में वर्तिका पदार्थ परागनाल पदार्थ के साथ प्रक्रिया करता है तथा अधिकांश परागनाल पदार्थ को अक्रियाशील कर देता है जिससे परागनाल वृद्धि के लिये बहुत कम पदार्थ प्राप्त होता है अतः परागनाल की वृद्धि बहुत धीमी होती है।

स्व-अनिषेच्यता का पादप प्रजनन में महत्त्व
(ROLE OF SELF-INCOMPATIBILITY IN PLANT BREEDING)

पादप प्रजनन में स्व-अनिषेच्यता का बहुत अधिक महत्त्व है। यह पादप प्रजनन के लिये सहायक भी होती है और बाधक भी।

(1) स्व-अनिषेच्यता प्रजनकों के लिये सहायक (Self-incompatibility as an Aid to Breeder)

(i) उन फसलों में जहाँ फल में बीज की आवश्यकता नहीं होती है, स्व-अनिषेच्यता बहुत लाभदायक होती है; जैसे—अनन्नास आदि।

(ii) द्विगुणित तथा चतुर्गुणित पौधों को एकान्तरित पंक्तियों में उगाकर त्रिगुणित उत्पन्न करने के लिये।

(iii) संकर बीज उत्पादन के लिये जहाँ S समजननांशी (Homozygotes) उत्पन्न हो सकते हैं; जैसे—सरसों कुल में। कई प्रकार से अन्तः प्रजात वंशक्रम उत्पन्न की जा सकती हैं; जैसे—(अ) वर्तिकाग्र को हटाकर, (ब) अवरोधी पदार्थ के बनने से पूर्व कलिका परागण (Bud pollination) करके (स) निम्न तापमान उपचार देकर, (द) कूटनिषेच्य वंशक्रमों (Pseudocompatible lines) को छाँटकर तथा (य) उत्परिवर्तन द्वारा स्व-अनिषेच्यता युग्म विकल्पी (Self-compatibility alleles) उत्पन्न करके। इन अन्तःप्रजात वंशक्रमों का उपयोग एकल तथा द्विसंकर उत्पादन में किया जा सकता है।

जो फसलें बीज के लिये नहीं उगाई जाती हैं उनमें स्व-निषेच्यता बहुत उपयोगी हो सकती है क्योंकि निषेचन और बीज उत्पादन को रोककर पुष्पण काल को पर्याप्त बढ़ाया जा सकता है तथा सब्जियों में वानस्पतिक अवस्था को पर्याप्त लम्बा किया जा सकता है।

(2) स्व-निषेच्यता पादप प्रजनकों के लिये बाधक (Self-incompatibility as a Handicap to Breeders)

दाने वाली फसलों में निम्न कारणों से स्व-अनिषेच्यता एक बहुत बड़ी बाधा होती है—

(1) बहुत थोड़ा बीज बनना,

(2) उन्नतिशील प्रभेदों में आनुवंशिक शुद्धता को बनाये रखने में कठिनाई तथा

(3) अन्तःप्रजातों के उत्पादन तथा बनाये रखने में कठिनाई।

नरबन्ध्यता
(MALE STERILITY)

लगभग सभी फसलों में कुछ ऐसे पौधे भी देखे जाते हैं जिनमें नर जनन अंग (Male reproductive organ) अविकसित (Undeveloped) अथवा रूद्धवृद्धित (Aborted) होते हैं जिसके परिणामस्वरूप फलद पराग (Viable pollen) नहीं बनता है। ऐसी स्थिति (Condition) को नर बन्ध्यता (Male sterility) कहते हैं। नर बन्ध्यता वंशानुगत (Inherited) भी हो सकती है। वंशानुगत नरबन्ध्यता (Inherited male sterility) के तीन कारण हो सकते हैं—(अ) आनुवंशिक (Genetic) नर बन्ध्यता, (ब) कोशिका द्रव्यात्मक (Cytoplasmic) नर बन्ध्यता, तथा (स) कोशिका द्रव्यात्मक आनुवंशिक नरबन्ध्यता (Cytoplasmic-genetic male sterility)।

(अ) आनुवंशिक नरबन्ध्यता (Genetic male sterility)

कुछ फसलों में नरबन्ध्यता विशेष जीन्स (Specific genes) के द्वारा नियन्त्रित होती है; जैसे—जौ (Barley), मक्का (Corn), ज्वार (Sorghum), शकरकन्द (Sugarbeets) आदि। जौ में केवल एक अप्रभावी फैक्टर युग्म (One recessive gene pair) ms ms की उपस्थिति में अफलद परागकोष (Sterile anthers) बनते हैं। इस फसल में नपुंसीकरण क्रिया (Emasculation process) को हटाने (Eliminate) के लिये नरबन्ध्यता का प्रयोग करते हैं। जिस वंशक्रम (Line) को मादा पित्र (Female parent) के रूप में प्रयोग करना होता है, पहले उसमें अप्रभावी नरबन्ध्य जीन (Recessive male sterile gene) का प्रवेश कराते हैं तथा इस नरबन्ध्य वंशक्रम (Line) का तब वांछित नर के साथ में संकरण (Cross) करते हैं। नर बन्ध्यता का जीन केन्द्रक में पाया जाता है।

(ब) कोशिकाद्रव्यात्मक नर बन्ध्यता (Cytoplasmic male sterility)

इस प्रकार की नरबन्ध्यता पूर्णतः कोशिकाद्रव्य (Cytoplasm) द्वारा नियन्त्रित होती है तथा इसमें आनुवंशिक कारक अर्थात् केन्द्रक जीन का कोई विशेष महत्त्व नहीं होता है तथा इस प्रकार की नरबन्ध्यता केवल मातृ पौधे द्वारा ही वंशानुगत (Inherited) होती है। क्योंकि संतति में कोशिकाद्रव्य अधिकतम मातृ पौधे से ही आता है।

कोशिकाद्रव्य द्वारा वंशानुगत नरबन्ध्यता का प्रभाव पराग पुनः स्थापित जीन्स (Pollen restoring genes) के कारण कोशिका द्रव्यात्मक नरबन्ध्य पौधों को नर फलद पौधों में अपरिवर्तित (Modify) किया जा सकता है। कोशिका द्रव्यात्मक बन्ध्य पौधों में नरबन्ध्य (Sterile) S कोशिकाद्रव्य होता है तथा नर फलद पौधों (Male fertile plants) में सामान्य (Normal) N कोशिकाद्रव्य होता है।

कोशिका द्रव्यात्मक नरबन्ध्यता प्याज, मक्का, ज्वार, बाजरा आदि फसलों में पाई जाती है। प्याज में नर फलदता (Male fertility) एक प्रभावी जीन M द्वारा पुनः स्थापित (Restore) होती है। नरबन्ध्य पौधों में अप्रभावी जीन तथा बन्ध्य कोशिकाद्रव्य होता है (S ms ms)। अन्य सभी संयोगों (Combinations) में पौधे फलद होते हैं;

जैसे—N Ms Ms, N Ms ms, N ms ms, S Ms Ms, S Ms ms। प्याज में नरबन्ध्यता संकर प्याज (Hybrid onion) के उत्पादन में इस्तेमाल की जाती है।

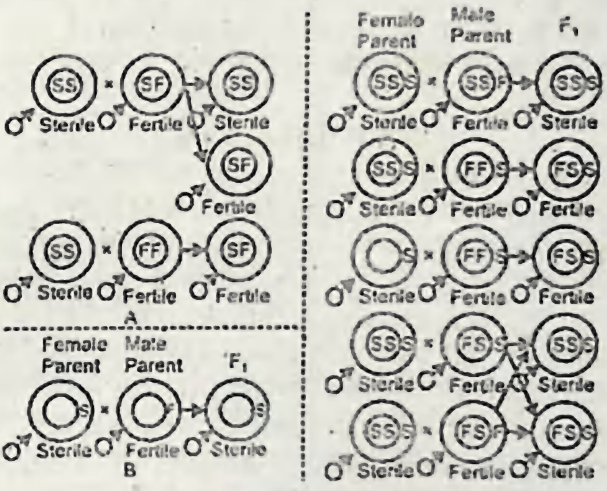

चित्र : विभिन्न प्रकार की नर-बन्ध्यता की वंशानुगति की विधियाँ A. आनुवंशिक, B. कोशिकाद्रव्यात्मक, C. कोशिका द्रव्यात्मक-आनुवंशिक। अन्दरूनी वृत्त के अक्षर आनुवंशिक कारक प्रदर्शित करते हैं, बाह्य वृत्त के अक्षर कोशिका-द्रव्यात्मक कारकों के लिये हैं। S नरबन्ध्यता के लिये तथा F नर फलद के लिये है। F जीन S जीन पर प्रभावी है।

(स) कोशिका-द्रव्यात्मक आनुवंशिक नर बन्ध्यता (Cytoplasmic-Genetic Male Sterility)

कोशिका द्रव्यात्मक आनुवंशिक नरबन्ध्यता से कोशिकाद्रव्यात्मक नरबन्ध्यता केवल इतनी भिन्न होती है कि इसमें नरबन्ध्य पौधों की सन्तान सदैव नरबन्ध्य नहीं होती है बल्कि कुछ विशेष पौधों को नर के रूप में (Pollinator) प्रयोग करने पर फलद (Male fertile) पौधे भी उत्पन्न किये जा सकते हैं। ये नर फलद पिता जो नर फलद संतति उत्पन्न करते हैं, नरबन्ध्य कोशिकाद्रव्य (Male sterile cytoplasm) में फलद पराग उत्पन्न करने की क्षमता रखते हैं। इनमें नर फलदता पुनः स्थापन जीन्स (Male fertility restorer genes) केन्द्रक में उपस्थित होते हैं। दूसरी प्रकार की नरबन्ध्यता (Cytoplasmic male sterility) को तीसरी प्रकार की नरबन्ध्यता (Cytoplasmic genetic male sterility) में कोशिका द्रव्यात्मक पौधों को नर फलदता पुनः स्थापन जीन्स (Male fertility restorer genes) वाले पौधों के साथ संकरण करके परिवर्तित किया जा सकता है। चित्र के अध्ययन से इस प्रकार की बन्ध्यता की वंशानुगति समझी जा सकती है।

अवंशानुगत (Uninherited) नरबन्ध्यता कुछ रासायनिक पदार्थों के प्रयोग द्वारा

भी उत्पन्न की जा सकती है; जैसे—नैथ्थेलीन एसिटिक एसिड (NAA), मैलिक हाइड्रेजाइड (MH), 2, 4-डाइक्लोरोफिनॉक्सी एसिटिक एसिड (2, 4-D) तथा ट्राइडोबेन्जोइक एसिड (TIBA) आदि। इनके अतिरिक्त क्ष-रश्मि (X-rays) के उपचार द्वारा भी नरवन्ध्यता उत्पन्न की जा सकती है। कुछ पौधों में उच्च ताप (High temperature) एवं प्रकाश दीप्तिकालिता के कारण भी नर बन्ध्यता उत्पन्न हो जाती हैं।

नरबन्ध्यता का उपयोग
(UTILIZATION OF MALE STERILITY)

आधुनिक युग में संकर ओज (Hybrid vigour) पादप प्रजनन (Plant breeding) का एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण अंग है तथा इसका उपयोग बहुत सी फसलों में सफलतापूर्वक किया गया है। परन्तु स्व-परागण वाली फसलों के संकरण से पूर्व पौधों को नपुंसित (Emasculate) करना आवश्यक होता है। नपुंसीकरण (Emasculation) एक अति परिश्रमी (Laborious) तथा थकाने वाली (Tedious) क्रिया है जिसके कारण संकर ओज (Hybrid vigour) का उपयोग बड़े पैमाने (Commercial scale) पर नहीं कर सकते हैं। परन्तु अब बहुत सी फसलों में नरवन्ध्य वंशक्रमों (Male sterile lines) के प्रयोग से संकर (Hybrid) उत्पादन में बहुत आसानी हो गयी है। यदि एक अलग जगह में नरबन्ध्य वंशक्रम (Line) को सामान्य वंशक्रम (Line) के साथ उगाया जाये तो नरबन्ध्य पौधों पर जो बीज बनेंगे, वे संकर (Hybrid) होंगे।

संकर बीजों के उत्पादन में नरवन्ध्यता (Male sterility) का प्रयोग सर्वप्रथम **जोंस तथा डेविस** (Jones and Davis) ने 1944 में किया था। उन्होंने कोशिका द्रव्यात्मक नरबन्ध्यता सर्वप्रथम प्याज में देखी। उन्होंने प्याज की Italian Red Variety में एक ऐसा पौधा देखा जो पूर्णतः नरवन्ध्य था। उन्होंने इस पौधे के प्रजनन व्यवहार का अध्ययन करने के लिये उसे बुल्बिल्स (Bulbils) द्वारा उगाया तथा जब उसका विभिन्न नर फलद पौधों के साथ संकरण किया तो उसने तीन प्रकार का प्रजनन व्यवहार दिखाया तथा सन्तति में से कुछ पूर्ण नरवन्ध्य (Complete male sterile) मिली, कुछ पूर्ण नर फलद (Male fertile) मिली तथा कुछ नरबन्ध्य तथा नर फलद दोनों प्रकार के पौधे 1 : 1 के अनुपात में उत्पन्न करने वाली मिलीं।

उपरोक्त परिणामों को यह मानकर वर्णन किया जा सकता है कि दो प्रकार का कोशिकाद्रव्य होता है। एक फलद, (Fertile = F) तथा दूसरा बन्ध्य (Sterile = S)। फलद कोशिकाद्रव्य वाले सभी पौधे जीवित पराग उत्पन्न करते हैं तथा उनकी समजीनी (F) RR, (F) Rr, अथवा (F) rr में से किसी एक प्रकार की होती है। जीन (F) बन्ध्य कोशिकाद्रव्य में नर फलदता पुनः स्थापित (Restore) करता है अतः जब नरबन्ध्य पौधे जिनकी समजीनी (S) rr हो, को (F) rr समजीनी वाले नर पौधों के साथ संकरण करते हैं तो F_1 में सभी नरबन्ध्य पौधे प्राप्त होते हैं। (S) rr × (F) Rr के संकरण से 1 : 1 के अनुपात में नर फलद एवं नर बन्ध F_1 पौधे मिलते हैं परन्तु (S) rr × (F) RR संकरण से सभी F_1 पौधे नर फलद होते हैं।

सारणी : कुछ सस्य पौधे जिनमें नरबन्ध्यता पायी जाती है
(List of some crop plants in which male sterility is found)

कुल (Family)	पादप नाम (Name of the plant)		Type of male sterility found
	अंग्रेजी (English)	वैज्ञानिक (Scientific)	
Gramineae	Barley	*Hordeum vulgare*	GMS
	Wheat	*Triticum aestivum*	GMS, CGMS
	Maize	*Zea mays*	GMS, CGMS
	Sorghum	*Sorghum bicolour*	GMS, CGMS
	Pearlmillet	*Pennisetum americanum*	CGMS
	Rice	*Oryza sativa*	GMS, CGMS
	Sugarcane	*Saccharum officinarum*	CGMS
Leguminosae	Lucerne	*Medicago sativa*	GMS
Compositae	Sunflower	*Helianthus annuus*	GMS, CGMS
Cucurbitaceae	Watermelon	*Citrullus vulgaris*	GMS
	Muskmelon	*Cucurbita moschata*	GMS
	Pumpkin	*Cucurbita maxima*	GMS
Malvaceae	Cotton	*Gossypium hirsutum*	GMS, CGMS
Solanaceae	Tomato	*Lycopersicon esculentum*	GMS, CGMS
	Tobacco	*Nicotiana tabacum*	GMS, CGMS
Liliaceae	Onion	*Allium cepa*	CMS, CGMS
Chemopodiaceae	Sugarbeet	*Beta vulgaris*	GMS, CGMS
Linaceae	Linseed	*Linum usitatissimum*	CGMS
Umbelliferae	Carrot	*Daucus carrota*	CGMS

GMS = Genetic male sterility, CMS = Cytoplasmic male sterility
CGMS = Cytoplasmic genetic male sterility

उपरोक्त वर्णन से स्पष्ट है कि इस प्रकार की नरबन्ध्यता की सहायता से संकर बीज उत्पन्न करने के लिये मादा वंशक्रम (Female line) का आनुवंशिक संगठन (S) rr होना चाहिये। प्याज की प्रायः सभी प्रभेदों में (F) rr समजीनी वाले नर फलद पौधे आसानी से मिल जाते हैं। अतः विभिन्न प्रभेदों में इटालियन रेड प्रभेद के नरबन्ध्य लक्षण का स्थानान्तरण बार-बार पूर्व संकरण (Back crossing) करके किया जा सकता है जिसमें इटालियन रेड को दाता पित्र (Donor parent) और नर फलद प्रभेद को आवर्ती पित्र (Recurrent parent) के रूप में प्रयोग करते हैं। इस प्रकार से 6-8 पूर्व संकरणों से ऐसे पौधे प्राप्त हो जाते हैं जो नरबन्ध्य होते हैं तथा अन्य सभी

लक्षणों में नर फलद किस्म के समान होते हैं। इसे निम्नलिखित प्रकार से समझाया जा सकता है।

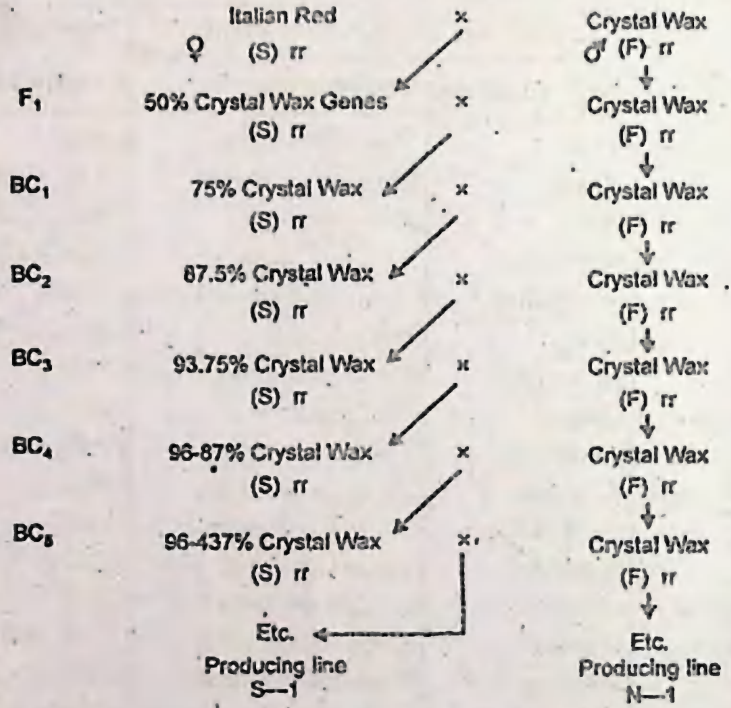

चित्र : नरबन्ध्य इटालियन रेड से क्राइस्टल वैक्स की नरबन्ध्य वंशक्रमों के विकास की विधि।

संकर बीज उत्पादन के लिये नरबन्ध्य वंशक्रमों के उत्पादन के बाद दूसरा चरण नरबन्ध्य वंशक्रमों की संयोग क्षमता (Combining ability) का परीक्षण आवश्यक होता है जिससे सर्वोत्तम संकर उत्पन्न किये जा सकें। अतः नर वंशक्रमों के आनुवंशिक संगठन (F) RR, (F) Rr तथा (F) rr हो सकते हैं। प्याज में संकरण बीज का नर फलद होना आवश्यक नहीं है क्योंकि प्याज में कन्द (Bulb) वानस्पतिक भाग उपज होती है।

जिन फसलों में उपज बीज होती है उनमें संकर बीज प्राप्त करने के लिये थोड़ी भिन्न विधि अपनाई जाती है तथा बीज वाली फसलों में संकर पौधों में नर फलद पौधों का होना आवश्यक होता है उदाहरणार्थ मक्का में संकर पौधों को आवश्यक पराग प्रदान करने के लिये दो विधियों का प्रयोग किया जाता है। (1) नरबन्ध्य संकर बीज में नर फलद संकर बीज को मिलाकर तथा (2) नर फलदता पुन: स्थापन जीन्स के प्रयोग द्वारा।

नरबन्ध्य बीज में नर फलद संकर बीज को मिलाने की आवश्यकता इसलिये होती है कि कभी-कभी नर फलदता पुनः स्थापित करने वाले जीन्स नहीं मिलते हैं अतः बन्ध्य वंशक्रम और नर फलदता वंशक्रमों के संकर सदैव नरबन्ध्य ही होते हैं और नरबन्ध्य पौधों पर बीज बनाने के लिये अन्य पौधों से पराग की आवश्यकता होती है जो नर फलद पौधों से प्राप्त होता है। उदाहरणार्थ यदि कोई पौधा नरबन्ध्य A हो तो पूर्व संकरण द्वारा A नरबन्ध्य वंशक्रम उत्पन्न की जा सकती है। इस A नरबन्ध्य वंशक्रम का B नर फलद वंशक्रम के साथ संकरण करके A × B संकर उत्पन्न कर सकते हैं परन्तु यह संकर भी नरबन्ध्य ही होगा। अतः वाणिज्य फसल (Commercial crop) उत्पन्न करने के लिये इनमें नर फलद (A × B) संकर बीज मिलाना पड़ेगा। परन्तु यदि B वंशक्रम में नर फलदता पुनः स्थापित जीन हो तो संकर बीज नर फलद होगा।

नरबन्ध्य उभयांगी पौधों (Hermaphrodite plants) में संकर बीज उत्पादन के लिये नपुंसीकरण की आवश्यकता नहीं होती है क्योंकि उनमें फलद पराग नहीं बनता है।

नरबन्ध्यता से लाभ (Advantages of Male Sterility)

(1) इसके कारण से उन फसलों में जहाँ संकर बीज उत्पादन बहुत खर्चीला होता है, कम खर्च में अधिक संकर बीज उत्पन्न कर सकते हैं तथा संकर ओज का उपभोग कर सकते हैं; जैसे—बाजरा तथा ज्वार आदि में।

(2) नरबन्ध्यता से नपुंसीकरण की अपेक्षा अधिक शुद्ध संकर बीज मिलता है।

(3) इसके प्रयोग से स्वपरागित फसलों जैसे गेहूँ और चावल आदि में संकर ओज का उपभोग कर सकते हैं।

मक्का में कोशिकाद्रव्य नरबन्ध्यता का उपभोग (Use of Cytoplasmic Male Sterility in Corn)

मक्का में कोशिका द्रव्यात्मक नरबन्ध्यता के उपयोग से द्विसंकरण संकर बीज उत्पादन के लिये तीन विधियों का प्रयोग किया जा सकता है जो निम्न प्रकार से हैं—

1. नर फलदता पुनः स्थापित जीवन की अनुपस्थिति में एक अन्तःप्रजात बन्ध्य (One inbred male sterile no restorer genes)—

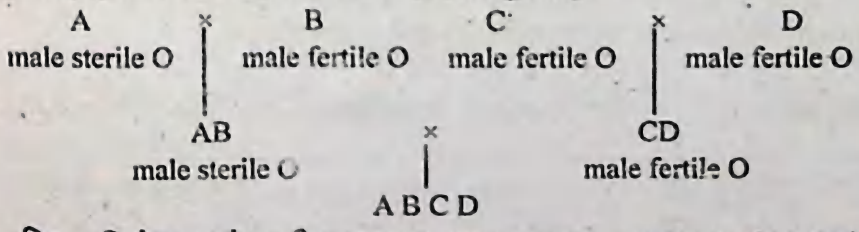

चित्र : द्विसंकरण संकर बीज उत्पादन (Double cross male sterile hybrid seed production)

उपरोक्त विधि में से किसी भी अन्तःप्रजात में नर फलदता पुनः स्थापित जींस नहीं होने के कारण द्विसंकरण संकर बीज (Double cross hybrid seed) A B C D

नरबन्ध्य होता है अतः इस बीज में फसल उत्पन्न करने के लिये यह आवश्यक होता है कि इस बीज के समान आनुवंशिक रूप वाला ऐसा द्विसंकरण बीज मिला देना चाहिये जो नर फलद हो अर्थात् नर के रूप में प्रयोग किया जाने वाला बीज उसी प्रकार से तैयार करना चाहिये, अन्तर केवल इतना होगा कि इसमें भी नरबन्ध्य अन्तः प्रजात का प्रयोग नहीं किया जायेगा। नरबन्ध्य और नर फलद द्विसंकर बीज का अनुपात 2 : 1 अथवा 3 : 1 रहना चाहिये।

2. एक अथवा दो अन्तः प्रजातों में नर फलदता पुनः स्थापित जीन्स की उपस्थिति में एक अन्तः प्रजात नरबन्ध्य (One inbred male sterile, either one or two inbreds with restorer genes)—

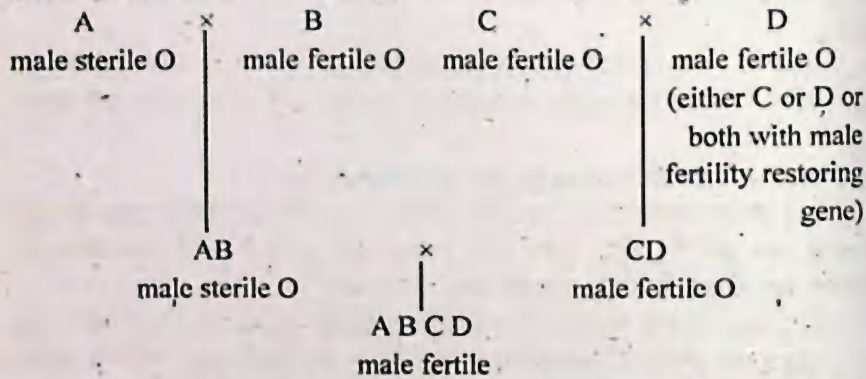

यदि एक अन्तः प्रजात C अथवा D में नर फलदता पुनः स्थापित जीन है तो 50% पौधे नर फलद होते हैं और यदि C तथा D दोनों में नर फलदता पुनः स्थापित जीन्स हो तो सभी पौधे नर फलद होते हैं।

उपरोक्त विधि द्वारा उत्पन्न द्विसंकरण संकर बीज में पौधे नर फलद होते हैं चाहे एक अन्तः प्रजात में नर फलदता पुनः स्थापित जीन्स हों अथवा दोनों में। अतः नर फलद बीज मिलाने की आवश्यकता नहीं होती है।

3. दो अन्तः प्रजात नरबन्ध्य तथा एक में नर फलदता पुनः स्थापित जीन्स (Two inbreds male sterile one inbred with restorer genes)—

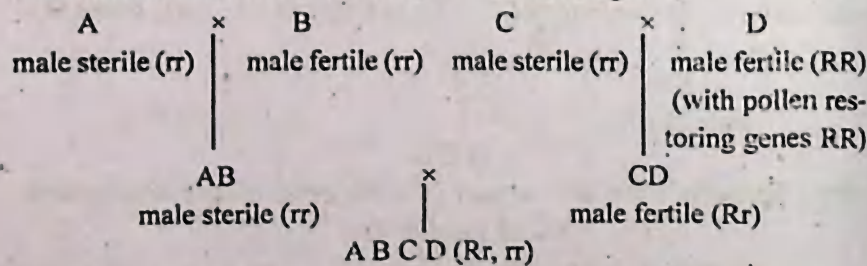

केवल 50% नर (Rr) फलद पौधे।

इस विधि में भी चूँकि 50% पौधे नर फलद (Rr) होते हैं। अतः नर फलद

पौधों की यह संख्या आवश्यकता से अधिक परागं प्रदान कर सकती है और बाहर से नर फलद बीज मिलाने की आवश्यकता नहीं होती है।

उपरोक्त तीनों विधियों में नरबन्ध्य अन्तः प्रजात को नर फलद पौधों से जिनकी आनुवंशिक रूप वैसी ही होती है परन्तु उसमें नर फलद कोशिकाद्रव्य होता है, संकरण करके बनाये रखा जाता है।

नरबन्ध्यता की सीमाएँ—

(1) खेत में कम बीज बनने के कारण संकर बीज उत्पादन की लागत अधिक हो सकती है।

(2) कुछ दशाओं में परिवर्तित वातावरण में कुछ अन्तः प्रजातों की नरबन्ध्यता समाप्त हो सकती है।

(3) कभी-कभी नरबन्ध्य अन्तः प्रजात के किसी रोग से ग्रसित हो जाने से भारी कठिनाई होती है; जैसे—बाजरा की टिप्ट 23 A वंशक्रम डाउनी मिल्ड्यू तथा अर्गट रोग के प्रति संवेदनशील होने से उसके संकर भी इन रोगों से संवेदनशील होते हैं।

(4) वाणिज्य संकरों में उचित तथा दक्ष नर फलदाता पुनः स्थापन पद्धति होनी आवश्यक होती है।

सारणी : स्व-अनिषेच्यता तथा नरबन्ध्यता में अन्तर

	स्व-अनिषेच्यता		नरबन्ध्यता
1.	जब नर और मादा दोनों युग्मकों फलद तथा सामान्य होते हुए भी आनुवंशिक अथवा कार्यिकीय कारण से परागनाल समय से भ्रूणकोष तक पहुँचकर निषेचन करने में असफल रहती है तो उस दशा को स्व-अनिषेच्यता कहते हैं।	1.	जब या तो परागाशय असामान्य होते हैं अथवा फलद युग्मक नहीं बनती हैं तो उस दशा को नरबन्ध्यता कहते हैं अर्थात् ऐसी दशा में फलद परागकण नहीं बनते हैं।
2.	स्व-अनिषेच्यता में अनिषेच्यता के लिये उत्तरदायी कारणों को अक्रियाशील करके स्व-परागण द्वारा बीज उत्पन्न किया जा सकता है।	2.	नरबन्ध्य पौधों में स्व-परागण करना सम्भव नहीं होता है तथा स्व-परागण से बीज नहीं बनाया जा सकता है।

प्रश्न 7. पादप प्रजनन क्या है ? इसके क्षेत्र तथा उद्देश्यों का वर्णन कीजिए।
What is Plant Breeding ? Describe its scope and objectives.

उत्तर—"पादप प्रजनन वह कला तथा विज्ञान है जिसके द्वारा पौधों को अधिक आर्थिक महत्त्व के बनाने के उद्देश्य से उनकी आनुवंशिकता में सुधार किया जाता है।"

पादप प्रजनन कम से कम दो प्रकार से एक अद्वितीय विज्ञान है। प्रथम यह

विज्ञान के ज्ञान और तकनीकों का उपयोग करती है तथा दूसरे कृषि की प्रगति में इसका योगदान न केवल उपयोगी सूचना देना है बल्कि असंख्य सृष्टों की बढ़ोत्तरी में भी सहायक होता है; जैसे—फसलों की नई-नई किस्में, संकर तथा कृत्तकों (Clones) आदि।

पादप प्रजनन की प्रकृति—कला अथवा विज्ञान
(NATURE OF PLANT BREEDING—ART OR SCIENCE)

पादप प्रजनन का आरम्भ कृषि के साथ ही हुआ तथा प्रारम्भ में इसका रूप पूर्णतः कलात्मक ही था अर्थात् पादप प्रजनन का जन्म कला के रूप में उस समय हुआ जब मनुष्य ने प्रकृति में अपनी आवश्यकता और इच्छानुसार पौधों को छाँटकर उगाना आरम्भ किया। इस प्रकार से पादप प्रजनन की प्रारम्भिक विधि 'चयन' (Selection) है। धीरे-धीरे जैसे-जैसे मनुष्य का पौधों से सम्बन्धी ज्ञान बढ़ा तो उसने अधिक होशियारी के साथ अच्छे पौधों को छाँटकर उगाना आरम्भ किया क्योंकि उस समय मनुष्यों को पादप सम्बन्धी वैज्ञानिक ज्ञान नहीं था, अतः पौधों का चयन पूर्णतः मनुष्यों की बुद्धि और बुद्धितापूर्ण निर्णय पर ही निर्भर था। उनके इस चयन के परिणामस्वरूप बहुत-सी कृषिगत फसलों का विकास हुआ। आज भी फसलों का सुधार तथा उत्तम किस्मों का विकास बहुत कुछ पौधा पादप प्रजनकों की उत्तम तथा आर्थिक महत्त्व के पौधे छाँटने की योग्यता पर निर्भर है। उस समय में भी बहुत से पादप प्रजनक अति शीघ्र एक ही जाति के पौधों में आर्थिक महत्त्व की विविधताओं को पहचान लेते थे तथा उनका प्रयोग पौधों के सुधार के लिये करते थे अतः उनके लिये पादप प्रजनन पूर्णतः कला थी।

परन्तु जैसे ही प्रजनकों का आनुवंशिक ज्ञान बढ़ा तथा अन्य विज्ञान की अन्य शाखाओं का उन्हें ज्ञान हुआ तो पादप प्रजनन में विज्ञान का अधिक प्रयोग होने लगा और कला का प्रयोग कम होता चला गया। पादप प्रजनक को पहले नई किस्मों को निकालने के लिये प्राकृतिक विभिन्नताओं पर निर्भर रहना पड़ता था परन्तु आज वह वैज्ञानिक ज्ञान के आधार पर अपनी इच्छानुकूल नये प्रकार के पौधे उत्पन्न कर सकता है तथा वह अपने वैज्ञानिक ज्ञान के आधार पर पौधों की आनुवंशिकता को अपनी आवश्यकता एवं इच्छानुकूल मोड़ दे सकता है। यद्यपि आज भी पादप प्रजनकों के लिये पौधों के चयन की कला उतनी ही महत्त्वपूर्ण है जितनी कि प्राचीन काल के पादप प्रजनकों (Plant Breeders) के लिये थी, परन्तु अब केवल उससे ही काम नहीं चलता है बल्कि आधुनिक पादप प्रजनन पूर्णतः सूझ-बूझ के साथ प्रयोग किये गये आनुवंशिक सिद्धान्तों पर आधारित होती है जिसके लिये पादप रोगों (Plant diseases) तथा उनके फैलने के कारणों तथा अन्य कारण जो कि पौधों की अनुकूलनता (Adaptation) आदि को प्रभावित करते हैं, का ज्ञान अति आवश्यक है। अतः अब यह कहा जा सकता है कि आधुनिक प्रजनन पूर्णतः विज्ञान है जो कि आनुवंशिकता के सिद्धान्तों पर आधारित होती है।

पादप प्रजनन का क्षेत्र
(FIELD OF PLANT BREEDING)

पादप प्रजनन के क्षेत्र को तीन मुख्य भागों में विभाजित किया जा सकता है—

(1) जर्मप्लाज्म अथवा पादप जीन संसाधन (Germplasm or Plant Genetic Resources),

(2) प्रजनन विधियाँ (Breeding Techniques) एवं

(3) बीज उत्पादन विधियाँ (Seed Production Techniques)।

1. जर्मप्लाज्म (Germplasm)

पौधे की प्रजातियों (Species) में उपस्थित कुल विभिन्नता को उस फसल का जर्मप्लाज्म कहते हैं (Germplasm of a crop may be defined as the sum total of a hereditary material of the crop species and their relatives)। पादप प्रजनन का यह एक मुख्य क्षेत्र (Area) है। इसमें हम जंगली एवं कृषित पौधों की विभिन्नता को इकट्ठा करना (Collection), संरक्षण (Conservation), मूल्यांकन (Evaluation), इनकी सूचना रखना (Documentation) एवं इनका पादप प्रजनन में उपयोग करना आता है। अब बहुत से पादप प्रजनन संस्थानों में इसको एक अलग विभाग बना दिया गया है।

2. प्रजनन विधियाँ (Breeding Techniques)

पादप प्रजनन का एक मुख्य भाग है जिसमें आनुवंशिकी के नियम एवं विधियों का पौधों के सुधार के लिये प्रयोग करते हैं। इसके अन्तर्गत विभिन्न पादप प्रजनन की विधियाँ, उनके उपयोग, लाभ एवं हानियाँ आदि आते हैं। इसके अन्तर्गत सामान्य एवं मिशन आधारित प्रोग्राम; जैसे—पादप कीट एवं रोग रोधी प्रजनन, सूखा रोधी प्रजनन, गुण सुधार प्रजनन इत्यादि।

3. बीज उत्पादन विधियाँ (Seed Production Techniques)

यह तीसरा मुख्य पादप प्रजनन का क्षेत्र है। पादप प्रजनन द्वारा विकसित जातियों के बीज का शुद्ध रूप से गुणन करना एक मुख्य कार्य है जिससे शुद्ध बीज किसानों को उपलब्ध हो सके। अब बीज उत्पादन भी एक अलग विभाग के रूप में विभिन्न कृषि संस्थानों एवं कृषि विश्वविद्यालयों में स्थापित हो चुका है। इसके अन्तर्गत उन्नत बीज उत्पादन के सिद्धान्त एवं विधियाँ आती है।

पादप प्रजनन के उद्देश्य
(OBJECTIVES OF PLANT BREEDING)

पादप प्रजनन का मुख्य उद्देश्य पौधों में स्थायी आनुवंशिक परिवर्तन लाना है, जिससे उन्हें अधिक आर्थिक महत्त्व का बनाया जा सके। पौधों में इस प्रकार के परिवर्तनों से उनके विभिन्न लक्षणों में स्थायी आनुवंशिक सुधार किया जाता है। पादप प्रजनन के कुछ महत्त्वपूर्ण उद्देश्य निम्नलिखित हैं—

1. अधिक उपज—विभिन्न फसलों की स्थानीय कृषिगत किस्मों से अधिक उपज देने वाली किस्मों का निर्माण करना पादप प्रजनक का मुख्य उद्देश्य होता है।

2. उत्पाद के गुणों (Qualities) में सुधार करना—पादप प्रजनन का उद्देश्य केवल अधिक उपज बढ़ाना ही नहीं होता है बल्कि इसके साथ-साथ उपज सभी सद्गुणों (Good qualities) से सम्पन्न भी होनी चाहिये, क्योंकि किसी खेत से किसान को कितनी वास्तविक आमदनी (Net income) होगी, यह फसल की उपज और उसके गुणों दोनों पर निर्भर होती है क्योंकि यदि उपज अधिक हो और गुण खराब हों तो बढ़ी हुई उपज से पैसा अधिक मिलने के बजाय कम ही प्राप्त होगा और किसान को लाभ के स्थान पर हानि ही होगी। अतः उपज बढ़ाने के साथ-साथ उसके गुण भी अच्छे होने चाहिये। उदाहरणार्थ कपास में लम्बा तथा शक्तिशाली रेशा, फलों के आकर्षक रंग, लुभावनी महक, अधिक रस तथा आसानी से अलग हो सकने वाला छिलका आदि सद्गुण हैं।

3. ऐसी किस्म निकालना जो सभी तरह से उत्पादकों तथा उपभोक्ताओं की अधिक से अधिक आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके।

4. अवरोधी किस्मों का विकास—ऐसी किस्मों का निर्माण करना जोकि वातावरण की असामान्य दशाओं (Abnormal conditions) से कम प्रभावित हों—भूमि, पानी तथा मौसम की असामान्य दशाओं में प्रायः साधारण पौधों की वृद्धि तथा उपज बहुत ही कम होती है; जैसे—अम्लीय अथवा क्षारीय भूमि, पानी की कमी (Drought), अधिक गर्मी, अधिक सर्दी आदि दशाएँ। अतः नई किस्मों में ऐसी क्षमता होनी चाहिये जो इन असामान्य दशाओं से कम से कम प्रभावित हों।

5. अधिक दक्षता वाली किस्मों का विकास—नई किस्मों में खाद अथवा उर्वरकों तथा सिंचाई का अधिक उपयोग करने की क्षमता होनी चाहिये।

6. रोग तथा कीट अवरोधी किस्मों का विकास—ऐसी किस्मों का निर्माण करना जो रोगों तथा हानिकारक कीटों (Pests) का सफलतापूर्वक प्रतिरोध कर सकें।

7. अनुकूलनता में वृद्धि—ऐसी किस्मों का निर्माण जो एक बहुत बड़े क्षेत्र में सफलतापूर्वक उगाई जा सकें।

8. शीघ्र पकने वाली किस्मों का विकास करना।

9. किसी फसल की ऐसी प्रभेदों का विकास जो ऐसे स्थानों पर उगाई जा सकें जहाँ पहले वह फसल न उगाई जा सकती हो; जैसे—दलदली भूमि अथवा रेगिस्तान में।

10. पौधों की वृद्धि प्रकृति में परिवर्तन—पौधों के कुछ लक्षणों की वृद्धि प्रकृति में ऐसे परिवर्तन करना जिससे वे अधिक उपज दे सकें; जैसे—गेहूँ में बौनापन, छोटी, मोटी एवं सीधी खड़ी हुई संकीर्ण पत्तियाँ, अधिक दौजी बनना/कठोर तना आदि।

11. नये क्षेत्रों में फसल विस्तार (Extension of crop to new areas)—पादप प्रजनक हमेशा प्रयास करते हैं कि ऐसी किस्में उत्पन्न करें जो फसल को ऐसे स्थानों पर उगाने में सहायक हों जहाँ वह फसल पहले नहीं उगायी जा रही थी जैसे अब पंजाब में धान और पश्चिमी बंगाल में गेहूँ की फसल उगाई जाती है जबकि पहले ये फसलें वहाँ नहीं उगाई जाती थीं।

12. एक साथ पकने वाली फसलें (Synchronous growth)—मूँग आदि में ऐसी जातियाँ निकालना जोकि एक साथ पकती हो जिससे एक साथ सम्पूर्ण फसल की कटाई की जा सके।

13. कम समय में पकने वाली किस्में विकसित करना। अरहर आदि से शीघ्र पकने वाली जातियाँ विकसित करना जिससे एक वर्ष में एक से अधिक फसल ली जा सके।

प्रश्न 8. गेहूँ के प्रजनन के मुख्य उद्देश्यों, विभिन्न तरीकों तथा उपलब्धियों का वर्णन कीजिए।

Give major breeding objectives, various procedures of breeding and achievements in Wheat.

अथवा

गेहूँ में प्रजनन के मुख्य उद्देश्य क्या है ?

What are major breeding objectives in Wheat ? (CSJM, 2011)

अथवा

गेहूँ फसल के प्रजनन उद्देश्य क्या हैं ?

What is breeding object of Wheat Crops ? (CSJM, 2014)

उत्तर—गेहूँ (Wheat; ट्रिटिकम एस्टिवम, Triticum aestivum; 2n = 6x = 42)

गेहूँ ग्रैमिनी कुल का पौधा है। यह शीतोष्ण जलवायु (Temperate climate) की प्रमुख खाद्यान्न फसल है। भारत में गेहूँ का स्थान चावल के बाद दूसरे नंबर पर है। इसकी खेती मुख्य रूप से उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, पंजाब, राजस्थान, महाराष्ट्र, बिहार एवं गुजरात में होती है। गेहूँ का एक अद्वितीय गुण यह है कि इसके दानों में ग्लूटेन पाया जाता है; ग्लूटेन के ही कारण इसके आटे से फूली हुई डबल रोटी बन पाती है। गेहूँ का उपयोग चपाती (रोटी), डबलरोटी (Bread), पेस्ट्री (Pastry), बिस्कुट, नूडल (Noodles) आदि बनाने के लिये किया जाता है।

कृष्ट स्पेसीज (Cultivated Species)

गेहूँ की निम्नलिखित तीन कृष्ट स्पेसीजों हैं :

(1) ट्रिटिकम मोनोकाकम (*T. monococcum*),

(2) ट्रिटिकम टर्जिडम (*Triticum turgidum*) एवं

(3) ट्रिटिकम एस्टिवम (*Triticum aestivum*)।

ट्रिटिकम मोनोकाकम (*Triticum monococcum*, 2n = 2x = 14)—इस स्पेसीज में पहले की निम्नलिखित स्पेसीजें शामिल हैं : ट्रि० बोएटिकम (T. boeticum), ट्रि० थाडार (T. thaudar) एवं ट्रि मोनोकाकम (T. monococcum)। इसे आइन्कार्न गेहूँ (Einkorn wheat) कहा जाता है। यह सबसे आदिम धान्यों (Primitive cereals) में से एक है और आजकल इसका बहुत कम आर्थिक महत्त्व है।

ट्रिटिकम टर्जिडम (*Triticum turgidum*; 2n = 4x = 28)—इस स्पेसीज में

डाइकाकन (dicoccon, Syn., t. dicoccum), *ड्यूरम (durum)*, *टर्जिडम (turgidum)*, *पोलोनिकम (polonicum)* एवं *कार्थलीकम (carthlicum)* वेराइटी समूह हैं। भारत में *ट्रि० टर्जिडम* की वेराइटी *ड्यूरम* (ड्यूरम गेहूँ) की महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश एवं गुजरात में व्यापक रूप से बरानी (Rainfed) खेती होती है। इसकी तुलना में वेराइटी डाइकाकन (dicoccon; एमर गेहूँ, Emmer wheat) की खेती बहुत कम होती है, जबकि वेराइटी टर्जिडम की खेती लगभग नगण्य ही है।

ट्रिटिकम एस्टिवम (*Triticum aestivum*, $2n = 6x = 42$)—इस स्पेसीज के *स्पेल्टा (spelta)*, *वैविलोवी (vavilovii)*, *एस्टिवम (aestivum)*, *काम्पैक्टम (compactum)* एवं *स्फेरोकाकम (sphaerococcum)* वेराइटी समूह होते हैं। इन सभी में से *ट्रि० एस्टिवम वेरा० एस्टिवम* (डबलरोटी गेहूँ, Bread wheat, या केवल गेहूँ) की भारत तथा अन्य देशों में सबसे अधिक खेती होती है। इसके दाने सामान्यतया सफेद, गेहुँआ या लाल होते हैं। इसके दानों का उपयोग डबलरोटी एवं चपाती बनाने के लिये किया जाता है। वेराइटी स्फेरोकाकम की खेती लगभग नगण्य है।

उद्गम एवं विकास (Origin and Evolution)

ट्रि० एस्टिवम का उद्गम अफगानिस्तान उद्गम केन्द्र में हुआ है। केवल चतुर्गुणित (*ट्रि० एस्टिवम*, जिनोम AA BB DD) की खेती व्यापक स्तर पर होती है। इनके विकास का इतिहास स्पष्ट नहीं है। ऐसी मान्यता है कि गेहूँ का विकास निम्नलिखित दो चरणों में हुआ है।

1. सबसे पहले उन दो द्विगुणित स्पेसीजों, जिनसे जिनोम A एवं B प्राप्त हुए हैं, में संकरण हुआ। इस प्रकार उत्पन्न F_1 के क्रोमोसोम द्विगुणन से चतुर्गुणित गेहूँ (जिनोम AA BB) का उद्गम हुआ (सारणी)। इस चतुर्गुणित गेहूँ से *ड्यूरम*, *टर्जिडम*, *डाइकाकन* आदि वेराइटी समूहों की उत्पत्ति हुई। आधुनिक अवधारणा के अनुसार जिनोम की स्रोत स्पेसीज *ट्रि० टास्चाई (T. tauschii)* है।

सारणी : गेहूँ के A, B एवं D जिनोमों की स्रोत जनक स्पेसीजें

जिनोम (Genome)	स्रोत स्पेसीज (Source species): चिरप्रतिष्ठित अवधारणा (Classical concept)	आधुनिक अवधारणा (Recent concept)
A	*ट्रि० मोनोकाकम (T. monococcum)*	*ट्रि० उरार्टू (T. urartu)*
B	*एजिलाप्स स्पेल्टाइडिस (Aegilops speltoides)*	अज्ञात
C	*एजिलाप्स स्क्वैरोसा (Aegilops squarrosa)*	*ट्रि० टास्चाई (T. tauschii)*

जनन (Reproduction)

गेहूँ में लैंगिक जनन होता है। इसके फूल उभयलिंगी (Bisexual) होते हैं।

सामान्यतया, इसमें पुष्पन (Anthesis) परागण के बाद होता है। अतः इसमें परपरागण 1% से भी कम होता है। लेकिन कभी-कभी 3-4% तक परपरागण हो सकता है। इसके पुष्पक्रम (Inflorescence) को स्पाइक (Spike) कहा जाता है। मुख्य तलशाखा (Tiller) के स्पाइक का पुष्पन सबसे पहले होता है; इसके बाद, अन्य तलशाखों का पुष्पन होता है। सवेरे 9 से 10.30 बजे के दौरान सबसे अधिक पुष्पन होता है। एक स्पाइक का पूरी तरह पुष्पन होने में 2-3 दिन लगते हैं।

नियन्त्रित परागण (Controlled pollination) के लिये, जब परागकोष (Anthers) हल्के हरे रंग के रहते हैं, तभी विपुंसन (Emasculation) करते हैं। चुने गये प्रत्येक स्पाइकिका (Spikelet) में से बीच के पुष्पक (Floret) को निकाल देते हैं। लेमा (Lemma) एवं पेलिया (Palea) के सिरों को परागकोषों के सिरों से थोड़ा ऊपर से कैंची से काट देते हैं। इसके बाद, सभी पुष्पकों के परागकोषों को एक पतले सिरे वाली चिमटी की सहायता से निकाल देते हैं। परागण के लिये नर जनक की स्पाइक के पुष्पकों को परागकोषों के सिरों के थोड़ा ऊपर कतर देते हैं। इस स्पाइक को धूप में गरम करते हैं, जिससे परिपक्व परागकोष कटे पुष्पकों के बाहर निकल आते हैं। इस प्रकार के कई स्पाइकों के गुच्छ को विपुंसित स्पाइक के ठीक ऊपर हिलाते हैं, जिससे इन स्पाइकों के परागकोषों से मुक्त हुए परागों द्वारा विपुंसित पुष्पकों का परागण होता है।

प्रजनन उद्देश्य (Breeding Objectives)

गेहूँ प्रजनन के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं—

1. उपज (Yield)—उपज में सुधार हमेशा ही मुख्य उद्देश्य होता है। उपज के प्रमुख घटक लक्षण निम्नलिखित हैं : (1) प्रति एकक (Unit) क्षेत्र में स्पाइकों की संख्या, (2) प्रति बाली (= स्पाइक) दानों की संख्या एवं (3) परीक्षण भार (Test weight = 1,000 दानों का भार)।

2. रोग रोधिता (Disease Resistance)—रोग रोधिता (Disease resistance) बहुत ही महत्त्वपूर्ण उद्देश्य है। भारत में गेहूँ के महत्त्वपूर्ण रोग निम्नलिखित हैं : किट्ट (Rusts; तना, भूरी एवं धारीदार किट्ट), पर्ण शीर्णता (Leaf blight), करनाल बंट (Karnal bunt), श्लथ कंड (Loose smut) आदि।

3. गुणवत्ता (Quality)—गुणवत्ता, जैसे दानों का रंग, दानों का आमाप, दानों की चमक एवं कठोरता, प्रोटीन अंश, ग्लूटेन सामर्थ्य (Gluten strength), पेषण (Milling) एवं बेकिंग गुणवत्ता आदि, में सुधार एक महत्त्वपूर्ण प्रजनन उद्देश्य है।

4. अजैविक प्रतिबल रोधिता (Resistance to Abiotic Stresses)—आर्द्रता एवं लवणता प्रतिबलों (Stresses), पतन (Lodging) आदि के लिये रोधिता का महत्त्व बढ़ता जा रहा है।

5. व्यापक अनुकूलन (Wide Adaptation)—अधिक व्यापक अनुकूलनशीलता (Adaptability) एक महत्त्वपूर्ण प्रजनन उद्देश्य है।

प्रजनन युक्तियाँ (Breeding Approaches)

विभिन्न प्रजनन युक्तियों एवं उनकी उपलब्धियों का संक्षिप्त वर्णन निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत दिया गया है : (1) पुरःस्थापन (Introduction), (2) शुद्ध वंशक्रम वरण (Pureline selection), (3) किस्म संकरण (Varietal hybridization), (4) दूरस्थ संकरण (Distant hybridization), (5) उत्परिवर्तन प्रजनन (Mutation breeding) एवं (6) अन्य युक्तियाँ।

1. पुरःस्थापन (Introduction)—भारत में गेहूँ की कई किस्में प्राथमिक या द्वितीयक पुरःस्थापन से प्राप्त हुई हैं। प्राथमिक पुरःस्थापन के कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं : आस्ट्रेलिया से 'रिड्ले' (Ridey; किट्ट रोधी, पहाड़ों में व्यापक खेती), मेक्सिको से सोनोरा 64 (Sonora 64) एवं लर्मा रोहो (Lerma Rojo) आदि। पुरःस्थापित लाइनों/किस्मों का संकरण कार्यक्रमों व्यापक उपयोग किया गया है; इस प्रकार की कुछ लाइनें/किस्में निम्नलिखित हैं : फेडरेशन (Federation), थैचर (Thatcher), गाबो (Gabo), गाजी (Gazin) आदि। गेहूँ की दो बौनी किस्मों, कल्याण सोना एवं सोनालिका, जो कि 1960 एवं 1970 के दशकों की प्रमुख किस्में थी, सिमिट (CIMMYT), मेक्सिको से पुरःस्थापित लाइनों में वरण से प्राप्त हुई थीं।

2. शुद्ध वंशक्रम वरण (Pureline Selection)—गेहूँ की सबसे पहले विकसित होने वाली सुधरी किस्में, जैसे NP4 (NP = New Pusa, नई पूसा), NP6, NP12 आदि, इसी प्रजनन विधि से प्राप्त हुई थीं। ये किस्में भारत एवं विदेशों में भी काफी लोकप्रिय हुई थीं। NP4 किस्म को 1916-1920 के दौरान विश्व की सर्वोत्कृष्ठ गुणवत्ता वाली किस्म माना गया था। कुछ किस्मों का विकास पुरानी शुद्ध वंशक्रम किस्मों में वरण से किया गया था, जैसे सुजाता (H617) C306 से किया गया वरण है। कुछ अन्य लोकप्रिय किस्में, जो कि शुद्ध वंशक्रम वरण से प्राप्त हुई थीं, निम्नलिखित हैं : C13 (= K13), टाइप 9, पंजाब टाइप 11, पंजाब टाइप 8A, C46, AO90, बंशी 168, बंशी 224 आदि।

3. किस्म संकरण (Varietal Hybridization)—वर्ष 1925 के बाद विकसित की गई अधिकांश किस्में संकरण से प्राप्त हुई हैं (सारणी)। संकरण कार्यक्रमों में एकल संकरों का सबसे अधिक उपयोग किया गया है, लेकिन त्रिसंकरों एवं अधिक जटिल संकरों का भी उपयोग दिया गया है। भारत में संकरण विधि से विकसित पहली किस्म NP114 थी; इसको 'फेडरेशन' एवं NP4 के बीच प्राकृतिक संकरण (Natural hybridization) से प्राप्त संततियों से विकसित किया गया था। NP114 श्लथ कंड (Loose smut) से मुक्त रहती है। आजकल की अधिकांश किस्में बौनी हैं। बौनी किस्मों में से अधिकांश का विकास देशी × विदेशी (Exotic) लाइनों में संकरणों से हुआ है। सामान्यतया, सबसे अच्छे निष्पादन (Performance) वाली किस्मों का

अच्छी संयोजन क्षमता (Combining ability) वाला होना कोई आवश्यक नहीं होता है। अतः संकरण के लिये अच्छे जनकों का चयन केवल उनके निष्पादन के आधार पर करना उपयुक्त नहीं होता है। यहाँ तक कि GCA (General Combining Ability, सामान्य संयोजन क्षमता) के आधार पर भी जनकों की संकरण में उपयोगिता का पूर्वानुमान एकदम सटीक नहीं होता है।

संकरण से प्राप्त पीढ़ियों में वंशावली पद्धति (Pedigree method) के अनुसार वरण आदि करते हैं। कई प्रजनक वंशावली पद्धति के थोड़े बहुत परिवर्तित रूपों का भी उपयोग करते हैं। इसके अलावा प्रतीप संकरण विधि (Back cross method) से भी कई किस्मों का विकास किया गया है; जैसे खर्चिया 65, NP852, N15439, IWP72, HUW234, K8027 आदि। हाल ही में विमोचित कुछ किस्में हैं, गंगा, PbW343, KR119 आदि।

4. दूरस्थ संकरण (Distant Hybridization)—डबलरोटी गेहूँ (Bread wheat = षट्गुणित गेहूँ) का संकरण चतुर्गुणित गेहूँ से किया गया है : इन संकरणों से कई किस्मों का विकास किया गया है (सारणी)। इसके अलावा, चतुर्गुणित गेहूँओं से षट्गुणित गेहूँ में कीट रोधिता, रोग रोधिता (जैसे, खप्ली इमर, Khapli emmer, से किट्ट रोधिता आदि) का स्थानान्तरण किया गया है। इस प्रकार के जीन स्थानान्तरण अन्य सम्बन्धी स्पेसीजों, जैसे *एंजिलोप्स (Aegilops), सीकेल (Secale)* आदि से भी किये गये हैं।

5. उत्परिवर्तन प्रजनन (Mutation Breeding)—भारत में कई किस्मों का विकास स्वतः उत्परिवर्तनों (Spontaneous mutations) के उपयोग से हुआ है, जैसे NP4 किस्म से NP111 का विकास। प्रेरित उत्परिवर्तनों (Induced mutations) का गेहूँ प्रजनन में उपयोग उन्नीसवीं शताब्दी के पाँचवें दशक में आरम्भ हुआ। NP799 का एक शूकी (Awned) उत्परिवर्ती NP836 किस्म के रूप में 1955 में विमोचित (Release) हुआ था। वर्ष 1967 में सोनोरा 64 (Sonora 64) एवं लर्मा रोहो (Lerma Rojo) के गेहुँए रंग के दानों वाले उत्परिवर्तियों को क्रमशः 'शरबती सोनोरा' एवं 'पूसा लर्मा' के नाम से नई किस्मों के रूप में विमोचित किया गया था।

अन्य युक्तियाँ (Other Approaches)—कल्याण सोना किस्म पर आधारित तीन बहुलाइन किस्मों (Multiline varieties), KSML3, MLKS11 एवं KML 7406, का विकास किया गया है; लेकिन ये किस्में लोकप्रिय नहीं हो सकी हैं। संकर गेहूँ के विकास के लिये प्रयास किये गये हैं। इनके फलस्वरूप, कोशिकाद्रव्यी आनुवंशिक नर बंध्यता (Cytoplasmic-genetic male sterility) पद्धतियों का विकास किया गया है, लेकिन इनका व्यापारिक उपयोग नहीं किया जा सका है। लवणता सहिष्णुता के लिये प्रजनन काफी सफल रहा है और कई सुधरी लवणता सहिष्णु किस्मों, जैसे KRL1-4, KRL13, KRL19 आदि का विकास किया गया है।

सारणी : किस्म संकरणों द्वारा विकसित गेहूँ की कुछ किस्में

संकरण का प्रकार (Type of cross)	देशी × देशी (Indigenous × indigenous) (लम्बी किस्में)	देशी × विदेशी (Indigenous × Exotic) (लम्बी एवं बौनी किस्में)	विदेशी × विदेशी (बौनी किस्में)
एकल संकरण (Single cross)	C217, C273 C518, NP52, RS31-1, NR52	लम्बी किस्में : C228, C250, K65, K68, NP120, NP710, NP 720, NP760, NP770, NP832, NP835, NP846 बौनी किस्में : HD 1949, HD2204, HD2281, HD2402, HUW12, जनक, K 8020, राज 2185, राज 2535, WH291	गिरिजा, HB208, UP262, UP1109, शैलजा
त्रिसंकर (Three-way cross)	—	लम्बी किस्में : NP809, UP818 बौनी किस्में : DWR39, HD2270, HD2285, HUW37, HUW213	HS86, WL711
द्विसंकर (Double cross)	—	लम्बी किस्में : NP823, NP824, NP825 बौनी किस्में : HUW55, UP115, WH157, WH331	—
जटिल संकर (Complex cross)	—	लम्बी किस्में : C306	—

अंतरास्पेसीज संकरण (Interspecific Hybridization)

ट्रि० एस्टिवम × ट्रि० टर्जिडम वेरा० डाइकाकान :	A 113, A 115, AO 68
ट्रि० टर्जिडम वेरा० डाइकाकन × ट्रि० एस्टिवम :	C 286
ट्रि० टर्जिडम वेरा० ड्यूरम × ट्रि० एस्टिवम :	NP 890
ट्रि० टर्जिडम वेरा० ड्यूरम × ट्रि० टर्जिडम वेरा० डाइकाकान × ट्रि० एस्टिवम :	निफाड-4 (Niphad-4)

प्रश्न 9. संकर बीज उत्पादन का वर्णन कीजिए।

Describe the hybrid seed production.

अथवा

संकर किस्मों के दोष लिखिये।

Write the demerits of Hybrid Varieties. (CSJM, 2014)

उत्तर—संकर बीज उत्पादन (Hybrid Seed Production)—बड़े पैमाने पर संकर बीज उत्पादन के लिये निम्नलिखित अनिवार्यतायें हैं : (1) मादा जनक का आसान एवं कम खर्चीला विपुंसन (Emasculation), तथा (2) नर जनक के परागकणों का समुचित परिक्षेपण (Dispersal) या नर पुष्पों से मादा पुष्पों पर पहुँचना, जिससे मादा जनक का ठीक से परागण (Pollination) हो सके। अधिकांश परपरागित फसलों (Cross-pollinated crops) में पराग परिक्षेपण (Pollen dispersal) सन्तोषजनक होता है परन्तु लगभग सभी स्वपरागित फसलों (Self-pollinated crops) में यह एक समस्या होती है। धान में नर जनक की बातों को प्रतिदिन प्रातःकाल रस्सी की सहायता से हिलाया जाता है जिससे मादा जनक का ठीक से परागण हो सके। विपुंसन (Emasculation) के लिये सामान्यतया नर बन्ध्यता (Male sterility) का उपयोग किया जाता है; इसे **आनुवंशिक विपुंसन** (Genetic emasculation) कहते हैं। कुछ फसलों में विपुंसन एवं परागण हाथ से किया जाता है। संकर बीज का उत्पादन (Hybrid seed production) निम्नलिखित पाँच विधियों से किया जा सकता है।

1. कोशिकाद्रव्यी-आनुवंशिक नरबंध्यता द्वारा (Through Cytoplasmic-Genetic Male Sterility)—यह सर्वाधिक उपयोग की जाने वाली विधि है। इसका उपयोग मक्का, बाजरा, प्याज, सूरजमुखी, चुकन्दर आदि फसलों में किया जाता है। मक्के में एकल संकरों के बीज उत्पादन के लिये नर बंध्य मादा जनक (Aline) की प्रत्येक चार कतारों के बाद पुनःस्थापक (Restorer) और नर उर्वर (Male fertile) अन्तःप्रजात (R line) की दो कतारें उगाई जाती हैं। मादा जनक द्वारा उत्पन्न सभी बीज संकर (Hybrid, A × R) तथा नर उर्वर (Male fertile) होंगे, क्योंकि ये पुनःस्थापक जीन (Restorer gene) के लिये विषमयुग्मज (Heterozygous, Rr) होंगे (चित्र)।

त्रिसंकर (Triple cross) के बीज उत्पादन के लिये पहले नर बंध्य जनक (A line) को नर उर्वर परन्तु अपुनःस्थापक (Nonrestorer) अन्तःप्रजात (C) से संकरित कहते हैं। इस संकरण से प्राप्त संकर पौधे (A × C) नर बंध्य (Male sterile) होंगे; अब इनका संकरण पुनःस्थापक अन्तःप्रजात (Restorer inbred, R) से करते हैं। नर बंध्य संकर पौधों (A × C) पर बने सभी बीज त्रिसंकर (Triple cross) एवं नर उर्वर (Male fertile) होंगे। द्विसंकर (Double cross) के बीज उत्पादन के लिये नर बंध्य (Male sterile) एवं अपुनःस्थापक नर उर्वर अन्तःप्रजात (C) में तथा एक अन्य नर बंध्य (D) एवं एक पुनःस्थापक (R) अन्तःप्रजात में संकरण करके दो एकल संकर (Single cross), (A × C) एवं (D × R), उत्पन्न करते हैं। इसके बाद, इन दोनों एकल संकरों को आपस मे संकरित करते हैं; एकल संकर (A × C) नर बंध्य (Male

sterile) होगा और इस पर बने सभी बीज द्विसंकर (Double cross) होंगे (चित्र)। साधारणतया, नर बंध्य मादा जनक, एकल संकर (A × C), की प्रत्येक चार कतारों के बाद नर उर्वर पुनःस्थापक (Restorer) जनक, एकल संकर (D × R), की दो कतारें उगाई जाती हैं। इस प्रकार प्राप्त द्विसंकर के आधे पौधे नर बंध्य (rr) एवं आधे पौधे नर उर्वर (Rr) होंगे।

2. कोशिकाद्रव्यी नरबंध्यता (Cytoplasmic Male Sterility)—इस विधि में संरक बीज का उत्पादन प्रथम विधि के ही समान होता है। परन्तु इस विधि में पुनःस्थापक जीन (Restorer gene) नहीं उपलब्ध होता। अतः सभी संकर पौधे नर बंध्य होते हैं। इस विधि का बहुत कम उपयोग हुआ है।

3. आनुवंशिक नरबंध्यता (Genetic Male Sterility)—इस विधि में नर बंध्य (ms ms) अन्तःप्रजात को नर उर्वर (Ms Ms) अन्तःप्रजात से संकरित करते हैं। नर बंध्य अन्तःप्रजात पर बने सभी बीज संकर तथा नर उर्वर (Ms ms) होते हैं। इस विधि का उपयोग सं० रा० अ० में अरंडी एवं यूरोप में टमाटर के संकर बीज उत्पादन में होता है और भारतवर्ष में अरहर का संकर बीज उत्पादन सीमित पैमाने पर हो रहा है।

उपरोक्त विधियों में होने वाली समस्याओं का समाधान ताप संवेदी (Temperature sensitive) या दीप्तिकाल संवेदी (Photoperiod-sensitive) आनुवंशिक नर बंध्यता का उपयोग है। उदाहरण के लिये, धान का एक ताप संवेदी आनुवंशिक नर बंध्य (TGMS) क्रम 28°C से कम तापमान होने पर पूरी तरह नर उर्वर (Male fertile) होता है। लेकिन यह लाइन 30°C से अधिक तापमान होने पर पूरी तरह नर बंध्य होती है। इस नर बंध्य क्रम का संकर बीज उत्पादन में उपयोग निम्नलिखित विधि से करते हैं।

1. इस लाइन का गुणन (Multiplication) एक ऐसे क्षेत्र में करते हैं, जहाँ परिवर्धन (Development) की क्रांतिक (Critical) अवस्था में तापमान 28°C से कम रहता है। यहाँ ये पौधे पूरी तरह नर उर्वर होते हैं और सामान्य रूप से स्वपरागण द्वारा बीज उत्पन्न करते हैं। इसके फलस्वरूप, इस क्षेत्र में उगाये गये इस क्रम के पौधों के स्वपरागण से उत्पन्न बीजों से केवल नर बंध्य पौधे ही उत्पन्न होंगे।

2. संकर बीज उत्पादन के लिये इस TGMS लाइन को ऐसे क्षेत्र में उगाते हैं, जहाँ परिवर्धन की क्रांतिक अवस्था में तापमान 30°C से अधिक रहता है। इस कारण, इस क्रम के सभी पौधे नर बंध्य होते हैं। TGMS क्रम का परागण किसी भी ऐसे क्रम से किया जा सकता है, जो इससे संकरण करने पर अति उत्कृष्ट F_1 संकर उत्पन्न करता हो।

संकर बीज उत्पादन की उपरोक्त पद्धति सबसे अच्छी है (चित्र)। इस पद्धति की विशेषतायें निम्नलिखित हैं :

1. TGMS लाइन में नर उर्वर पौधे नहीं होते, जैसा कि साधारण आनुवंशिक नर बंध्यता के मामले में होता है।

2. TGMS लाइन का अनुरक्षण स्वपरागण द्वारा किया जाता है; ऐसा कुछ विशेष क्षेत्रों में किया जाता है (देखें, ऊपर)।

3. TGMS लाइन से अच्छी तरह संयोजन (Combination) करने वाली किसी भी लाइन को नर जनक के रूप में उपयोग कर संकर बीज उत्पादन कर सकते हैं।

कोशिकाद्रव्यी आनुवंशिक नर बंध्यता (CGMS) की सहायता से संकर बीज उत्पादन में निम्नलिखित तीन लाइनों की जरूरत होती है।

1. CGMS (कोशिकाद्रव्यी आनुवंशिक नर बंध्य लाइन) लाइन।
2. CGMS लाइन के अनुरक्षण के लिये एक अनुरक्षक लाइन।
3. संकर बीज उत्पादन में नर जनक के रूप में उपयोग होने वाली पुनःस्थापक लाइन (Restorer line)।

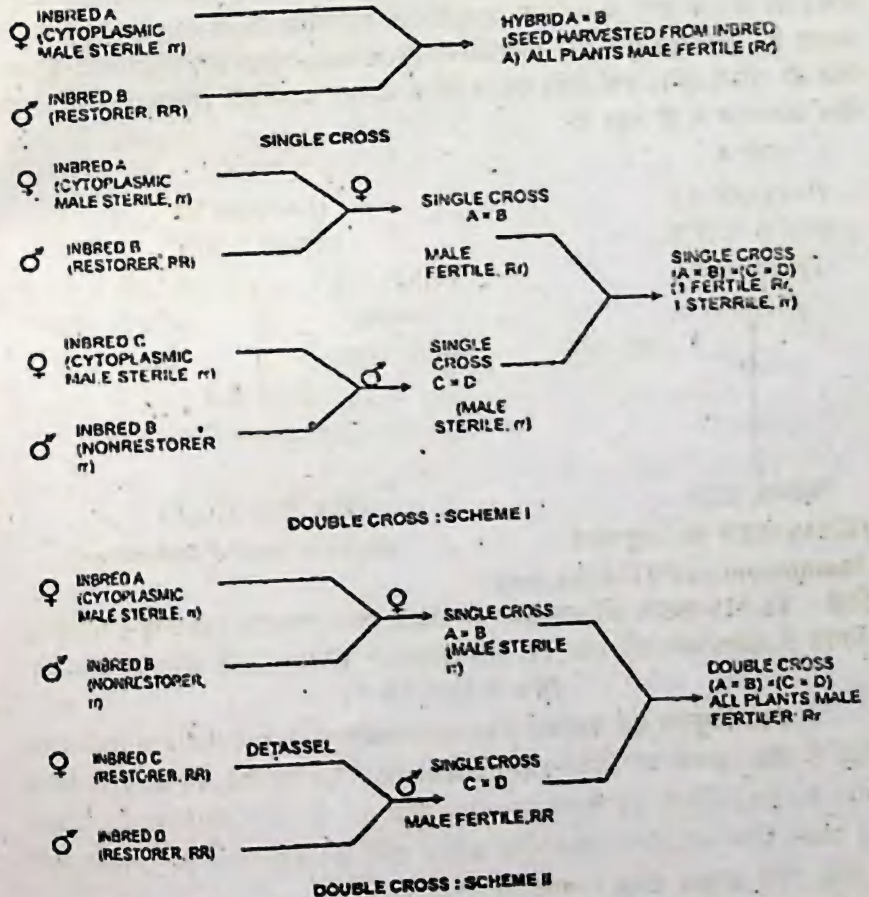

चित्र : संकर बीज उत्पादन (Hybrid seed production) के लिये कोशिकाद्रव्यी-आनुवंशिक नर बंध्यता (Cytoplasmic-genetic male sterility) का उपयोग।

अतः CGMS की सहायता से संकर बीज उत्पादन पद्धति को **तीन लाइन संकर बीज उत्पादन** (Three-line hybrid seed production) कहते हैं। इसकी तुलना में TGMS की सहायता से संकर बीज उत्पादन के लिये केवल दो लाइनें जरूरी होती हैं : (1) TGMS लाइन एवं (2) संकर बीज उत्पादन के लिये नर जनक के रूप में उपयोग होने वाली लाइन। अतः संकर बीज उत्पादन की इस विधि को **दो-लाइन संकर बीज उत्पादन** (Two-line hybrid seed production) कहते हैं।

4. स्वअनिषेच्यता (Self-incompatibility)—दो स्वअनिषेच्य (Self-incompatibility) परन्तु आपस में निषेच्य (Compatible) अन्तःप्रजातों (Inbreds) को एकांतर (Alternate) कतारों में लगाया जाता है। इन दोनों ही अन्तःप्रजातों में बने बीज संकर होंगे। दो अन्तःप्रजातों में से एक अन्तःप्रजात स्वनिषेच्य (Self-compatible) भी हो सकता है। इस दशा में केवल स्वअनिषेच्य (Self-incompatible) अन्तःप्रजात पर बने बीज ही संकर होंगे। इस विधि का उपयोग जापान में *ब्रैसिका (Brassica)* के संकर बीज उत्पादन में हो रहा है।

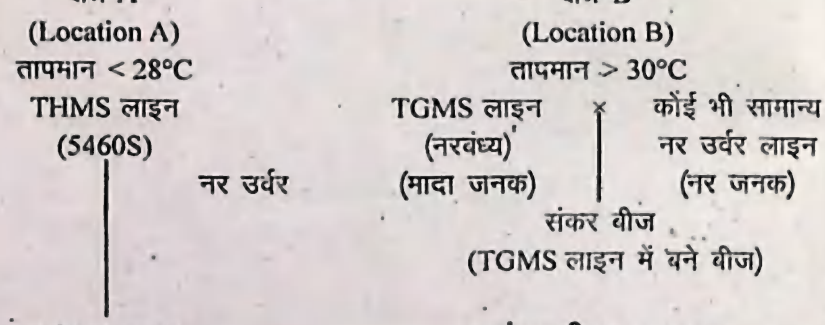

चित्र : TGMS लाइन की सहायता से संकर बीज उत्पादन (दो-लाइन पद्धति)। विभेद 5,460S धान की एक TGMS लाइन है, जिसके लिये उपयुक्त तापमान चित्र में दिये गये हैं।

5. हस्त विपुंसन एवं परागण (Hand Emasculation and Pollination)—इस विधि में मादा जनक का विपुंसन (Emasculation) एवं परागण मनुष्यों द्वारा किया जाता है। इस विधि से बड़े पैमाने पर संकर बीज का उत्पादन नहीं किया जा सकता एवं संकर बीज की लागत अपेक्षाकृत अधिक होती है। इस विधि का उपयोग कुछ फरालों, जैसे कपास, टमाटर आदि, में किया जाता है।

संकर किस्मों के गुण (Merits of Hybrid Varieties)

1. संकर किस्में (Hybrid varieties) संकर ओज (Heterosis) का अधिकतम उपयोग करती हैं।

2. इनके उत्पाद (Produce) एकसमान अभिलक्षण (Characteristics) एवं गुणवत्ता (Quality) वाले होते हैं।

3. इनका अनुरक्षण (Maintainance) अन्तःप्रजातों (Inbreds) अथवा शुद्ध वंशक्रमों के रूप में किया जाता है। अतः समय के साथ इनके आनुवंशिक संघटन (Genetic makeup) में परिवर्तन नहीं होता है।

संकर किस्मों के दोष (Demerits of Hybrid Varieties)

1. किसानों को प्रतिवर्ष नया संकर बीज खरीदना पड़ता है।

2. संकर बीज उत्पादन के लिये काफी कुशलता (Skill) की आवश्यकता होती है। अतः यह अपेक्षाकृत खर्चीला होता है।

3. संकर किस्मों का अधिकतम लाभ पाने के लिये समुचित खाद, पानी आदि की आवश्यकता होती है, जो कि अधिकांश भारतीय किसानों के बस के बाहर है।

4. संकर बीज उत्पादन में कई समस्यायें आ सकती हैं। इन समस्याओं का समाधान करने पर संकर बीज की लागत में वृद्धि होती है।

संकर किस्मों की उपलब्धियाँ (Achievements through Hybrid Varieties)

भारत में मक्का, ज्वार, बाजरा, कपास, अरहर एवं नारियल में संकर किस्मों का उपयोग हो रहा है। मक्के में लगभग एक दर्जन संकर किस्में (गंगा 3, गंगा 4, हाई स्टार्च, गंगा सफेद आदि) संस्तुत हैं। ये किस्में मुक्त परागित किस्मों की अपेक्षा 25-40% तक अधिक उपज देती हैं। कुछ हाल ही में विमोचित संकर मक्का किस्में निम्नलिखित हैं : KH 5981, KH 5991, पारस, DHM 109 आदि।

बाजरे की शुरू की संकर किस्में मृदुरोमिल आसिता (Downy mildew) एवं एरगट (Ergot) ग्राही (Susceptible) थीं। इन किस्मों के ये दोष उनके नर बंध्य (Male sterile) मादा जनक (Tift 23A) के कारण थे। बाद में कई मृदुरोमिल आसिता एवं एरगट रोधी (Resistant) नर बंध्य अन्तःप्रजात (Inbred; जैसे MS521, L111A, MS541A आदि) विकसित किये गये। इन अन्तःप्रजातों के उपयोग से बाजरे की कई रोग रोधी उत्कृष्ट संकर किस्में (PHB 10, PHB11, BJ104 एवं BK560, RHB58, पूसा 444 आदि) विकसित की गई हैं।

ज्वार में एक दर्जन से अधिक संकर किस्में (CSH1, CSH2, CSH3, CSH4, CSH6, CSH7, CSH10, CSH12, CSH13R, CSH15R आदि) विकसित की गई हैं। कपास में भी कई संकर किस्में (H4, JKHY-1, गोदावरी, सुगना, H6, वरलक्ष्मी, B556, सावित्री, जयलक्ष्मी, फतेह, HN1-181, अंकुर 651, NSHB11, G. Cot. Hy. 10, PKV Hy. 3 आदि) विकसित की गई हैं। इनमें से कुछ (वरलक्ष्मी, सावित्री, जयलक्ष्मी, B556) गा० हिर्सुटम × गा० बार्बाडेंस के संकरण (अन्तरास्पेसीज संकरण) से विकसित की गई हैं।

प्रश्न 10. स्वपरागित फसलों में वरण विधियों का वर्णन कीजिए।
Describe methods of selection in self pollinated crops.

अथवा

शुद्ध वंशक्रम क्या है ? इसके उपयोग लिखिये।
What is pure line ? Write its uses. **(CSJM, 2015)**

उत्तर— स्वपरागित फसलों में वरण विधियाँ
(METHODS OF SELECTION IN SELF-POLLINATED CROPS)

स्वपरागित फसलों की समष्टियों (Populations) में अनेक समयुग्मज जीनप्ररूप (Homozygous genotypes) या शुद्ध वंशक्रम (Purelines) उपस्थित होते हैं। अतः इन फसलों में उपस्थित आनुवंशिक विविधता (Genetic variation) समयुग्मक जीनप्ररूपों के रूप में होती है और वरण द्वारा इसका उपयोग किया जा सकता है। वरण में निम्नलिखित क्रियायें की जाती हैं।

1. समष्टि से उत्कृष्ट एवं वांछनीय लक्षणप्ररूपों वाले पौधों का वरण किया जाता है और वरण किये गये पौधों के बीजों को एकत्रित कर लेते हैं।

2. समष्टि के शेष पौधों को त्याग दिया जाता है, अर्थात् अगली पीढ़ी उगाने के लिये इनके बीजों का उपयोग नहीं करते हैं।

3. अगले वर्ष वरण किये गये पौधों के बीजों को उगाते हैं। इस प्रकार प्राप्त समष्टि या लाइनों को **वरित लाइनें/वरित समष्टि** (Selection lines/selected population) कहते हैं।

वरित लाइनों को अलग-अलग उगाया जा सकता है, अर्थात् इन्हें एकल पादप संततियों (Individual plant progenies) के रूप में उगा सकते हैं, अथवा उन्हें एक साथ मिलाकर एक समष्टि के रूप में उगा सकते हैं। जब एक पौधे से प्राप्त बीजों को अन्य पौधों से प्राप्त बीजों से अलग उगाया जाता है, तो इस प्रकार प्राप्त पौधों को **एकल पादप संतति** कहते हैं। स्वपरागित समष्टियों में उपयोग होने वाली वरण विधियाँ (Selection methods) निम्नलिखित दो प्रकार की होती हैं : (1) समूह वरण (Mass selection) एवं (2) शुद्ध वंशक्रम वरण (Pureline selection)।

समूह वरण (Mass Selection)

समूह वरण (Mass selection) में एकसमान (Identical) तथा उत्कृष्ट लक्षण प्ररूपों वाले कई पौधों का वरण (Selection) किया जाता है तथा उनके बीजों के मिश्रण (Mixture) से नई किस्म बनती है। समूह वरण, सामान्यतया, उच्च वंशागतित्व (Heritability) वाले तथा आसानी से (केवल देखने मात्र से ही) मूल्यांकन (Evaluation) किये जा सकने वाले लक्षणों, जैसे पौधों की लम्बाई, दानों का रंग, दानों का आमाप (Size), रोग रोधिता (Disease resistance) आदि, के लिये काफी प्रभावशाली होता है। समूह वरण (Mass selection) से विकसित किस्म (Variety) में (1) काफी आनुवंशिक विविधता (Genetic variation) उपस्थित होती है। परन्तु (2) यह किस्म मूल किस्म की अपेक्षा अधिक समांगी या समरूप (Homogeneous) होती है।

समूह वरण के प्रभाव (Effects of Mass Selection)

1. वरण से प्राप्त समष्टि साधारणतया जनक या मूल समष्टि की तुलना में अधिक सुधरी हुई होती है, क्योंकि समूह वरण की प्रक्रिया में निकृष्ट जीनप्ररूप हटा दिये जाते हैं।

2. वरण से प्राप्त समष्टि मूल समष्टि की तुलना में अधिक समांगी (Homogeneous) होती है।

3. वरण से प्राप्त समष्टि में काफी आनुवंशिक विविधता उपस्थित रहती है, क्योंकि यह समष्टि कई जीनप्ररूपों या शुद्ध वंशक्रमों का मिश्रण होती है। लेकिन इस समष्टि में मूल समष्टि की तुलना में कम विविधता होती है।

4. इस समष्टि में आगे भी वरण प्रभावशाली (Effective) होगा, क्योंकि इसमें आनुवंशिक विविधता उपस्थित होती है।

समूह वरण के अनुप्रयोग (Applications of Mass Selection)

समूह वरण (Mass selection) के निम्नलिखित दो उपयोग होते हैं : (1) पुरानी या स्थानीय (Local) किस्मों में सुधार, एवं (2) शुद्ध वंशक्रम किस्मों (Pureline varieties) का शुद्धीकरण (Purification)।

1. पुरानी या स्थानीय किस्मों में सुधार (Improvement in Old or Local Varieties)—देशी, पुरानी या स्थानीय किस्मों में कई जीनप्ररूप (Genotypes) या शुद्ध वंशक्रम (Purelines) उपस्थित होते हैं। इनमें से अधिकांश जीनप्ररूप अपेक्षाकृत निकृष्ट होते है। अतः ऐसी किस्मों में से उत्कृष्ट शुद्ध वंशक्रमों (Purelines) को चुनकर उनके बीजों के मिश्रण से विकसित की गई किस्म अपेक्षाकृत अधिक उत्कृष्ट होगी। इसके साथ ही, नई किस्म मूल किस्म की ही भाँति उस क्षेत्र में अनुकूलित (Adapted) होगी।

2. शुद्ध वंशक्रम किस्मों का शुद्धीकरण (Purification of Pureline Varieties)—शुद्ध वंशक्रम किस्मों में कुछ वर्षों बाद आनुवंशिक विविधता (Genetic variation) उत्पन्न हो जाती है। अतः इन किस्मों की शुद्धता बनाये रखने के लिये, प्रत्येक 4-5 वर्ष बाद उनमें समूह वरण (Mass selection) किया जाता है। किसी किस्म के शुद्धीकरण (Purification) के लिये, उस किस्म के अभिलक्षणों (Characteristics) वाले 200-300 पौधों का वरण किया जाता है। इन पौधों का बीज अलग-अलग एकत्रित कर लिया जाता है। अगले वर्ष प्रत्येक वरण किये गये (Selected) पौधे से प्राप्त बीजों को एक अलग कतार में बोते हैं। इस प्रकार प्राप्त एकल पादप संततियों (Individual plant progenies) का सूक्ष्म निरीक्षण करते हैं। सम्बन्धित किस्म के अभिलक्षणों वाली एक समान संततियों (Identical progenies) के बीजों को मिश्रित कर लिया जाता है; यह मिश्रण ही इस किस्म का शुद्ध रूप है। सम्बन्धित किस्म से भिन्न अभिलक्षणों (Characteristics) वाली तथा विसंयोजित (Segregate) हो रही संततियों को छाँट दिया जाता है।

समूह वरण की विधि (Method of Mass Selection)

नई किस्म के विकास के लिये समूह वरण की एक व्यापकीकृत (Generalised) विधि निम्नलिखित है।

प्रथम वर्ष (First Year)—विविधतापूर्ण समष्टि (Variable population) में से एकसमान लक्षणप्ररूपों (Phenotypes) वाले 200-1,000 पौधों का वरण (Selection)

किया जाता है। इन पौधों का वरण ओज (Vigour), रोग रोधिता (Disease resistance) तथा अन्य उत्कृष्ट एवं वांछनीय (Desirable) लक्षणों के लिये किया जाता है। वरण किये गये सभी पौधों के बीजों को एक साथ मिला लिया जाता है; यही नई किस्म है।

द्वितीय वर्ष (Second Year)—नई किस्म (प्रथम वर्ष में विकसित) को प्रचलित किस्मों एवं मूल किस्म (Original variety; जिसमें से वरण द्वारा नई किस्म विकसित की गई है) को साथ एक पुनरावर्तित प्रारम्भिक उपज परीक्षण (Replicated initial yield trial) में बोते हैं। यदि नई किस्म इन किस्मों की अपेक्षा उपज आदि में उत्कृष्ट हुई, तो उसे समन्वित उपज परीक्षणों (Coordinated yield trials) में शामिल किया जाता है।

तृतीय वर्ष से पाँचवाँ वर्ष (Third Year to Fifth Year)—सभी समन्वित उपज परीक्षण (Coordinated yield trials) भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् (ICAR) की सम्बन्धित फसल की अखिल भारतीय समन्वित फसल सुधार परियोजना (All India Coordinated Crop Improvement Project) के अन्तर्गत किये जाते हैं। ये उपज परीक्षण सामान्यता तीन चरणों में किये जाते हैं। इस सभी परीक्षणों में प्रचलित उन्नत किस्मों को तुलना के लिये चेक (Check) के रूप में उगाते हैं।

1. प्रारम्भिक मूल्यांकन परीक्षण (Initial Evaluation Trial)—समन्वित उपज परीक्षण (Coordinated yield trials) के प्रथम वर्ष में विभेदों (Strains) को अपेक्षाकृत छोटे प्लाटों (Plots) में पुनरावर्तित परीक्षण (Replicated trial) में बोया जाता है। जिन विभेदों का निष्पादन (Performance) चेक से उत्कृष्ट होता है, उन्हें अगले वर्ष एकसमानता क्षेत्रीय परीक्षणों (Uniformity regional trials) में शामिल करते हैं।

2. एकसमानता क्षेत्रीय परीक्षण (Uniformity Regional Trial)—यह परीक्षण अपेक्षाकृत बड़े प्लाटों में लगाया जाता है और लगातार दो वर्षों तक किया जाता है। जो विभेद इन परीक्षणों में चेक से उत्कृष्ट होते हैं उन्हें मिनीकिट (Minikit) या अनुकूलन (Adaptive) परीक्षणों में शामिल किया जाता है। मिनीकिट (Minikit) परीक्षण में शामिल किये जाने वाले विभेदों की पहचान (Identification) सम्बन्धित फसल की अखिल भारतीय समन्वित फसल सुधार परियोजना की वार्षिक कार्यशाला (Annual workshop) में किया जाता है।

3. अनुकूली परीक्षण (Adaptive Trials)—ये परीक्षण भारत सरकार के प्रसार (Extension) विभाग द्वारा किसानों के खेतों तथा सरकारी फार्मों पर किये जाते हैं। इन परीक्षणों में प्लाटों का आमाप (Size) काफी बड़ा (लगभग 0.04 हेक्टेयर) होता है। यह परीक्षण केवल एक वर्ष किया जाता है।

जो विभेद (Strain) इन सभी परीक्षणों में चेक (Check) किस्मों से उत्कृष्ट होते हैं, उन्हें केन्द्रीय किस्म विमोचन समिति (Central Variety Release Committee) या प्रादेशिक किस्म विमोचन समिति (Provincial Variety Release Committee) द्वारा नई किस्म के रूप में विमोचित (Release) किया जाता है। परीक्षण या मूल्यांकन की यह विधि सभी विभेदों, चाहे वे किसी भी प्रजनन विधि (Breeding method) द्वारा विकसित किये गये हों, के लिये अपनाई जाती है।

छठा वर्ष (Sixth Year)—यदि कोई विभेद नई किस्म के रूप में विमोचित (Release) होता है, तो उसके बीज का गुणन (Multiplication) आरम्भ हो जाता है। जिस वर्ष कोई किस्म विमोचित होती है, उस वर्ष उसके आधार बीज (Foundation seed) का उत्पादन होता है। अगले (आठवें) वर्ष आधार बीज से प्रमाणित बीज (Certified seed) का उत्पादन किया जाता है और यह बीज किसानों को वितरित किया जाता है।

समूह वरण के गुण (Merits of Mass Selection)

समूह वरण के निम्नलिखित गुण होते हैं—

1. इसके द्वारा विकसित किस्में अपेक्षाकृत अधिक अनुकूलित (Adapted) होती हैं, क्योंकि ऐसी किसी एक किस्म में कई शुद्ध वंशक्रम (Purelines) उपस्थित होते हैं।

2. इसके द्वारा विकसित किस्मों में काफी आनुवंशिक विविधता (Genetic variation) उपस्थित होती है। अतः इन किस्मों में पुनः वरण (Selection) द्वारा सुधार किया जा सकता है।

3. यह विधि सबसे सरल प्रजनन विधि है।

4. इस विधि के उपयोग से शुद्ध वंशक्रम किस्मों का शुद्धीकरण किया जा सकता है।

समूह वरण के दोष (Demerits of Mass Selection)

समूह वरण के निम्नलिखित दोष होते हैं—

1. इस विधि से विकसित किस्मों में समरूपता (Homogeneity) का अभाव होता है।

2. इस विधि से शुद्ध वंशक्रम वरण विधि (Pureline selection method) की अपेक्षा कम सुधार होता है।

3. संतति परीक्षण (Progeny test) न करने के कारण वरण किये गये पौधों (Selected plants) का वास्तविक मूल्यांकन (Evaluation) नहीं हो पाता है।

4. बीज प्रमाणीकरण (Seed certification) के लिये इस विधि द्वारा विकसित (Developed) किस्मों (Varieties) की पहचान (Identification) काफी मुश्किल होती है।

5. इस विधि से सुधार के लिये मूल समष्टि (Population) में आनुवंशिक विविधता (Genetic vaiation) का उपस्थित होना अनिवार्य है।

समूह वरण की उपलब्धियाँ (Achievements through Mass Selection)

समूह वरण पादप प्रजनन (Plant breeding) की सबसे प्राचीन विधि है। प्राचीन काल में इस विधि का बहुत व्यापक उपयोग किया गया था। परन्तु आजकल स्वपरागित फसलों में इस विधि का उपयोग केवल शुद्ध वंशक्रम किस्मों (Pureline varieties) को शुद्ध करने के लिये किया जाता है।

शुद्ध वंशक्रम वरण (Pureline Selection)

शुद्ध वंशक्रम वरण (Pureline selection) में किसी समष्टि (Population) में से बहुत से उत्कृष्ट पौधों का वरण (Selection) किया जाता है। प्रत्येक वरण किये गये (Selected) पौधों का बीज अलग-अलग एकत्रित करते हैं और उनसे एकल

पादप संततियाँ (Individuals plant progenies) उगाते हैं। इनमें से सबसे उत्तम एकल पादप संतति (Individual plant progeny) को नई किस्म के रूप में विमोचित (Release) किया जाता है। अतः इस विधि को **एकल पादप वरण** (Individual plant selection) भी कहते हैं। इस विधि से विकसित किस्म एक शुद्ध वंशक्रम (Pureline) होती है।

यह विधि प्रत्येक स्वपरागित फसल (Self-pollinated crop) के सुधार की आरम्भिक अवस्थाओं में काफी उपयोगी एवं लोकप्रिय होती है। परन्तु जब देशी या स्थानीय किस्मों में उपस्थित विविधता (Variability) का शोषण (Exploitation) हो उपयोग हो चुका होता है, तो यह विधि प्रभावहीन (Ineffective) हो जाती है।

आनुवंशिक परिणाम (Genetic Consequences)

1. शुद्ध वंशक्रम वरण (Pureline selection) से शुद्ध वंशक्रम किस्में प्राप्त होती हैं।

2. इस विधि से प्राप्त किस्म समष्टि में उपस्थित सर्वोत्तम शुद्ध वंशक्रम होता है। अतः इस वरण से सबसे अधिक सुधार होता है।

3. मूल समष्टि में उपस्थित आनुवंशिक विविधता पूरी तरह समाप्त हो जाती है, क्योंकि वरण से प्राप्त किस्म में आनुवंशिक विविधता एकदम अनुपस्थित होती है। शुद्ध वंशक्रम में उपस्थित विविधता केवल वातावरणीय होती है।

4. वरण से प्राप्त किस्म में आगे वरण प्रभावहीन होता है।

5. समय के साथ शुद्ध वंशक्रम किस्मों में भी आनुवंशिक विविधता उत्पन्न होती है। अतः पुरानी शुद्ध वंशक्रम किस्मों में वरण प्रभावशाली हो सकता है।

6. शुद्ध वंशक्रम किस्मों की आनुवंशिक शुद्धता (Genetic purity) को नियमित समूह वरण द्वारा बनाये रखते हैं।

शुद्ध वंशक्रम वरण के अनुप्रयोग (Applications of Pureline Selection)

शुद्ध वंशक्रम वरण विधि के निम्नलिखित अनुप्रयोग (Application) होते हैं—

विविधतापूर्ण स्थानीय या देशी किस्मों में सुधार (Improvement in Variable Local Varieties or Land Races)—देशी किस्मों में बहुत अधिक आनुवंशिक विविधता उपस्थित होती है। इस विविधता का सबसे प्रभावशाली ढंग से उपयोग शुद्ध वंशक्रम वरण द्वारा ही किया जाता है। वास्तव में, किसी फसल में सुधार की आरम्भिक अवस्थाओं में शुद्ध वंशक्रम वरण का व्यापक उपयोग होता है। इस प्रकार की किस्मों में वरण से बहुत सी शुद्ध वंशक्रम किस्मों का विकास किया गया है, उदाहरणार्थ, NP4, NP52 गेहूँ; NP11, NP12 अलसी; T1 लोबिया; T2, T44 मूँग आदि।

पुरःस्थापित एवं विविधतापूर्ण किस्मों में सुधार (Improvement in Introduced and Variable Varieties)—पुरःस्थापित (Introduced) लाइनों में शुद्ध वंशक्रम वरण द्वारा कई किस्मों का विकास किया गया है, जैसे शाइनिंग मूंग नं० 1, PS16 मूंग, कल्याण सोना, सोनालिका गेहूँ आदि।

पुरानी विविधतापूर्ण शुद्ध वंशक्रम किस्मों में सुधार (Improvement in Old and Variable Pureline Varieties)—पुरानी शुद्ध वंशक्रम किस्में समय के साथ

आनुवंशिक विविधतापूर्ण हो जाती हैं। ऐसी किस्मों में अक्सर शुद्ध वंशक्रम वरण किया जाता है। इस प्रकार शुद्ध वंशक्रम कई किस्मों का वरण किया गया है। उदाहरणार्थ, चाफा चना; पूसा बैसाखी, Co2 एवं Co3 मूंग; Co2, Co3, B76 उर्द; श्यामा धान आदि।

किसी शुद्ध वंशक्रम किस्म में नये लक्षण के लिये वरण (Selection for A New Trait in A Pureline Variety)—कई बार किसी शुद्ध वंशक्रम में एक ऐसे लक्षण के लिये वरण करना जरूरी हो जाता है, जिसके लिये पहले उसका वरण नहीं किया गया था। स्पष्ट रूप से ऐसा उन्हीं किस्मों में लाभदायी होगा, जिनमें सम्बन्धित लक्षण के लिये आनुवंशिक विविधता उपस्थित हो।

शुद्ध वंशक्रम वरण की विधि (Method of Pureline Selection)

इस विधि का एक व्यापकीकृत (Generalised) वर्णन आगे दिया जा रहा है (चित्र)। शुद्ध वंशक्रम वरण में निम्नलिखित तीन चरण होते हैं—

1. विविधतापूर्ण (Variable) समयुग्मज (Homozygous) समष्टि (Population) में से कई एकल पादपों (Individual plants) का वरण।

2. वरण किये गये पौधों से एकल पादप संततियाँ (Individual plant progenies) उगाना एवं इन संततियों का मूल्यांकन।

3. उत्कृष्ट संततियों का पुनरावर्तित उपज परीक्षण (Replicated yield trial) द्वारा मूल्यांकन।

प्रथम वर्ष (First Year)—किसी विविधतापूर्ण (Variable) किस्म (Variety) या समष्टि (Population) में से 200-2,000 उत्कृष्ट लक्षणों वाले पौधों का वरण (Selection) किया जाता है। इन पौधों के बीजों को अलग-अलग एकत्रित कर लिया जाता है। यदि 2-3 हजार पौधों का वरण किया जाता है, तो उन्हें यादृच्छिक (Random; बिना किसी वरण के) रूप से चुना जा सकता है। परन्तु यदि केवल कुछ सौ पौधों का ही वरण करना है, तो उनका वरण पौधों की लम्बाई, पकने की अवधि, दानों का आमाप (Size) व अन्य लक्षणों, जैसे रोग रोधिता (Disease resistance) आदि, के आधार पर सावधानी से करना चाहिये **(एकल पादप वरण)**।

द्वितीय वर्ष (Second Year)—वरण किये गये पौधों (Selected plant) के बीजों से एकल पादप संततियाँ (Individual plant progenies; एक पौधे के बीज से एक अलग कतार या संतति) उगाते हैं। इन संततियों (Progenies) का दृष्टि मूल्यांकन (Visual evaluation) किया जाता है और सरलता से आँके जा सकने वाले लक्षणों, जैसे पौधे की लम्बाई, रोग रोधिता आदि, के लिये वरण किया जाता है। घटिया एवं विसंयोजित (Segregate) हो रही संततियों (Progenies) को छाँट दिया जाता है। केवल उत्तम एवं उपयुक्त लक्षणों वाली कुछ (10-50) संततियों को अगले वर्ष के परीक्षण में शामिल किया जाता है **(एकल पादप संतति मूल्यांकन)**।

तीसरा वर्ष (Third Year)—चुनी गई उत्तम संततिया एवं सर्वोत्तम तथा प्रचलित किस्म या किस्मों (चेक के रूप मे) को एक पुनरावर्तित प्रारम्भिक उपज परीक्षण (Replicated initial yield trial) में उगाते हैं। सबसे अच्छी संतति, यदि वह

चेक किस्मों से अच्छी हो तो, को अगले वर्ष समन्वित परीक्षण (Coordinated trial) में शामिल करते हैं **(पुनरावर्तित परीक्षण)**।

चौथे से छठा वर्ष (Fourth to Sixth Year)—सबसे अच्छी संतति (Progeny) को उपयुक्त चेक किस्मों (Check; सबसे अच्छी व प्रचलित किस्मों) के साथ कई स्थानों पर समन्वित उपज परीक्षणों (Coordinated yield trials) में उगाते हैं। ये परीक्षण भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् (ICAR) की सम्बन्धित फसल की अखिल भारतीय समन्वित फसल सुधार परियोजना (All India Coordinated Crop Improvement Project) के अन्तर्गत किये जाते हैं।

समन्वित उपज परीक्षण में, (1) एक वर्ष प्रारम्भिक मूल्यांकन परीक्षण (Initial evaluation trial) (2) दो वर्षों तक एकसमानता क्षेत्रीय परीक्षण (Uniform regional trials), तथा (3) एक वर्ष अनुकूलनी परीक्षण (Adaptive trial) किया जाता है (देखें, समूह वरण)। यदि कोई संतति इन परीक्षणों में सर्वोत्तम चेक किस्म से अच्छी हुई, तो उसे नई किस्म के रूप में विमोचित (Release) किया जाता है।

सातवाँ वर्ष (Seventh Year)—नई किस्म का आधार बीज (Foundation seed) पैदा किया जाता है। अगले वर्ष, आधार बीज से प्रमाणित बीज (Certified seed) उत्पन्न किया जाता है, जिसे किसानों में वितरित किया जाता है।

शुद्ध वंशक्रम वरण के गुण (Merits of Pureline Selection)

इस विधि के निम्नलिखित गुण होते हैं—

1. इस विधि से किसी भी विविधतापूर्ण समष्टि (Variable population) में सर्वाधिक सुधार होता है।

2. इस विधि से विकसित किस्में शुद्ध वंशक्रम (Purelines) होती हैं। अतः इनमें आनुवंशिक विविधता (Genetic variation) का पूर्ण अभाव होता है।

3. इस विधि से विकसित किस्म को बीज प्रमाणीकरण (Seed certification) के लिये पहचानना अपेक्षाकृत काफी आसान होता है।

शुद्ध वंशक्रम वरण के दोष (Demerits of Pureline Selection)

इस विधि के निम्नांकित दोष होते हैं—

1. इस विधि से विकसित किस्मों का अनुकूलन (Adaptation) मूल किस्म (Original variety) की अपेक्षा कम हो सकता है।

2. इस विधि में समूह वरण (Mass selection) की अपेक्षा अधिक समय, श्रम व धन की आवश्यकता होती है।

3. इस विधि की सफलता के लिये मूल किस्म (Original variety) में आनुवंशिक विविधता (Genetic variation) का उपस्थित होना अनिवार्य है।

शुद्ध वंशक्रम वरण की उपलब्धियाँ (Achievements through Pureline Selection)

भारतवर्ष में पादप प्रजनन की शुरू की अवस्थाओं में यह सर्वाधिक प्रचलित प्रजनन विधि थी। इस विधि से सभी स्वपरागित फसलों (Self-pollinated crops) की अनेक किस्में विकसित की गई थीं (सारणी)। ये किस्में काफी समय तक भारत में अत्यन्त लोकप्रिय थीं।

इन किस्मों के उदाहरण निम्नलिखित हैं—

सारणी : शुद्ध वंशक्रम वरण द्वारा विकसित कुछ किस्में

फसल	किस्में
गेहूँ	NP4, NP6, NP12, Pb8, Pb8A, Pb11, C13 (बाद में K13), K46, K53, K54 आदि।
उर्द	T9, T27, नवीन, कुलू 4, T122 आदि।
मूंग	T1, T44, पूसा बैसाखी, B1 आदि।
राई	L18 आदि।
धान	Mtu3, Mtu7 A1, S155, BR1, BR6, पटनी 6, T1, T3, T22, T29 आदि।
जौ	C50, C251, K12 आदि।
तम्बाकू *(नि० टबैकम)*	NP28, NP63, NP70।
तम्बाकू *(नि० रस्टिका)*	हैरिसन स्पेशल 9, चैथम।

प्रश्न 11. आवर्ती चयन को विस्तार से समझाइये।
Explain the Recurrent Selection in detail.

अथवा

आवर्ती वरण क्या है ?
What is recurrent selection ?

अथवा

आवर्ती चयन को समझाइये।
Explain the Recurrent Selection.

उत्तर—

आवर्ती चयन
(RECURRENT SELECTION)

संकर ओज के आरम्भिक दिनों में अन्तः प्रजात उत्पादन की स्टैंडर्ड विधि के द्वारा कुछ बहुत अच्छी अन्तः प्रजात वंशक्रम उत्पन्न की गई जिनके प्रयोग से F_1 में पर्याप्त संकर ओज प्राप्त हुई। परन्तु बाद में उनसे अच्छी अन्तः प्रजात वंशक्रम स्टैंडर्ड विधि से उत्पन्न नहीं की जा सकीं, जिसका कारण यह माना गया कि स्टैंडर्ड विधि में अन्तः प्रजनन के कारण से जीन संयोग बहुत शीघ्र स्थिर हो जाते हैं तथा इस विधि में विसंयोजन द्वारा अलग हुए ऐच्छिक जीनों को फिर से प्राप्त नहीं किया जा सकता। परिणामस्वरूप यदि चयन बहुत अधिक सफल हो तो भी पैतृक पौधे से अधिक ऐच्छिक जीनों को उत्तम अन्तः प्रजात वंशक्रम में एकत्रित नहीं किया जा सकता है। अतः संकर ओज का और अधिक प्रयोग करने के लिये पादप प्रजनकों को उत्तम अन्तः प्रजात वंशक्रम उत्पन्न करने के लिये नई विधि का आविष्कार करने की आवश्यकता हुई ताकि अन्तः प्रजात वंशक्रमों के उत्पादन के समय पादप सामग्री में

पर्याप्त आनुवंशिक विविधता को बनाये रखकर विसंयोजन करते हुए ऐच्छिक जीन संयोगों को एकत्रित किया जा सके। इस आवश्यकता की पूर्ति हेतु आवर्ती चयन विधि का विचार प्रथम बार **हेयज एवं गार्बर** (Hayes and Garber, 1919) तथा **ईस्ट एवं जोन्स** (East and Jones, 1920) ने स्वतंत्र रूप से दिया था।

आवर्ती चयन का अर्थ है कि **विसंयोजन करती हुई पादप सामग्री में बार-बार ऐच्छिक लक्षणों वाले पौधे का चयन तथा उनकी सन्तति में आपस में सभी सम्भव एकल संकरण करना तथा इस क्रिया को उस समय तक दोहराते रहना जब तक कि सभी ऐच्छिक लक्षण पादप सामग्री में एक साथ लाये जा सकें।**

आवर्ती चयन का उद्देश्य परपरागित फसलों में किसी एक विशेष लक्षण के लिये अधिक से अधिक ऐच्छिक जीनों को एक जनसंख्या में एकत्रित concentrate करना होता है तथा साथ ही साथ यह भी ध्यान रखा जाता है कि उस जनसंख्या में आनुवंशिक विविधता भी बनी रहे। आवर्ती चयन का प्रयोग मक्का में तेल की मात्रा, कपास में रेशे की लम्बाई तथा शकरकन्द में चीनी की मात्रा बढ़ाने आदि लक्षणों के लिये किया गया है तथा इस विधि का प्रयोग उन सभी लक्षणों के लिये सफलतापूर्वक किया जा सकता है जिनकी वंशानुगति अधिक (High heritability) होती है। जिन लक्षणों की वंशानुगति कम होती है उन लक्षणों के सुधार के लिये इस विधि का सफलतापूर्वक प्रयोग नहीं किया जा सकता है। यही कारण है कि आवर्ती चयन द्वारा परपरागित फसलों की उपज नहीं बढ़ायी जा सकी है।

आवर्ती चयन का प्रयोग किसी स्वतंत्र परागित किस्म (Open pollinated variety), एकल संकरण, द्विसंकरण अथवा संश्लेषित किस्म (Synthetic variety) आदि प्राथमिक पादप सामग्री में सफलतापूर्वक किया जा सकता है।

आवर्ती चयन चार प्रकार का होता है—

(अ) सरल आवर्ती चयन (Simple Recurrent Selection)।

(ब) सामान्य संयोग क्षमता बढ़ाने के लिये आवर्ती चयन।

(स) विशिष्ट संयोग क्षमता बढ़ाने के लिये आवर्ती चयन।

(द) पारस्परिक आवर्ती चयन।

प्रश्न 12. उत्परिवर्तन क्या है ? म्यूटेशन ब्रीडिंग फसल सुधार में किस प्रकार उपयोगी है ?

What is mutation ? How mutation breeding is useful in improving crop plants. **(BRAU, 2016)**

उत्तर—उत्परिवर्तन प्रजनन (Mutation Breeding)

मुलर (Muller) द्वारा 1927 में एक्स-किरणों (X-rays) की उत्परिवर्तजनी (mutagenic) प्रकृति की खोज के बाद स्वीडन (Sweden), जर्मनी (Germany) तथा सोवियत रूस (USSR) में उत्परिवर्तन प्रजनन (mutation breeding) के कार्यक्रम शुरू किये गये। इनमें से स्वीडन का कार्यक्रम काफी बड़े पैमाने पर था और वहाँ कई फसलों पर अभी भी प्रयोग चल रहे हैं। इस कार्यक्रम की शुरुआत निल्सन एहिल

(Nilsson-Ehle) ने 1929 में की थी और बाद में यह **गस्टफसन** (Gustafsson) की देखरेख में चलता रहा। इस कार्यक्रम से 1950 में 'प्राइमेक्स सफेद सरसों' (Primax White Mustard) तथा 1953 में 'रिजाइना II' ग्रीष्म सरसों (Rigina II Summer Rape) किस्में विकसित की गयीं। भारतवर्ष में उत्परिवर्तजनन (mutagenesis) पर प्रयोग 1930 के बाद शुरू हुए और 1950 से 1970 के बीच इन कार्यक्रमों पर काफी जोर रहा। उत्परिवर्तजनों (mutagens) के उपयोग से किसी जीव में उत्परिवर्तन प्रेरण (mutation induction) को **उत्परिवर्तजन** (mutagenesis) कहते हैं। इस प्रकार के प्रेरित उत्परिवर्तनों (induced mutations) का पादप प्रजनन (plant breeding) या फसल सुधार में उपयोग उत्परिवर्तन प्रजनन (mutation breeding) कहलाता है।

उत्परिवर्तन प्रजनन (mutation breeding) के शुरू के वर्षों में इस विधि से बहुत-सी आशाएँ की गयी थीं। अधिकांश लोगों का यह विश्वास था कि उत्परिवर्तन प्रजनन द्वारा प्राप्त पादप प्रजनक (plant breeder) आवश्यकतानुसार अब तक अनुपलब्ध जीनों/विकल्पियों का प्रेरण (induction) कर सकेंगे। परन्तु जैसे-जैसे जानकारी एकत्रित होती गयी, यह आशा धूमिल पड़ती गयी।

(1) प्रेरण (induction) से प्राप्त उत्परिवर्ती (mutant) विकल्पी स्वतः उत्परिवर्तन (spontaneous mutation) से प्राप्त विकल्पियों के समान ही होते हैं और शायद ही कोई प्रेरित उत्परिवर्ती जीन ऐसा हो जाता स्वतः न उत्पन्न हो चुका हो।

(2) प्रेरित उत्परिवर्ती विकल्पियों (induced mutant alleles) में से अधिकांश विकल्पी (alleles) हानिकारक होते हैं। लाभदायक उत्परिवर्तनों की आवृत्ति लगभग 800 उत्परिवर्तनों में से केवल एक होती है। यह निष्कर्ष लगभग सर्वमान्य है कि उत्परिवर्तजन प्रजनन (mutation breeding) की फसल सुधार में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका अवश्य है, परन्तु यह कोई जादू नहीं है कि आपने जब चाहा और जो चाहा वही उत्परिवर्ती जीन (mutant gene) प्रेरित (induce) कर लिया।

उत्परिवर्तन प्रजनन की प्रक्रिया (Procedure for Mutation Breeding)

उत्परिवर्तन प्रजनन के निम्नलिखित दो मुख्य चरण होते हैं—

(1) उत्परिवर्तजनन (mutagenesis), इसका अर्थ फसलों को किसी उत्परिवर्तजन (mutagen) से उपचारित करके उत्परिवर्तन का प्रेरण तथा (2) उत्परिवर्ती जीन का वरण।

प्रथम चरण अपेक्षाकृत आसान होता है, परन्तु द्वितीय चरण उतना ही मुश्किल होता है, जितना कि यह आसान लगता है। सभी उत्परिवर्तजन (mutagens) सामान्यतया बहुत से अवांछनीय उत्परिवर्ती जीनों का प्रेरण करते हैं। इसके परिणामस्वरूप इन सारे उत्परिवर्ती जीनों (mutant genes) में से वांछित उत्परिवर्ती जीनों का वरण बहुत ही मुश्किल काम होता है। उत्परिवर्तन प्रजनन कार्यक्रम के निम्नलिखित भाग होते हैं—

1. कार्यक्रम के उद्देश्यों का निर्धारण (Defining the Objectives of Programme)—उत्परिवर्तन प्रजनन (mutation breeding) कार्यक्रम शुरू करने से

पहले यह आवश्यक होता है कि इसके उद्देश्यों को स्पष्ट रूप से निर्धारित कर लिया जाये। इसके दो प्रमुख कारण होते हैं—

(i) वांछित उत्परिवर्ती जीनों की आवृत्ति बहुत कम होने से उनको अवांछनीय उत्परिवर्तनों से विलग करना बहुत ही कठिन होता है।

(ii) उत्परिवर्तन प्रजनन की प्रक्रिया मूल रूप से इस बात पर निर्भर होगी कि जिस लक्षण में सुधार करना है वह अल्पजीवी (oligogenic) है अथवा बहुजीनी (polygenic)।

2. उत्परिवर्तजनन के लिए फसल की किस्म का चुनाव (Selection of the Crop Variety for Mutagenesis)—साधारणतया उत्परिवर्तन प्रजनन (mutation breeding) के लिए सम्बन्धित फसल की सर्वोत्कृष्ट किस्म को उपचारित करना चाहिए। बहुजीनी लक्षणों (polygenic traits) में सुधार के लिए यह अपरिहार्य शर्त है। किसी अपेक्षाकृत निकृष्ट किस्म में उपयोगी उत्परिवर्तन उत्पन्न करने पर यह अनिवार्य हो जायेगा कि उस उत्परिवर्ती जीन को किसी उत्कृष्ट किस्म में स्थानान्तरित (transfer) किया जाये। इसके लिए संकरण (hybridization) करना होगा, जिससे समय, श्रम व साधनों की बर्बादी होगी। परन्तु कुछ विशेष परिस्थितियों में सर्वोत्कृष्ट किस्म के अलावा अन्य किस्मों को भी उपचारित करना अधिक उपयोगी हो सकता है।

3. पौधे का उपचारित किया जाने वाला भाग (Deciding on the Plant Part to be Treated)—सामान्यतया उत्परिवर्तजनों (mutagens) से बीजों को उपचारित (treat) किया जाता है, किन्तु अलैंगिक प्रवर्धित फसलों (asexually-propagated crops) में वानस्पतिक प्रवर्ध्यों (vegetative propagules) को उपचारित किया जाता है। पराबैंगनी (UV) किरणों से केवल परागकणों (pollen grains) को उपचारित किया जा सकता है। परन्तु परागकणों को सामान्यतया उपचारित नहीं किया जाता है, क्योंकि उनका जीवनकाल बहुत कम होता है। गामा उपवन (gamma-garden) की सुविधा उपलब्ध होने पर सम्पूर्ण पौधों को भी उपचारित किया जा सकता है। किन्तु भारतवर्ष में सम्प्रति सम्भवतः कोई गामा उपवन काम नहीं कर रहा है।

4. उत्परिवर्तजन की मात्रा (Dose of Mutagen)—साधारणतया उत्परिवर्तजनों (mutagens) द्वारा उपचारण (treatment) से अंकुरण (germination), वृद्धि दर (growth rate), ओज (vigour) एवं नर तथा मादा उर्वरता (fertility) में काफी कमी आ जाती है तथा काफी पौधे मर जाते हैं। उत्परिवर्तजनों के ये प्रभाव उनकी मात्रा के साथ बढ़ते जाते हैं। किसी उत्परिवर्तजन की सबसे उपयुक्त मात्रा (optimum dose) वह होगी, जो कि कम से कम मृत्यु दर तथा अधिक से अधिक उत्परिवर्तन दर (mutation rate) पैदा करे।

5. उत्परिवर्तजन से उपचारण (Treatment with the Mutagen)—लैंगिक जननिक स्पीशीजों (sexually reproducting species) में उत्परिवर्तनजनों से उपचार के लिए सामान्यतया बीजों का उपयोग किया जाता है। विभिन्न विकिरणों (radiations) से किरणन (irradiation) के लिए शुष्क बीजों (dry seeds) का उपयोग किया जाता

है। साधारणतया उन्हें किरणन (irradiation) के तुरन्त बाद खेत में बो दिया जाता है। रासायनिक उत्परिवर्तनों (chemical mutagens) से उपचार के पहले बीजों को सामान्यतया 6-10 घण्टे तक पानी में भिगोया जाता है (पूर्वसिक्तन, Presoaking), जिससे उनमें जैव रासायनिक क्रियाएँ (biochemical reactions) शुरू हो जायें। उपचार के बाद बीजों को नल से बहते पानी में 4-6 घण्टे तक धोया जाता है, जिससे उनमें उपस्थित उत्परिवर्तजन पानी में बह जाये। तत्पश्चात् बीजों को खेत में बो दिया जाता है। उपचारित (treated) वानस्पतिक प्रवर्ध्यों (vegetative propagules) को भी बीजों की भाँति सीधे खेत में बो दिया जाता है, जबकि उपचारित परागकणों (treated pollen grains) से परागण (pollination) करते हैं। उपचारित बीजों तथा प्रवर्ध्यों से उत्पन्न पौधों को M_1 (उत्परिवर्तजन की प्रथम पीढ़ी) कहते हैं, जबकि उपचारित परागकणों द्वारा परागण से उत्पन्न बीज M_1 पीढ़ी के होंगे। M_1 पीढ़ी के स्वनिषेचन (selfing) से प्राप्त पीढ़ी M_2 तथा M_2 के स्वनिषेचन से प्राप्त पीढ़ी M_3 इत्यादि होगी।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न
(OBJECTIVE TYPE QUESTIONS)

1. अलैंगिक जनन होता है—
   उत्तर—गन्ने में।
2. लैंगिक जनन होता है—
   उत्तर—जौ में।
3. नवभ्रूण का विकास बिना निषेचन के होता है तो उसके कहते हैं—
   उत्तर—असेचन जनन।
4. आदर्श एवं पूर्ण पुष्प होते हैं—
   उत्तर—कपास में।
5. गुणसूत्रों की 3n संख्या होती है—
   उत्तर—भ्रूणपोष में।
6. गुणसूत्रों की संख्या घटक आधी रह जाती है—
   उत्तर—अर्द्धसूत्री विभाजन I में।
7. क्लोन द्वारा वरण प्रयोग किया जा सकता है—
   उत्तर—आलू।
8. शुद्ध वंशक्रम सिद्धान्त का प्रतिपादन किया था—
   उत्तर—डब्ल्यू. एल. जोहनसन ने।
9. गुणसूत्र में कौन-सा आनुवंशिक पदार्थ है ?
   उत्तर—डी. एन. ए.।

10. कौन–सा कोशिका अंग आत्महत्या की थैली का कार्य करता है ?
उत्तर—लाइसोसोम्स।

11. गुणसूत्र बने होते हैं—
उत्तर—न्यूक्लियो प्रोटीन्स से।

12. लिंग गुणसूत्र कहलाते हैं—
उत्तर—एलोसोम्स।

13. मियोसिस (Meiosis) पाया जाता है—
उत्तर—जनन कोशओं में।

14. निमीलत परागण (Eleistogamy) परपरागित फसलों का मुख्य लक्षण है।
उत्तर—सत्य।

15. एकलिंगी फसलों में स्व–परागण होता है।
उत्तर—असत्य।

16. द्वितीय एकाधिसूत्री (Secondary trisomies) में अतिरिक्त गुणसूत्र समगुणसूत्र (Isochromosome) होता है।
उत्तर—सत्य।

17. मक्का तथा बाजरा में पर–परागण होता है।
उत्तर—सत्य

18. गेहूँ तथा चावल स्व–परागणित फसलें हैं।
उत्तर—सत्य।

19. प्राथमिक एकाधिसूत्री में तीनों समजात गुणसूत्र सामान्य होते हैं।
उत्तर—सत्य।

20. ट्रिटिकेल प्रथम मानव संश्लेषित धान्य है।
उत्तर—सत्य।

21. क्लोनीय फसलों की कई किस्मों का विकास.....या.....द्वारा हुआ है।
उत्तर—आँख वरण, क्लोनीय वरण।

22. क्लोनीय फसलों की अनेक नई किस्मों का.....द्वारा विकास किया जाता है।
उत्तर—संकरण।

23. अलैंगिक जननिक (asexually reproducing) फसलों को.....भी कहते हैं।
उत्तर—क्लोनीय फसल।

24. विविधतापूर्ण समष्टि में.....उत्कृष्ट पौधों का वरण होता है।
उत्तर—50-500

25. चयन किये गये जनकों में एक से तीन पीढ़ियों तक.....किया जाता है।
उत्तर—स्वपरागण या अन्तःप्रजनन।

26. कई क्लोनीय फसलें.....होती हैं।
उत्तर—बहुवर्षीय।

27. गन्ने की सभी किस्में.....संकरण द्वारा विकसित की गयी हैं।
उत्तर—अन्तरा स्पीशीज़।

28. अगुणित पौधे अत्यधिक होते हैं—
(a) उर्वर (b) बंध्य
(c) वृद्धि वाले (d) इनमें से कोई नहीं।
उत्तर—(b)

29. बहुगुणिता उत्पन्न की जा सकती है—
(a) X-किरणन एवं गामा किरणन द्वारा (b) शीत उपचार द्वारा
(c) ताप उपचार द्वारा (d) इन सभी के द्वारा।
उत्तर—(d)

30. अगुणितों तथा एकगुणितों का पादप प्रजनन में उपयोग होता है—
(a) अधिकतर (b) कभी-कभी
(c) कभी नहीं (d) हमेशा।
उत्तर—(a)

31. स्वबहुगुणित पौधों के परागकण द्विगुणितों की अपेक्षा होते हैं—
(a) बड़े (b) छोटे
(c) काफी समानता लिए हुए (d) इनमें से कोई नहीं।
उत्तर—(a)

32. केला है—
(a) स्वचतुर्गुणित (b) स्वत्रिगुणित
(c) स्वबहुगुणित (d) इनमें से कोई नहीं।
उत्तर—(b)

33. संश्लेषित परबहुगुणितों में आवश्यकता होती है—
(a) प्रजनन की (b) वरण की
(c) इन दोनों की (d) इनमें से किसी की नहीं।
उत्तर—(c)

34. म्यूटेशन शब्द का सर्वप्रथम उपयोग डि व्रीज ने सन्.....में किया था।
उत्तर—1900

35. मोर्गन ने सन्.....में ड्रोसोफिला के श्वेताक्ष उत्परिवर्ती की खोज की।
उत्तर—1910

36. वर्ष 1927 में मुलर (Muller) ने ड्रोसोफिला में .....द्वारा उत्परिवर्तन प्रेरण किया।

उत्तर—एक्स किरणों

37. आर बैक एवं रॉब्सन ने 1946 में कई .....गुणों की खोज की।

उत्तर—रसायनों के उत्परिवर्तजनी

38. जब उत्परिवर्तन किसी भौतिक या रासायनिक कारक से उपचार करने पर उत्पन्न होते हैं तो उन्हें .....कहते हैं।

उत्तर—प्रेरित उत्परिवर्तन।

39. दैहिक क्रोमोसोम संख्या से एक या कुछ क्रोमोसोम अधिक होने को.....कहते हैं।

उत्तर—असुगुणिता

40. क्रोमोसोम संख्या में परिवर्तन की खोज सर्वप्रथम सन्.....में हुई थी।

उत्तर—1907

41. त्रिगुणित किस्म चाय.....की है।

उत्तर—TV 29

42. स्वत्रिगुणित तरबूज में बीज.....बनते हैं।

उत्तर—नहीं

43. षट्गुणित गेहूँ को.....भी कहा जाता है।

उत्तर—डबलरोटी गेहूँ

44. नये परबहुगुणितों में कई अवांछनीय लक्षण होते हैं, जिन्हें.....द्वारा सुधारा जा सकता है।

उत्तर—चयन।

45. अधिकतर परबहुगुणित स्पीशीजों में लैंगिक जनन होता है।

उत्तर—असत्य

46. सामान्यतः परबहुगुणित, द्विगुणितों की अपेक्षा अधिक ओज (Vigour) वाले होते हैं।

उत्तर—सत्य

47. द्विगुणितों की अपेक्षा स्वबहुगुणितों में जल का अंश अधिक होता है।

उत्तर—सत्य

48. स्वबहुगुणितों का अनुरक्षण (Maintenance) काफी सरल होता है।

उत्तर—असत्य

49. बहुगुणितों में प्रजनन तथा वरण काफी मुश्किल तथा धीमा काम होता है।

उत्तर—सत्य

50. स्वबहुगुणिता के प्रभाव का सही पूर्वानुमान किया जा सकता है।

उत्तर—असत्य

51. प्रथम कृत्रिम संकरण.....ने.....सन् में उत्पन्न किया था।
उत्तर—थामस फेयरचाइल्ड, 1717

52. फेयरचाइल्ड मूल.....के संकरण से उत्पन्न हुआ था।
उत्तर—स्वीट विलियम एवं कारेनसन

53. बौने गेहूँ का सर्वप्रथम.....ने विकास किया था।
उत्तर—नोरमन ई० बोरलोग

54. प्रथम कृषि विश्वविद्यालय सन्.....में पन्तनगर में स्थापित किया गया था।
उत्तर—1960

55. संकर धान के पिता.....हैं।
उत्तर—L. P. Yuan

56. आनुवंशिकी सुधार का प्रथम पग पुरःस्थापना है।
उत्तर—सत्य

57. प्रथम कपास का संकरण H_4 सी० टी० पटेल ने 1970 में विकसित किया था।
उत्तर—सत्य

58. जोसेफ कोल रियूटर ने प्रथम कृत्रिम संकरण का विकास किया था।
उत्तर—असत्य

59. सी० ए० बारवर गन्ना पर अनुसंधान कार्य के कारण प्रसिद्ध हुए थे।
उत्तर—सत्य

60. फेयरचाइल्ड किस नाम से प्रसिद्ध हैं ?
(a) खच्चर के नाम से (b) शुद्ध वंशक्रम चयन
(c) अरली रोज किस्म के नाम से (d) संतति परीक्षण पद्धति।
उत्तर—(a)

61. अरली रोज किस्म किसकी है ?
(a) मक्का की (b) आलू की
(c) गन्ना की (d) कपास की।
उत्तर—(b)

62. किसने ड्रोसोफिल तथा जौ में उत्परिवर्तन उत्पन्न करने के लिए क्ष-रश्मि (X-rays) का प्रयोग किया ?
(a) मुलर तथा स्टैडलर (b) विल्मोरिन
(c) हारलैन तथा पोप (d) रिचे।
उत्तर—(a)

63. गेहूँ की किस्म 'रैड मे' कहाँ से निकली है ?
(a) भारत (b) फ्रांस
(c) जापान (d) अमेरिका।
उत्तर—(d)

64. किसने कपास की संकर किस्म H_4 की खेती के लिए सर्वप्रथम विमोचन किया?
(a) सी० टी० पटेल (b) एच० जे० मुलर
(c) रोड्स (d) जोहनसन।
उत्तर—(a)

65. संकर बीज के उत्पादन में नर बन्ध्यता का प्रयोग जोन्स एवं डेविस ने 1944 में किस पर किया ?
(a) आलू (b) तम्बाकू
(c) प्याज (d) इनमें से कोई नहीं।
उत्तर—(c)

66. एकलिंगी फसलों में होता है—
(a) परपरागण (b) स्वपरागण
(c) परपरागण एवं स्वपरागण (d) इनमें से कोई नहीं।
उत्तर—(b)

67. वानस्पतिक जनन का उदाहरण है—
(a) अदरक, हल्दी (b) गेहूँ, जौ
(c) मक्का, बाजरा (d) इनमें से कोई नहीं।
उत्तर—(a)

68. बहुधा परपरागण वाली फसलें हैं—
(a) कपास, जूट, अरहर, राई (b) मक्का, राई, सूरजमुखी
(c) आलू, मिर्च, बैंगन (d) इनमें से कोई नहीं।
उत्तर—(a)

69. परपरागण वाली फसलें हैं—
(a) मक्का (b) गेहूँ
(c) कपास (d) मोंठ।
उत्तर—(a)

For Sure Success.....

AGRICULTURE
SHORT NOTE

हम जो बोते हैं वो काटते हैं,
हम स्वयं अपने भाग्य के विधाता हैं,
हवा बह रही है, वो जहाज जिनके पाल
खुले हैं, इससे टकराते हैं, और अपनी दिशा
में आगे बढ़ते हैं, पर जिनके पाल बंधे हैं
हवा को नहीं पकड़ पाते।
क्या यह हवा की गलती है...?
हम खुद अपना भाग्य बनाते हैं।
-स्वामी विवेकानन्द

अनुभवी लेखकों द्वारा सम्पादित

सभी विषयों पर उपलब्ध

निश्चित सफलता का उत्कृष्ट फॉर्मूला

SHIVA

₹ 30.00

SHIVA BOOK AGENCIES, AGRA
Mob. : 9897965949, 8171371881